नागानन्दम्

❀

साधुराम

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली

With the best compliments of
the Author and Publishers for
opinion and recommendation.

श्रीहर्षदेवप्रणीतं नागानन्दं नाटकम्

श्रीहर्षदेवप्रणीतं

नागानन्दम्

नाटकम्

निर्मला-महाविद्यालय-संस्कृत-विभागाध्यक्षेण
इन्द्रप्रस्थ-विश्वविद्यालयोपाध्यायेन
साधुरामेण
आलोचनात्मक-भूमिका-टिप्पणाभ्यामनुवादद्वयेन चालंकृत्य संपादितम्

१९५३
आत्माराम एण्ड संस
पुस्तक-प्रकाशक तथा विक्रेता
काश्मीरी गेट
दिल्ली
मूल्य पाँच रुपये

प्रकाशक
रामलाल पुरी
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट दिल्ली ६

विषय-सूची

आलोचनात्मक भूमिका ... *i–lviii*

नाटक (हिन्दी तथा अंग्रेजी अनुवाद सहित)

प्रथमो ऽङ्कः २–३३
द्वितीयो ऽङ्कः ३४–६९
तृतीयो ऽङ्कः ७०–९९
चतुर्थो ऽङ्कः १००–१३१
पञ्चमो ऽङ्कः १३२–१७९
टिप्पण १८१–२११

मुद्रक
अमरजीत सिंह नलवा
सागर प्रेस
काश्मीरी गेट, दिल्ली ६

भूमिका

सरस्वती और लक्ष्मी—

कवि का अपना ही संसार होता है, अपना ही लोक होता है। परन्तु इस नूतन सृष्टि के विधाता को प्रजापति—'कविरेव प्रजापतिः'—कहना भूल है। कवि कौन कभी प्रजापति हुआ, और कोई प्रजापति कभी कवि बन सका क्या? 'कविराज' तथा 'राजकवि' दोनों ही भ्रान्त सपनों के द्योतक हैं।

पौराणिक गाथाओं में सरस्वती और लक्ष्मी को परस्पर इतना दूर रखा गया है कि दोनों का आपस में मिल सकना असंभव सा प्रतीत होता है। दोनों देवियाँ सृष्टि-क्रम के परस्पर-विरोधी छोरों पर विद्यमान हैं, दोनों में आकाश-पाताल का अन्तर है। सरस्वती का स्थान स्वर्ग में है, तो लक्ष्मी का पाताल में। गाथा के प्रस्तुत अंश का लाक्षणिक अर्थ संभवतः मानव मन की द्विविध प्रगतिशील वृत्ति की ओर संकेत करता प्रतीत होता है। मनुष्य दो प्रकार की संपत्ति का संग्रह किया करता है—एक स्थायी संपत्ति और दूसरी अस्थायी संपत्ति। लक्ष्मी आर्थिक अथवा अस्थायी संपत्ति का वर दिया करती है, सरस्वती दैवी अथवा स्थायी संपत्ति का—'व्यये कृते वर्धत एव नित्यं, विद्याधनं सर्व-धन-प्रधानम्'। मनुष्य का आवास दोनों लोकों के मध्य में है। मध्यम लोक का वासी वह लक्ष्मी की पूजार्थ पाताल एवं वसुंधरा की ओर अधोमुख होता है, और सरस्वती के आराधनार्थ वह स्वर्ग की ओर उन्मुख होता है।

'राज'-कवियों की परम्परा—

कवियों की उपास्य देवी सरस्वती है, राजाओं की लक्ष्मी। प्रायः देखने में भी यही आता है कि कवि रंक होते हैं, और राजा लोग रस-बुद्धि से वञ्चित होते हैं। परन्तु किसी-किसी राजा में कवित्वमयी रसिकता भी देखी गई है। ब्रिटेन के एडवर्ड सप्तम के हृदय में कवियों तथा कलाकारों के प्रति इतना आदर-भाव था कि जब भी कभी उनके हाँ कोई विदेशी दूत अथवा अपने ही राज्य का कोई उच्च अधिकारी आता तब उस, अपने मान्य अतिथि, के स्वागत में वे सर्व-प्रथम यही दिखाते हुए कहते कि "इस कुरसी पर बैठकर मुझे ब्लेक ने कृतार्थ किया था और इसपर अमुक कवि ने।" कवीन्द्र रवीन्द्र ने भी अपनी एक सुन्दर रचना मध्य युग के गुण-ग्राही किंग आर्थर को अर्पित की थी। भारतीय परम्परा में विश्वामित्र, बुद्ध, शूद्रक (प्रथम विक्रम, संवत्कार विक्रमादित्य), समुद्रगुप्त,[1] विशाखदत्त, भोज, यशोवर्मा, आदि सफल लोक-

[1] अलाहाबाद प्रशस्ति में हरिषेण ने समुद्रगुप्त को 'कविजनोपजीवी' कहा

प्रिय राजा भी हुए हैं, तथा उच्च कोटि के कवि, नाटककार भी। इन्हीं राजकवियों की परम्परा में प्रस्तुत नाटक नागानन्द के रचयिता श्रीहर्षदेव[1] का अपना विशिष्ट स्थान है[2]।

इतिहास में श्रीहर्ष—

नागानन्द के नाटककार, 'नानादिग्देशागतराजसमूह' के 'पादपद्मोपजीवी' महाराज श्रीहर्ष कौन थे ? इतिहास में हम श्रीहर्ष नाम के कई व्यक्तियों का उल्लेख पाते हैं :—

१. एक तो दसवीं शताब्दी के वे श्रीहर्ष हैं जो हीर तथा मामल्ल देवी के पुत्र थे और नैषधीयचरित महाकाव्य के ख्यातनामा लेखक थे। बाईस सर्गों के इस प्रसिद्ध महाकाव्य के अतिरिक्त उन्होंने खण्डन-खण्ड-खाद्य, गौडोर्वीकुल-प्रशस्ति, छन्दः-प्रशस्ति, नवसाहसाङ्क-प्रशस्ति, शिव-शक्ति-सिद्धि, स्थैर्य-विचारण, तथा एक कोष 'हर्ष-वार्तिक' की रचना भी की थी। नैषध में एक स्थल (सर्ग २२, श्लोक १५५) पर उन्होंने अपने आश्रयदाता का उल्लेख करते हुए कहा है—'ताम्बूलद्वयमासनं च लभते

है। अर्थात् गुप्तकालीन कवि अपने आर्थिक-जीवन तथा काव्य-प्रेरणा—सभी दृष्टियों से समुद्रगुप्त की ओर उन्मुख थे। समुद्रगुप्त एक सिद्ध-हस्त कलाकार थे, युद्ध-वीर थे, दानवीर थे। 'कृष्ण-चरित' नाम का एक काव्य उन्हींका लिखा हुआ था, जिसके तीन उपलब्ध पत्रे प्रकाशित हो चुके हैं। उन पत्रों से कई ऐतिहासिक तथ्य विदित हुए है।

दो एक वर्तमान लेखक उनको कूट बताते हैं, पर उनके पास इसका प्रमाण कोई नहीं। हम उन पत्रों को उनकी फोटो सहित छपवाने का प्रबन्ध कर रहे हैं।

[1] बाण-भट्ट की श्रीहर्ष से बन नहीं सकी, परन्तु हर्षचरित में उनके विषय में महाकवि की निम्न तीन उक्तियाँ हैं—१. 'काव्यकथासु अपीतामृतमुद्वमन्तम्,' २. 'विमल-कपोल-प्रतिबिम्बितां चामर-ग्राहिणीं विग्रहिणीमिव मुखवासिनीं सरस्वतीमादधानम्', ३. 'अपि चास्य प्रज्ञायाः शास्त्राणि, कवित्वस्य वाचो न पर्याप्तो विषयः'।

[2] Kings as patrons of literature are not uncommon, but kings themselves as authors are more rare. The names of the Hebrew psalmist king David, the Roman dictator Julius Caesar, the philosophic emperor Marcus Aurelius, king Alfred the Great, James the Sixth of Scotland and First of England, and Fredrick the Great of Prussia rise at once to our memory as instances of royal authors, and the list might readily be extended...For the long line of poet-kings after Harsha the curious reader is referred to pp.xxxvii to xxxviii of the introduction to *Priyadarsika*, Vol.10 of Columbia University Indo-Iranian Series. Muse did not withdraw her grace even from such fanatics as Mahmud Ghaznavi, Tamerlane, Babar and Jahangir.

यः कान्यकुब्जेश्वरात्' । उल्लिखित कान्यकुब्जेश्वर को ऐतिहासिक प्रायः १२३२ वि० में कन्नौज के राजा जयचन्द्र से सम-स्थापित करते हैं ।

२. बारहवीं शताब्दी में एक और श्रीहर्ष हुए हैं, जो ११७०-११८२ वि० में काश्मीर के राजा थे । अनुसन्धान के प्रारम्भिक काल में विलसन का विचार था कि श्रीहर्ष की नाटकत्रयी में 'रत्नावली' के रचयिता यही हर्ष हैं।

३. तीसरे श्रीहर्ष, भरत के 'नाट्य-शास्त्र' पर वार्तिक के रचयिता हुए हैं ।

४. इन तीनों के अतिरिक्त अब एक ही हर्ष शेष रह जाते हैं—वे हैं इतिहास के प्रसिद्ध महाराज श्रीहर्षवर्धन जिन्होंने अपने थानेसर के छोटे से राज्य की वृद्धि करते हुए "कन्नौज का हर्ष वर्धन", "प्रतापशील शीलादित्य" आदि उपाधियाँ प्राप्त की थीं । हिन्दू साम्राज्य की शृङ्खला में इतिहास, संस्कृत साहित्य, भारतीय संस्कृति-सभ्यता, आदि सभी दृष्टियों से श्रीहर्ष अन्तिम कड़ी हैं । इनके कुछ काल पश्चात् हिन्दू साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया और प्रायः तेरह शताब्दियों तक पुनः स्वतन्त्रता प्राप्त न कर सका । कादम्बरी तथा हर्षचरित के रचयिता महाकवि बाण इसी हर्ष के राज-कवि थे ।

संस्कृत साहित्य की अनुगाथाओं में नागानंद के नाटककार कवि के नाम के साथ दो नाटिकाएँ और भी जुड़ी हुई हैं—रत्नावली तथा प्रियदर्शिका । प्रस्तुत चारों हर्षों में से इन तीन नाटकों का रचयिता कौन है (क्योंकि आन्तरिक तथा बाह्य साक्षियों के आधार पर यह तो निश्चित ही है कि इन तीनों नाटकों का रचयिता कोई एक ही व्यक्ति है—देखो नीचे 'श्रीहर्षनाटकचक्र का रचयिता') ? हम तीनों नाटककारों की संभावना उपस्थित करते हुए ऊपर कह आए हैं कि प्रारम्भ में विलसन को यह भ्रम हुआ था कि रत्नावली का रचयिता काश्मीर का (११७०—११८२ वि० वाला) राजा श्रीहर्ष था । किन्तु दशरूपक पर धनिक की टीका उपलब्ध होने के पश्चात् यह कल्पना सर्वथा निर्मूल सिद्ध हो गई है। नैषधीयचरित का श्रीहर्ष क्या नाटककार भी था, साहित्यिक परम्परा में तो ऐसी कोई अनुश्रुति कभी नहीं रही । इसके अतिरिक्त, नैषधकार हर्ष ने जहाँ स्थान-स्थान पर अपनी अन्य (उपरिकथित) रचनाओं का उल्लेख किया है, वहाँ प्रस्तुत नाटक-त्रयी के रचयिता होने की बात तो दूर, अपने नाटककार तक होने का भी कहीं कोई संकेत नहीं किया । किंवदन्ती यह है कि इन नाटक-नाटिकाओं का लेखक कोई राजा था, इसके विपरीत श्रीहर्ष ने स्वयं संकेत किया है कि वे कान्यकुब्जेश्वर के आश्रित एक कविमात्र थे (नैषध २२. १५५) । इस प्रकार थानेसर तथा कन्नौज के महाराज श्रीहर्षवर्धन (६६३-७०४ वि०) के ही नागानंद आदि तीनों नाटकों के रचयिता होने की संभावना रह जाती है । किन्तु प्रकृत संभावना को, विरोधाभाव में निष्कर्ष-रूपेण, स्वीकार करने के पूर्व उचित यह होगा कि हम पहले श्रीहर्ष-नाटकचक्र की अन्तः-साक्षी द्वारा यह स्थापना सिद्ध कर लें कि ये भी भास-

नाटकचक्र की भाँति एक ही नाटककार की रचनाएँ हैं।

'श्रीहर्ष-नाटकचक्र' का रचयिता (क. अन्तः-साक्षी)—

श्रीहर्ष-नाटकचक्र में तीन नाटकों की परिगणना होती है—प्रियदर्शिका, रत्नावली तथा नागानन्द। ये तीनों नाटक किसी भी, श्रीहर्ष अथवा अन्य अज्ञात (वित्तदान-परितोषित) कवि की कृतियाँ क्यों न हों, कला दृष्टि तथा अन्तः-साक्षियों के आधार पर इनके विषय में इतना तो असंदिग्ध ही निर्णीत समझना चाहिये कि इन तीनों का रचयिता कोई एक ही कवि है।

उदाहरणतया—

१. तीनों नाटकों के आमुख में नाटककार का परिचय प्रायः एकसे ही शब्दों में हुआ है—

(i) प्रियदर्शिका—अद्याहं वसन्तोत्सवे सबहुमानमाहूय नाना दिग्देशागतेन राज्ञः श्रीहर्षदेवस्य पादपद्मोपजीविना राजसमूहेनोक्तः यथा—"अस्मत्स्वामिना श्रीहर्षदेवेनापूर्ववस्तुरचनालंकृता प्रियदर्शिका नाम नाटिका कृता, इति अस्माभिः श्रोत्र-परम्परया श्रुतम्, न तु सा प्रयोगतो दृष्टा। तत्तस्यैव राज्ञः सर्वजनहृदयाह्लादिनो बहुमानादस्मासु चानुग्रहबुद्ध्या यथावत् प्रयोगेण त्वया नाटयितव्या"। ....श्रीहर्षो निपुणः कविः इत्यादि।

(ii) रत्नावली—अद्याहं...रत्नावली नाम नाटिका...सकलजनहृदयाह्लादिनो...श्रीहर्षो निपुणः कविः इत्यादि।

(iii) नागानन्दम्—अद्याहमिन्द्रोत्सवे अपूर्ववस्तुरचनालंकृतं विद्याधर-जातकप्रतिबद्धं नागानन्दं नाम नाटकं कृतं ... दृष्ठम् ... नाटयितव्यम्। .....श्री हर्षो निपुणः कविः इत्यादि।

२. इसी प्रकार भरतवाक्यों में भी वही भाव-साम्य है—

(i) और (ii) प्रियदर्शिका और रत्नावली—

उर्वीमुद्दामसस्यां जनयतु विसृजन् वासवो वृष्टिमिष्टाम्
इष्टैस्त्रैविष्टपानां विदधतु विधिवत् प्रीणनं विप्रमुख्याः।
आकल्पान्तं च भूयात् समुपचितसुखः संगमः सज्जनानां
निःशेषं यान्तु शान्ति पिशुन-जन-गिरो दुर्जया वज्रलेपाः॥

(iii) नागानन्दम्—

वृष्टि हृष्टशिखण्डिताण्डवभृतः ···इत्यादि।

३. रत्नावली के द्वितीयाङ्क में 'प्रवेशक' के द्वारा नागरिका की वही अवस्था अभिव्यक्त की गई है जो नागानन्द के द्वितीयाङ्क में मलयवती की आ बनी है। विप्रलम्भ में प्रेयसी पर चाँदनी, मलय-समीर सब उलटे ही पड़ते हैं। 'चतुरिका' के

समानान्तर यहाँ नायिका की सखी 'सुसंगता' है, जिसे अपनी स्वामिनी के साथ—वह चेटी नहीं है—हास-परिहास, आश्वासन, रोदन, विनोद के सभी सखी-अधिकार स्वतः प्राप्त हैं।

४. 'अन्तः-पुराणां विहित-व्यवस्थः' तथा 'व्यक्तिर्व्यञ्जन धातुना' श्लोकों का उपयोग प्रियदर्शिका (३. ३ तथा ३. १०) और नागानन्द (४. १ तथा १. १५) में यथावसर हुआ है।

५. शब्दों की समता, वाक्यों तथा भावों की समता, शैली की वही सरलता, दृश्यों की समानता, विरहोत्कण्ठिता प्रेयसियों का जीवन से खिन्न होकर आत्महत्या-प्रयास तथा प्रकार (अशोकपादपे लतामाक्षिप्य), चरित्रों तक का सादृश्य, इत्यादि अकाट्य प्रमाणों के होते हुए तीनों नाटकों के एक ही कवि की कृतियाँ होने में कोई सन्देह रह ही नहीं जाता।

६. पात्र प्रेमी हो, प्रेयसी हो, एक ही नाटककार की प्रसूति होने के कारण उनकी मानसिक अवस्था प्रायः एक-सी प्रस्तुत हुई है। उदाहरणार्थ,—

(i) रत्नावली—

प्रणयविशदां दृष्टिं वक्त्रे ददाति न शङ्किता
घटयति घनं कण्ठाश्लेषे रसान्न पयोधरौ।
वदति बहुशो गच्छामीति प्रयत्नधृताऽप्यहो
रमयतितरां संकेतस्था तथापि हि कामिनी ॥३.९॥

(ii) तुलना करो नागानन्द—

दृष्टा दृष्टिमधो ददाति ··· इत्यादि (३.४)

७. नागानन्द में आत्मघातोद्यत मलयवती को जीमूतवाहन रँगे हाथों पकड़ता है तो रत्नावली में उदयन सागरिका को। और स्वयं उदयन को सागरिका के प्रेम-बन्धन में 'रँगा' अपराधी पाती है वासवदत्ता। राजा कहता है—देवि, एवं प्रत्यक्ष दृष्टव्यलीकः किं ब्रवीमि ? इसी प्रकार जीमूतवाहन मलयवती से कहता है—'नाहं मुञ्चामि—गृहीतः सापराधो ऽयं स कथं मुच्यते करः' (२. १२)।

'कण्ठपाशमाकृष्य' राजा दोनों स्थलों में प्रायः वही शब्द अपनी प्रेयसी से कहता है—

(i) रत्नावली—

अलम् अलम् अतिमात्रं साहसेनामुना ते
त्वरितमयि विमुञ्च त्वं लतापाशमेतम्।
चलितमपि निरोद्धुं जीवितं जीवितेशे
क्षणमिह मम कण्ठे बाहुपाशं निधेहि ॥३. १७॥

(ii) नागानन्द—न खलु न खलु मुग्धे साहसं कार्यमेवं इत्यादि (२. ११) मलयवती हाथ छुड़ाना चाहती है, उसे रोकने वाला यह आगन्तुक कौन ?—कस्त्वं निवारयितुम् ? मरणे ऽपि किं त्वमेवाभ्यर्थनीयः ? इन्हीं परिस्थितियों में सागरिका के मुँह से निकलता है—हा धिक्, कथमकृतपुण्यया मया मर्तुमपि आत्मन इच्छया न पारितम् ?

कवियों के हृदय में प्रायः एक विचार या कल्पना कभी-कभी इतना घर कर जाती है कि वे उसे अपनी रचनाओं में जहाँ-तहाँ दुहराते रहते हैं। वे उससे इतने मन्त्र-मुग्ध होते हैं कि यही पुनरावृत्तियाँ उनकी रचनाओं की सत्यता में (अप्रत्याख्येय) प्रमाण हो जाती है। ऑस्कर वाईल्ड के दिनों में एक प्रथा सी बन गई थी कि अमेरिका के संभ्रान्त परिवारों की कन्याएँ इंग्लैंड में विवाह कराके बसने लगीं। ऑस्कर वाईल्ड ने अपने कई उपन्यासों में स्थान-स्थान पर पात्रों के मुँह से पुछवाया है "हम तो सुनते थे अमेरिका स्वर्ग है। ये देव-कन्याएँ स्वर्ग छोड़कर पृथ्वी पर क्यों आ बसी हैं ?" और पास बैठा एक और पात्र सदा इसका उत्तर देते हुए कहता है—"इसीलिये तो, क्योंकि वह स्वर्ग है ! स्वर्ग से निकलने की परम्परा हव्वा (Eve) के समय से चली आती है ना। वह वहाँ कितने दिन रही थी ?" इसी प्रकार नागानन्द, रत्नावली, प्रियदर्शिका में प्रस्तुत विविध शब्द तथा भाव-साम्य नाटक-त्रयी के एक ही नाटककार द्वारा रचित होने की अन्तः-साक्षी हैं।[1]

(ख. बाह्यसाक्षी)—

परन्तु इन सब अन्तः-साक्षियों के होते हुए भी श्रीहर्ष-नाटकचक्र के विषय में संस्कृत साहित्य की अनुश्रुतियाँ कुछ भ्रान्त धारणाएँ उपस्थित कर गई हैं। यथा—काव्यप्रकाश के प्रथम उच्छ्वास में काव्य-प्रयोजन का विषय विशद करते हुए मम्मट ने लिखा है 'काव्यं यशसे, अर्थकृते। कालिदासादिनामिव यशः, श्रीहर्षादेर् धविकादिनामिव धनम्'। कुछ आलोचकों का विचार है कि धावक शारदा लिपि में लिखे बाण शब्द का ही अपपाठ है और एक पाण्डु लिपि में पाठ उपलब्ध भी है 'श्रीहर्षादेर्बाणादिनामिव धनम्'। प्रथम पाठ की आलोचना एवं व्याख्या करते हुए टीकाकार प्रद्योतकर लिखते हैं—धावकः कविः। स हि श्रीहर्षनाम्ना रत्नावलीं कृत्वा बहुधनं लब्धवान्। एक और टीकाकार परमानन्द कहते हैं—'धावकनामा कविः स्वकृतिं रत्नावलीं नाम नाटिकां विक्रीय श्रीहर्षनाम्नो राज्ञः सकाशाद् बहुधनमवाप, इति पुरावृत्तम्।' अर्थात् कम से कम रत्नावली के विषय में तो यह चिरकाल तक किंवदन्ती बनी ही रही कि धन के

---

[1] अन्य अन्तरङ्ग प्रमाण, देखो नीचे 'श्रीहर्ष—आलोचना, शब्दगुण' में प्रस्तुत—कला : नाटक का अन्तरंग—

निमित्त धावक अथवा बाण ने अपना ग्रन्थ निज आश्रयदाता अथवा पुरस्कार-प्रदाता को बेच दिया था ! किन्तु आलोचना-ग्रन्थों में, मम्मटाद् अन्यत्र, कहीं भी यह उल्लेख हम बाण अथवा धावक के विषय में नहीं पाते, न आलोचनाकार आचार्यों ने कभी बाण को एक नाटककार के रूप में उपस्थित ही किया है। डाक्टर फिट्ज़ेडवर्ड हाल ने इस सम्बन्ध में अपने वासवदत्ता संस्करण में जिन टीकाकारों को प्रामाणिक माना है—जयराम का काव्य-प्रकाश-तिलक, विद्यानाथ की प्रभा, नागेश का उद्योग--वे सभी अठारहवीं शताब्दी के आस-पास हुए हैं। इसके अतिरिक्त कीथ आदि विद्वानों को स्वयं काव्यप्रकाश में यह स्थल ही स्पष्ट प्रक्षिप्त दिखाई दिया है। क्या महाकवि बाण अपने नाटक बेच सकते थे ? और कादम्बरी तथा हर्षचरित, कथा तथा आख्यायिका—जिनसे उन्हें प्रभूत यश मिला—बेचने के लिये उनपर कोई प्रतिबन्ध था ? प्रश्न केवल रत्नावली का नहीं है (क्योंकि ये तीनों नाटक एक ही लेखनी के लिखे हुए हैं) परन्तु प्रियदर्शिका तथा नागानन्द के विषय में ऐसी कोई किंवदन्ती उपलब्ध नहीं। सो क्यों ? जैसे हम ऊपर कह आए हैं—धावक का तो नाम भी काव्य-प्रकाश के उद्धृत प्रक्षेप के अतिरिक्त कहीं और मिलता ही नहीं। रही बाण की इन नाटकों के, विशेषकर रत्नावली के, रचयिता होने की संभावना। सो, जिन्हें भाषा, काव्यशास्त्र, गाथा-शास्त्र, विचार तथा प्रस्ताव-शैली, कवि की प्रतिभा-किसी भी अंश में 'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम् के पूर्ण कवित्व से विशिष्ट 'पञ्चबाणस्तु बाण:' की बाण बुद्धि का तनिक भी परिचय प्राप्त है, वे ऐसी निरर्थक कल्पनाओं से विचलित नहीं हो सकते। यदि राजा-लोग अपवादरूप से भी कवि नहीं हो सकते, तो शूद्रक आदि की रचनाएँ किसने लिखी थीं ? किन्तु यहाँ तो ब्रिटेन में एलिज़ाबिथ के युग की भाँति नाटककार अथवा अभिनेता होना कोई गर्हास्पद वस्तु थी नहीं कि बेकन जैसा न्यायाधीश अपने अपयश के भय से नाटक लिख-लिखकर उन्हें शेक्सपियर जैसे एक अज्ञात अभिनेता के नाम से प्रकाशित करता जाए। पश्चिम में तो सभ्य-समाज नाटककारों को कुछ हीन समझे, किन्तु पूर्व में स्वयं राजा नाटक पर अपना नाम पैसे के बल पर लिखवाकर एवमुपलब्ध गौरव प्राप्त करे—मानव-प्रकृति एका-एक इतनी भिन्न नहीं हो सकती।

रत्नावली के जिस श्लोक के आधार पर (द्वीपादन्यस्मादपि···१. ६) डाक्टर हाल को यह भ्रम हुआ था कि वह हर्षचरित के महाकवि बाण की रचना है, हम अभी तक हर्षचरित के किसी मुद्रित संस्करण में नहीं देख पाए। १७४२ वि० में उद्धृत टीकाकारों के कुछ पूर्व मधुसूदन ने लिखा था—मालवराजस्य उज्जयिनी-राजधानीकस्य कविजनमूर्धन्यस्य रत्नवल्याख्यनाटककर्तुर् महाराज श्रीहर्षवर्धनस्य।[1]

[1]महाराज हर्षवर्धन मालव और उज्जयिनी का राजा कब हुआ ? देखो नीचे, 'श्रीहर्ष : आलोचना'।

प्रतिज्ञा-यौगन्धरायण-स्वप्नवासवदत्ता तथा रत्नावली-प्रियदर्शिका की कथावस्तु एक है—उदयन के अन्तःपुर की प्रेम-कहानी। इस ऐक्य के साथ मम्मट के काव्य-प्रकाश में (उद्धृत) प्रक्षेप से संगति मिलाते हुए दक्षिण के विद्वान् नारायण शास्त्री ने एक नूतन स्थापना उपस्थित की थी कि भास का ही अपर नाम धावक है। अर्थात् 'श्रीहर्ष-नाटकचक्र' का रचयिता भी 'भास-नाटकचक्र' का नाटककार ही है। दोनों नाटक-चक्रों के अन्तर्वैषम्य को उपेक्षित कर भी दिया जाए, किन्तु संकृत-वाङ्मय की संपूर्ण कालानुक्रमणी में जो इस प्रकार असंगति आ जाएगी—उसका समाधान कैसे बन पड़ेगा ? इसके अतिरिक्त राजशेखर ने 'कवि-विमर्श' में कहा भी तो है—

धावको ऽपि हि यद् भासः कवीनामग्रिमो ऽभवत्।

*** *** ***

नागानन्दं समालोक्य यस्य श्रीहर्षविक्रमः।
अमन्दानन्दभरितः स्वसभ्यम् अकरोत् कविम्॥

झट, नारायण शास्त्री ने श्रीहर्ष को विक्रमादित्य मानते हुए—संवत्कार विक्रम से पाँच-छः शताब्दियाँ पूर्व (बोधि-सत्त्व-बलिदान की प्रेरणा और कब उपलभ्य हो सकती थी ?) धावक (=भास) तथा श्रीहर्ष को ४६५-४०० वि० पू० में स्थापित कर दिया[1]। यदि सचमुच धावक और भास एक ही व्यक्ति के दो नाम हैं तो काल-क्रम में युक्ति की शिथिलता के अतिरिक्त, हमें तो यह भी समझ नहीं आ सकता कि एक ही कवि अथवा नाटककार उदयन कथावस्तु को दो भिन्न रूपों में प्रस्तुत क्यों करे ? उदयननाटकों का अभिनय, नाटकीकरण आदौ दक्षिण में हुआ था; सो, रत्नावली तथा प्रियदर्शिका में भास-नाटकचक्र के स्वाध्याय के अनन्तर, श्रीहर्ष ने भी सूत्रधार से आमुख का संवरण कराते हुए कहलवाया है—

रत्नावली—आर्ये, एष मम कनीयान् भ्राता गृहीत-यौगन्धरायण-भूमिकः प्राप्त एव। तदेहि—आवामपि नेपथ्यग्रहणाय सज्जीभवावः।

प्रियदर्शिका—कथं प्रस्तावनाभ्युद्यते मयि विदितास्मदभिप्रायो मम कनीयान् भ्राताङ्गाधिपतेर्दृढवर्मणः कञ्चुकिनो भूमिकां कृत्वा इत एवाभिवर्तते। तद्यावदहमप्यनन्तरभूमिकां संपादयामि।

श्रीहर्ष ने भरत-मण्डली-द्वारा स्वयं भूमिका अथवा नेपथ्य ग्रहण की प्रस्तावना-शैली का उपादान करते हुए भास के प्रति निज गुण-ग्राहिता एवं विनय-बुद्धि प्रदर्शित की है, बस।

---

[1] 'कवि विमर्श' की उपलब्धि के अभाव में नारायण शास्त्री की कल्पना हेय है।

सारांश यह कि प्रियदर्शिका, रत्नावली तथा नागानन्द का रचयिता एक ही है। परन्तु वह न धावक है न बाण, और न वह भास ही है। अपि तु वह है—थानेसर का इतिहास-प्रसिद्ध महाराज श्रीहर्षवर्धन।

तीन नाटक—

अब हम तीनों नाटकों की कथा-वस्तु पर आते हैं। इन नाटकों को हम विषय की दृष्टि से दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं—

१. रोमाञ्च अथवा उदयन-नाटक—प्रियदर्शिका तथा रत्नावली।

२. उदात्त अथवा आत्म-बलिदान-नाटक—नागानन्द।

प्रियदर्शिका तथा रत्नावली—दोनों नाटिकाओं का नायक वत्सराज उदयन है। वत्स की प्रेमकथाएँ कथासरित्सागर आदि की पुरातन परम्पराओं में अनुस्यूत हैं। इन्हीं से प्रेरणा पाकर भास ने अपने कल्पना-नाटकों, प्रतिज्ञायौगन्धरायण तथा स्वप्न-वासवदत्ता की सृष्टि की थी। प्रियदर्शिका में अङ्गराज दृढ़वर्मा की पराजय के अनन्तर, उसकी पुत्री प्रियदर्शिका, दुर्घटनावश, प्राण बचाकर वत्स के अन्तःपुर में पहुँच जाती है। वहाँ उसे रानी की दासी बनकर रहना पड़ता है। वह अपना नाम बदल लेती है—आरण्यका, क्योंकि जो दुर्घटना उसे वहाँ ले गई है वह जंगल में घटी थी। अन्तः-पुर में वत्सराज तथा वासवदत्ता के परिणय को चिरनूतन रखने की भावना से उनकी प्रेम-कथा को नाटकार्पित करने की आयोजना होती है। मञ्च पर वासवदत्ता की भूमिका में आरण्यका उतरती है तथा वत्सराज की भूमिका में स्वयं उदयन। अभिनय के बहाने दोनों में प्रेम हो जाता है। वासवदत्ता इस दृश्य से रुष्ट होकर आरण्यका को बन्दीगृह में डाल देती है। किन्तु अन्त में घटना-चक्र के विकास के साथ आरण्यका के राजकुमारी होने का पता लग जाता है और, मालविकाग्निमित्र की भाँति, स्वयं रानी की अनुमति से प्रियदर्शिका तथा वत्सराज का सुखान्त पाणिग्रहण संपन्न होता है।

रत्नावली मे भी उदयन की एक और प्रणय-कथा है। कथावस्तु का मूल कथासरित्सागर की कहानी है जिसमें यौगन्धरायण वत्सराज को राज्यरक्षार्थ सचेत रखने के लिये, तथा मन्त्री के भाव से स्वयं राज्य की रक्षा करने के लिये वत्स तथा मगध में परस्पर राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित करने में उद्योगी है। किन्तु कोई भी नूतन राजनीतिक सम्बन्ध काल की परम्परा के अनुसार तब तक असम्भव है, जब तक उसकी आधार-शिला स्वयं राजा का नूतन परिणय-बन्धन न हो। भास के प्रतिज्ञायौगन्धरायण तथा वासवदत्ता का उद्देश्य वासवदत्ता के 'आत्म-बलिदान' द्वारा तथा पद्मावती-परिणय द्वार वत्स राज्य की रक्षा है। मूलरूप में यही कथा रत्नावली का विषय है, किन्तु यहाँ पद्मावती का स्थान सिंहल की राजकुमारी रत्नावली ने ले लिया है।

रत्नावली को वत्सराज के अन्तःपुर में लाने के लिये यौगन्धरायण ने समाचार फैला दिया है कि लावाणक की आग में वासवदत्ता जलकर मर चुकी है। और जिन दो राज-कर्मचारियों को यौगन्धरायण की योजना का पता था उन्हें भी मुख्य-मन्त्री के आदेश से युद्ध-भूमि को भिजवा दिया गया है। उधर लंका द्वीप से रत्नावली को लेकर राज-पोत चलता है, वह मार्ग में ही डूब जाता है। वत्स का एक व्यापारी राजकुमारी के गले में पड़ी माला से 'रत्नावली' को पहचान जाता है, और लाकर उसे सकुशल सागरिका के नाम-रूप में यौगन्धरायण को समर्पित कर देता है। रत्नावली को वासवदत्ता की दासी बनकर रहना पड़ता है। वसन्तोत्सव में सुसंगता के साथ इधर-उधर घूमती हुई वह प्रथम दृष्टि पड़ते ही उदयन पर आसक्त हो जाती है। सुसंगता तथा विदूषक की सहायता से उदयन तथा सागरिका के संकेत-मिलन की आयोजना बनती है। किन्तु वासवदत्ता को भेद का पता चल जाता है और विदूषक तथा सागरिका को इस अपराध के दण्ड-स्वरूप कारागृह की हवा खानी पड़ती है। किन्तु युद्ध के उपरान्त विजयी वत्स-सेना के कर्मचारी आकर सागरिका के वास्तविक रूप का परिचय देते हैं। अब वासवदत्ता प्रसन्न हो जाती है—अरे, सागरिका तो मेरी ही चचेरी बहिन थी! नाटक की परम्पराओं के अनुसार सब कुछ सुखान्त समाप्त हो जाता है।

नागानन्द का कथानक भी मूलतः कथासरित्सागर की एक कथा पर आश्रित है। जीमूतवाहन नागानन्द का नायक एक विद्याधर राजकुमार है जो इस जन्म में बोधि-सत्त्व के एक अंश का अवतार है। पिता जीमूतकेतु के वानप्रस्थ आश्रम में प्रविष्ट होने के अनन्तर वही अब अपने राज्य का उत्तराधिकारी है। परन्तु बोधिसत्व की करुणार्द्र वृत्ति से वह वंश में परम्परा से चले आ रहे कल्पवृक्ष से यह वर माँगता है कि प्रजा सन्तुष्ट रहे, और इस प्रकार राज्य की चिन्ता से उन्मुक्त होकर वह भी अपने वृद्ध माता-पिता की शुश्रूषार्थ, उन्हींके साथ जाकर जंगल में रहने लगता है। मलयाचल की उपत्यकाओं में बसी सिद्धपुरी में वे बस जाते हैं। एक दिन गौरी मन्दिर के आस-पास घूमते हुए उसे एक संगीत सुनाई देता है। मन्दिर में सिद्धराजकन्या मलय-वती गौरी की आराधना में गा रही है। दोनों का प्रथम दर्शन होता है और कुछ ही दिनों में विवाह भी सम्पन्न हो जाता है। परन्तु विवाहविधि के पश्चात् आपानोत्सव मनाते हुए जीमूतवाहन और मलयवती का भाई मित्रावसु अपनी बस्ती से दूर समुद्र की ओर निकल जाते हैं। इतने में द्वारपाल आकर किसी कार्यवश मित्रावसु को बुला ले जाता है, और तभी एक आर्त्तनाद को सुनकर जीमूतवाहन व्याकुल हो उठते हैं। आज एक नाग शङ्खचूड गरुड़ का भोजन बनेगा। यह करुण-क्रन्दन उसकी वृद्धा माता का है। उधर शङ्खचूड मरने से पूर्व दक्षिण गोकर्ण को वन्दन करने जाता है, और इधर

इस अवसर का लाभ उठाते हुए जीमूतवाहन शङ्खचूड के स्थान पर अपने-आपको गरुड के भोजनार्थ अर्पित कर देता है। इस आत्म-बलिदान का ज्ञान होने पर गरुड़ की काया पलट जाती है। जीमूतवाहन की मृत देह को देखकर उसके माता-पिता तथा नव-वधू स्वयं अग्नि-प्रवेश के लिये उद्यत होते हैं। उसी समय भगवती गौरी दर्शन देकर जीमूतवाहन को प्रत्युज्जीवित करती हुई उसे विद्याधरों का चक्रवर्ती बना देती है और जीमूतवाहन के उपदेश से गरुड सदा के लिये नाग भक्षण का त्याग करता हुआ पूर्वभक्षित नागों को अमृतवृष्टि द्वारा पुनरुज्जीवित कर देता है।

उदयन-कथा में पद्मावती के स्थान पर सिंहल की राजकुमारी प्रियदर्शिका को नायिका रूप में प्रस्तुत करने से कुछ ऐसे प्रतीत होता है जैसे यह प्रणय-कथा किसी रूप में स्वयं हर्ष के अन्तः-पुर में घटी थी। इसके अतिरिक्त श्रीहर्ष की नायिकाएँ आत्महत्या के पाप में स्वयं नायक के द्वारा रँगे-हाथ पकड़ी जाती हैं। इन दृश्यों का नाटकीय उपयोग भले ही शृंगार रस में उद्दीपन का हो, परन्तु आत्महत्या के विचार को इतना व्यापक कर देना इस बात का द्योतक है कि किसी निजी घटना ने श्रीहर्ष के मन पर एक गहरा और स्थायी प्रभाव डाला है। वह घटना कौन सी थी ? जीवन अथवा राष्ट्र जीवन में किस आप-बीती से मिली थी ? संभव है, हम इन प्रेरणाभूत घटनाओं के अज्ञान के कारण 'श्रीहर्ष-नाटकचक्र' के रसग्रहण में असफल रहें। इस-लिये आवश्यक है कि हम श्रीहर्ष के कवि अथवा नाटककार रूप की आलोचना करने से पूर्व, नाटकों का प्रेरणा-सूत्र ढूँढने के लिये, उनके राज्यकाल की मुख्य घटनाओं पर एक विहंगम-दृष्टि डाल लें।

श्रीहर्ष : राजरूप में—

गुप्त साम्राज्य के विघटन पर भारत छोटे-छोटे रजवाड़ों में बँट गया। किन्तु सातवीं शताब्दी के अन्त में कुरुक्षेत्र के निकट, थानेसर में प्रभाकरवर्धन ने देश को पुनः एक-सूत्रित करने का प्रयत्न किया। विक्रम संवत् ६६३ में उसका बड़ा लड़का राज्यवर्धन सिंहासनासीन हुआ। किन्तु वह अभी एक वर्ष भी राज्य न कर पाया था कि गौडवंश के शशांक ने उसे बुलाकर धोखे से मरवा डाला। तदनन्तर ६६३ से ७०४ वि० तक राज्यवर्धन का छोटा भाई हर्षवर्धन राज्य करता रहा। भाई की हत्या से वर्धन साम्राज्य उखड़ चुका था, परन्तु हर्ष ने उसे न केवल पुनः सुस्थित ही किया अपि तु उसने सेना को सुदृढ़ करके दिग्विजय का ऐसा ताँता बाँधा कि प्रायः संपूर्ण उत्तर भारत उसके अधीन हो गया। हर्ष की शासनप्रणाली भारत की प्राचीन धर्म-विजय परम्परा के अनुकूल थी, इसका प्रमाण प्रसिद्ध समकालीन चीनी यात्री य्वान् च्वाँग (ह्यू न् त्साँग) का यात्रा-वर्णन है, जिसमें उन्होंने मुक्त-कण्ठ से हर्ष की राज्य-व्यवस्था की प्रशंसा की है। कुछ काल पीछे चीनी बौद्ध प्रचारक इत्सिंग भारतवर्ष में

प्रायः बीस वर्ष तक पर्यटन, प्रचार करते रहे। उन्होंने हर्ष की कीर्ति के आधार पर उसके न केवल राजरूप को ही प्रस्तुत किया है, अपि तु कविरूप को भी सराहा है। 'नागानन्द' के विषय में ह्वान् च्वाँग तथा इत्सिंग के लेख प्रामाणिक हैं कि जीमूतवाहन की भूमिका में स्वयं हर्ष ने अभिनय भी किया था।[1] इससे हर्ष के नाटककार होने में कोई सन्देह रह ही नहीं जाता।

भारतीय परम्परा में संभवतः हर्ष ही अन्तिम राजा हैं जिन्होंने अश्वमेध रचा तथा दिग्विजय की। हर्ष के साथ भारतीय हिन्दू साम्राज्य, गुप्तकालीन स्वर्ण-युग, चक्रवर्तित्व द्वारा देश के एकीकरण, तथा संस्कृत साहित्य एवं सभ्यता की उदय-कथा सब समाप्त हो जाते हैं। अपने लम्बे राज्यकाल में उन्हें एक पराजय भी—६७७ वि० में चालुक्य राजा पुलकेशी द्वितीय के हाथों—सहनी पड़ी थी। चालुक्यों का राज्य दक्षिण में था। इसके अतिरिक्त श्रीहर्ष के राजदूत, ह्वान् च्वाँग की भारत-यात्रा के अनन्तर, चीन आदि विदेशों में भी गए थे, जिससे प्रतीत होता है कि प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं के साथ-साथ हर्ष ने हमारी बृहत्तर भारत-परम्परा को भी अक्षुण्ण बनाए रखा था। गौड शशांक के विश्वासघात, पुलकेशी द्वारा पराजय, सिंहल, चीन आदि दूर देशों से प्रचारकों का भारत में आवागमन, तथा साम्राज्य की डोलती नैया के दिनों बहिन राज्यश्री को चिता-प्रवेश से बचाकर ले आना, और प्रतिक्रियोद्बुद्ध ब्राह्मण धर्म के ठेकेदारों द्वारा बौद्ध ह्वान् च्वाँग के जीवन पर घातक आक्रमण—इत्यादि कुछ ऐसी घटनाएँ हैं जो हर्ष के मन पर स्थायी प्रभाव छोड़ गई।

रत्नावली में रत्नावली (नायिका) वास्तव में हर्ष के अन्तःपुर में शरणार्थ आई सिंहल की राजकुमारी ही है। वह बृहत्तर भारत का युग था। स्वप्न-वासवदत्ता में उदयन की जय-पराजय कथासरित्सागर के नायक की जय-पराजय है, किन्तु प्रियदर्शिका तथा रत्नावली में वह स्वयं हर्ष की आप-बीती है। यदि सचमुच इन नाटिकाओं का कथा-स्रोत भास के उदयन-नाटक होते, तो भास-नाटकों में भी नायिकाओं का आत्म-हत्या के लिये प्रयास कहीं तो होता। यह प्रयास श्रीहर्ष की अपनी आँखों के सामने उसकी बहिन राज्यश्री ने किया था, जो श्रीहर्ष के मन में सदा के लिये एक दुःस्वप्न सा बनकर छुपा हुआ था। 'सागरिका' का वेष-परिवर्तन द्वारा नायक से मिलन तथा प्रियदर्शिका द्वारा अभिनय के व्याज से नायक के हृदय में प्रेम-बीज-वपन—दोनों व्यपदेशों के नाटकीय उपयोग में जहाँ नवलता है, मौलिकता है, वहाँ अधिक संभवतः उनकी मूल-प्रेरणा में कवि की कोई स्वात्मानुभूति

[1] "A Record of Buddhist Religion by I-Tsing," translated by J. Takakusu, pp. xxv—xxviii, lv, and p. 163, Oxford, 1896.

संनिहित है। इसी प्रकार जीमूतवाहन के आत्मोत्सर्ग को कथा का विषय बनाना, उसका नाटकीकरण भी नाटककार की कोरी कल्पना ही नहीं हो सकती। यह घटना एक ऐतिहासिक तथ्य है—बौद्ध यात्री ह्वान् च्वाँग पर ब्राह्मणों के घातक प्रयत्नों की भनक जब हर्ष के कानों में पड़ी तो उसने राज्यभर में यह डौंडी पिटवा दी कि इस अपराध का दण्ड कठोरतम होगा। उसके अनन्तर आचार्य ह्वान् च्वाँग के सर्वसाधारण में उपदेश हुए और राजकीय प्रश्रय में उनकी सवारी भी निकली; और इस देश-व्यापी स्वागत-समारोह के अनुरूप राजकीय कोष से दरिद्रों, ब्राह्मणों, श्रमणों में मुक्त-हस्त दान भी बाँटा गया।

नागानन्द का कथानक—

नागानन्द के नाटककार श्रीहर्ष के राज्य में गुप्तकालीन स्वर्णयुग की प्रतिक्रिया-स्वरूप ब्राह्मणों तथा बौद्ध श्रमणों में वैमनस्य चला आ रहा था। इसका जीवित प्रमाण भारत में आए हुए चीनी बौद्धाचार्य ह्वान् च्वाँग के उदात्त जीवन पर घातक आक्रमण की योजनाओं में प्रकट हुआ। हर्ष इसकी भनक पाकर एकाएक ठिठक गया, उसे बौद्ध धर्म अपनी बलिदान-भावना के कारण पवित्रतर रूप में इतना भा गया कि इसी एक घटना ने उसे बौद्ध धर्म के प्रचार में कलाकार रूप में अपनी एक आहुति अर्पित करने को प्रेरित किया। उसी प्रेरणा का परिणाम यह नागानन्द नाटक है।

इस प्रकार प्रियदर्शिका तथा रत्नावली की भाँति नागानन्द भी हर्ष की समकालीन घटनाओं द्वारा ही प्रेरित है, और दोनों नाटिकाओं की भाँति इसका कथानक भी गुणाढ्य की बृहत्कथा से लिया गया है। बाण-भट्ट ने पैशाची बृहत्कथा की जो प्रशंसा अपने हर्षचरित में की है, उससे प्रकट है कि कम-से-कम श्रीहर्ष के समय तक कथाओं का यह बृहत् (पैशाची) संग्रह उपलब्ध था।

नागानन्द की मूल कथा सोमदेव के कथासरित्सागर (शशांकवती लम्बक १२ की तरङ्ग २६, आदितः ९० वीं तरङ्ग) में संगृहीत है। यद्यपि नागानन्द नाटक के आमुख में स्वयं श्रीहर्ष ने लिखा है कि यह नाटक (बोधिसत्त्व जातक-माला के) विद्याधर जातक को आधार मानकर प्रस्तुत किया गया है, तथापि आर्यशूर की जातकमाला में जीमूतवाहन की कथा किसी रूप में भी उपलब्ध नहीं है।

हाँ, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा प्रकाशित 'जातक' द्वितीय खण्ड में भदन्त आनन्द कौसल्यायन ने (अङ्क १५४ पृष्ठ १५२ पर) 'उरग जातक' का उद्धरण किया है, जिसमें बोधिसत्त्व ने गरुड़ से नाग की रक्षा की। परन्तु वह कथा 'नागानन्द' की कथा से सर्वथा भिन्न है।—

ब्रह्मदत्त के राज्य में वाराणसी में एक नाग और गरुड़ मेला देखते हुए इकट्ठे खड़े थे। नाग ने भूल से गरुड़ के कन्धे पर हाथ रख दिया। गरुड़ ने जब पीछे मुड़कर

देखा तो नाग प्राण-भय से नदी की ओर भाग निकला। गरुड़ ने उसका पीछा किया। नदी में तपस्वी के रूप में बोधिसत्त्व स्नान कर रहे थे। नाग मणि का रूप धारण कर-के तट पर पड़े उनके बल्कल वस्त्र में छिप गया। गरुड़ ने प्रार्थना की, भन्ते—

इधूरगानं पवरो पविट्ठो
सेलस्स वण्णेन पमोक्ख मिच्छं।
बह्मञ्च वण्णं अपचायमानो
बुभुक्खितो नो विसहामि भोत्तुं॥

अर्थात् यहाँ मणि रूप में प्राण बचाने के लिये नागराज घुस गया है। मैं ब्राह्मण वर्ण का आदर करने के कारण भूखा होता हुआ भी उसे खाने का साहस नहीं करता।

पानी में खड़े-खड़े बोधिसत्त्व ने गाथा कही—

सो बह्मगुत्तो चिरमेव जीव
दिब्बा च ते पातु भवन्तु भक्खा।
सो बह्मवण्णं अपचायमानो
बुभुक्खितो नो वितरासी भोत्तुं॥

अर्थात् तू ब्रह्म द्वारा रक्षित होकर चिरकाल तक जीवित रह। तुझे दिव्य भोजन प्राप्त हों, जो तू भूखा होता हुआ भी ब्राह्मण वर्ण के गौरव के कारण इसे नहीं खा रहा।

तब तपस्वी ने उन दोनों को अपने आश्रम में लेजाकर उनकी मैत्री करा दी। तत्पश्चात् वे दोनों प्रसन्नतापूर्वक सुख से रहने लगे।

जीमूतवाहन के 'उपेक्षित' आत्मोत्सर्ग को यथोचित मान सम्प्रदान करने का श्रेय उपलब्ध साहित्य साक्ष्य के अनुसार सर्वप्रथम श्रीहर्ष का ही है। नागानन्द की कथा प्रायः घटनाक्रम, चरित-चित्रण आदि में मूल कथा से ही ज्यों की त्यों —शब्दशः—ले ली गई है। किन्तु जिस प्रकार (बोधिसत्त्व) जीमूतवाहन के उपेक्षित बलिदान को सर्व प्रथम अभिनयार्पित करना श्रीहर्ष की कलाकारता का द्योतक है, उसी प्रकार बलि-दान के सजीव रोमाञ्चकारी वातावरण से प्रभावित होकर गरुड़ जैसे क्रूर नागभक्षक का सद्यः-परिवर्तन (आत्मिक कायापलट) भी श्रीहर्ष की धार्मिक सूक्ष्म बुद्धि, सत्य-प्रियता तथा बौद्ध-प्रचार में अनुदान-परता का रूपक है।

मूल कथा के कुछ अंश नागानन्द नाटक में छूट भी गए हैं और अन्य अंशों में नाटकीय परिवर्तन भी हुए हैं। यथा—

(i) विद्याधरों की राजधानी (हिमालय पर बसी) काञ्चनपुरी, जीमूतकेतु की पत्नी महारानी कनकदेवी इत्यादि का नाम्ना उल्लेख हर्ष ने नहीं किया।

(ii) वानप्रस्थ में जीमूतवाहन की मैत्री एक ऋषि पुत्र से हुई थी, उसी ऋषि

पुत्र को नाटककार ने नाटकीय अनुरोध से विदूषक बना डाला है—परन्तु यह विदूषक संस्कृत नाटक के सामान्य विदूषकों से सर्वथा भिन्न है। उसे लड्डुओं से इतना प्रेम नहीं, जितना अपने मित्र के हित से है; न ही वह संस्कृत नाटकों की परम्परानुसार अन्तःपुर में सर्वथा नपुंसक है। वह युवक-युवतियों के परिहास का रस ले सकता है (देखो, आपानोत्सव में मत्तपालक-दृश्य)।

(iii) कथासरित्सागर में जीमूतकेतु द्वारा मलयवती के वधू रूप में स्वीकार की सूचना मलयवती की सहेली लाती है, नागानन्द की 'चेटी' नहीं। मूल कथा में प्रथम अनुराग के दृश्य में शृङ्गारानुकूल रोमाञ्च अधिक है, क्योंकि जीमूतवाहन पर दृष्टि पड़ते ही मलयवती—

तथानुराग-विवशा भेजे कन्या विहस्तताम्।
यथा सखीव वीणास्या व्याकुलालपतां ययौ ॥ ४८ ॥

(iv) अशोक-पादप पर फाँसी लगाकर लटकने से पूर्व मलयवती गौरी से प्रार्थना करती है—

त्वद्भक्तया देवि संवृत्तो नास्मिन् जन्मनि चेन्मम।
जीमूतवाहनो भर्ता तद् भूयात् सो ऽन्यजन्मनि ॥ ७२ ॥

फंदा भी उसने उत्तरीयक से लगाया है, अतिमुक्तलता से नहीं। यहाँ मलयवती के 'प्रयास' को चेटी ने चीख-पुकार कर विफल नहीं बनाया, अपि तु मलयवती की 'अन्तिम इच्छा' ने ही स्वयं मुखर होकर जीमूतवाहन को पुकारा है—

हा नाथ विश्व-विख्यात-करुणेनापि न त्वया।
कथमस्मि परित्राता देव जीमूतवाहन ॥ ७४ ॥

(v) मित्रावसु से 'अस्थि शिखर' की कथा सुनकर जीमूतवाहन नागराज वासुकि तथा पक्षिराज गरुड़ दोनों की हृदयहीनता पर खीझा है, और तत्क्षण आत्म-बलिदान (द्वारा शङ्खचूड की रक्षा) के लिये उद्यत हो गया है। मूल कथा में वध्य-चिह्न रक्तांशुक युगल का उल्लेख नहीं है।

(vi) परन्तु नाटक में तथा मूल कथा में सबसे अधिक रोमांचकारी दृश्य गरुड़ की कायापलट है।

गरुड़ जीमूतवाहन के बलिदान पर विस्मित रह गया है। उसे निश्चय है कि जिसका मांस मैं आज खा रहा हूँ वह कोई महापुरुष है, नाग नहीं। परन्तु जीमूतवाहन उसके प्रश्न के उत्तर में कहता है—

नाग एवस्मि। को ऽयं ते प्रश्नः ? प्रकृतमाचर ॥ १६६ ॥

मुझे अपना काम करने दे, तू अपना कर (अर्थात् मेरा मांस खाता जा)।

पर इसी एक दृश्य के कला-पूर्ण उपयोग से श्रीहर्ष की नाटककारता को

चार चाँद लग गए हैं।

(vii) सोमदेव की कहानी में जब भगवती गौरी प्रकट होकर कमण्डलु-जल से जीमूतवाहन को प्रत्युज्जीवित करती है, तभी गरुड़ भी जीमूत की उदात्तता से सन्तुष्ट होकर उसे वर माँगने को कहता है। इस प्रकार गरुड़ का नाग-भक्षण से विमुख होना तथा पूर्व-भक्षित नागों को अमृत द्वारा फिर से जीवन-प्रदान करना जीमूतवाहन की वरयाचना का परिणाम है, न कि पूर्व-कृत पापों के प्रति पश्चात्ताप के उद्वेग से उसके हृदय का स्वतः विपरिणाम।

यही एक दृश्य श्रीहर्ष की प्रतिभा, कला तथा धर्म-दृष्टि को, जीमूतवाहन की स्वाभाविक उदात्तता और गरुड़ की प्रायश्चितोद्भूत अन्तः-शुद्धि के साथ ऊँचा उठा देने के लिये पर्याप्त है। जीवन में यह क्षण एक बार ही आया करता है। बलिदान किस प्रकार न केवल 'हुतात्मा' जीव को अपि तु सम्पूर्ण जीव-जात को पावन कर जाता है इसका उदाहरण जहाँ अशोक के कलिङ्ग हत्याकाण्ड के पश्चात् धर्म-चक्र परिवर्तन में ऐतिहासिक बन चुका है, वहाँ गाथाओं में जीमूतवाहन के बलिदान से गरुड़ के मनः-परिवर्तन में चिर-साहित्य बन चुका है। तथा श्रीहर्ष द्वारा नाटकीकृत होकर वह जनसाधारण की (मनोरंजनपूर्ण) मनः-शुद्धि का साधन बन चुका है।

श्रीहर्ष के जीवन में यह परिवर्तन टवान् च्वाँग की बलिदान-क्षण में भी निर्भय-वृत्ति को देखकर आया था।

(viii) एक और बात जो प्रस्तुत नाटक में कथासरित्सार और बृहत्कथा-मञ्जरी की मूल कथाओं से सर्वथा भिन्न है वह है कथानक का उद्देश्य। कथा-सरित्सागर में जीमूतवाहन की कथा सुनाकर बेताल त्रिविक्रमसेन से पूछता है—

तद् ब्रूहि शङ्खचूडः किं वा जीमूतवाहनोऽधिकः
सत्त्वेन तयोरुभयो? ॥ २०३ ॥

और त्रिविक्रम उत्तर देता है—

बहु जन्म सिद्धमेतच् चित्रं जीमूतवाहनस्य कियत्?
श्लाघ्यः स शङ्खचूडो मरणोत्तीर्णोऽपि यो रिपवे ॥ २०५ ॥
अन्यप्रत्तात्मानं प्राप्य सुदूरं गताय तार्क्ष्याय।
पश्चाद्-धावन् गत्वा स्वं देहमुपानयत् प्रसभम् ॥ २०६ ॥

और कथामञ्जरी में विक्रम ने उत्तर दिया कि हृदय-परिवर्तन जन्मजन्मान्तर सिद्ध उदात्तता से कहीं ऊँचा है। गौरव गरुड़ का है, जीमूतवाहन का नहीं।

हर्ष ने गरुड़ की अमृत वर्षा से पूर्व ही जीमूतवाहन को प्रत्युज्जीवित करा दिया है। वह गरुड़ के अनुग्रह से मुक्त है मूल कथाओं के विपरीत नागानन्द में गरुड़ की महत्ता पश्चात्ताप में है; और नागों का प्रत्युज्जीवन किसी नवीन चेतना के

प्रादुर्भाव का परिणाम नहीं, अपि तु जहाँ वह जीमूतवाहन के मृत्यु-शय्या पर दिये उपदेश से नाग-भक्षण से विमुख हो जाता है, वहाँ अमृत की अकस्मात् स्मृति से उसका अभिमान जाग उठता है और वह उड़कर, यमराज, इन्द्र, कुबेर पर आपत्ति लाता हुआ अपने पंख 'समुद्र' में भिगो लाता है और मलयगिरि पर अमृत की वर्षा कर देता है।

जीमूतवाहन 'बलिदान-कथासरित्'—

(क) १. जीमूतवाहन के आत्मोत्सर्ग की कथा भारतवर्ष में दो और रूपों में भी मिलती है। कथा के हिन्दी रूपान्तर में (Barker कथा १५) मलयवती के आत्महत्योद्योग की घटना नहीं है। पहले झपटे में जीमूतवाहन गरुड़ के पंजे से छूट जाता है। जीमूतवाहन को प्रत्युज्जीवित करने के लिये गौरी प्रकट नहीं होती। जीमूतवाहन क्षत्रिय था, आत्मबलिदान में उसकी उदात्तता कुछ नहीं।

तामिल रूपान्तर (Babington कथा १६) में गरुड़ आते ही जीमूतवाहन को पहचान लेता है और उसके आत्मोसर्ग की भावना से प्रभावित होकर तत्क्षण (बिना खाए) उसे वर दे देता है। नाग-भक्षण गरुड़ का स्वभाव है, उसका हृदय पसीज जाए और वह हाथ में आए आमिष को छोड़ दे!—इस स्वभाव-परिवर्तन से बड़ा चमत्कार और हो नहीं सकता।

२. कथासरित्सागर, बृहत्कथामञ्जरी तथा श्लोक-संग्रह के अतिरिक्त यह कथा सिंहासन-द्वात्रिंशिका में 'एकादशी पुत्तलिका' तथा वेतालपञ्चविंशतिका में '१६-वाँ वेताल' के रूप में संगृहीत है।

३. कथासरित्सागर का विक्रम महाभारत में 'चिरंजीवी' पक्षी के मुख से एक राक्षस के अत्याचारों की कथा सुनता है। चिरंजीवी के (एक पूर्व जन्म के) मित्र ा पुत्र आज राक्षस की भेंट हो रहा है। विक्रम झट जादू का जूता पहनकर पर्वत पर पहुँच जाता है और अपने निर्भीक बलिदान उपहार से राक्षस की काया पलट देता है।

महाभारत के एक और स्थल पर बक राक्षस की कथा आती है। वनवास के दिनों में पाण्डव एक ब्राह्मण के हाँ अतिथि बनकर रहे थे। एक दिन ब्राह्मण-परिवार एकाएक चिन्ताग्रस्त हो गया। ब्राह्मण के इकलौते पुत्र की बक राक्षस का भोजन बनने के लिये जाने की बारी थी। माता कुन्ती ने स्वयं अपने पाँचों पुत्रों को फटकारा कि तुम क्षत्रिय किस बात के हो ? भीम ने जाकर उस राक्षस का संहार कर दिया और 'जनस्थान' को नर-बलि की बिभीषिका से मुक्त कर दिया।

४. शिवि तथा दधीचि के बलिदान लोक-प्रसिद्ध हैं ही।

५. आर्यशूर की जातक माला में जीमूतवाहन की कथा अथवा विद्याधर

जातक प्राप्य नहीं, परन्तु व्याघ्रीजातक, शिविजातक तथा महाबोधिजातक में बुद्ध के करुणा-वत्सल रूप तथा आत्मोत्सर्गमय जीवन की झाँकी अवश्य मिलती है। एक और लोक-प्रसिद्ध बौद्ध कथा में आता है कि एक बार बुद्ध के सामने कुछ बकरी के बच्चों को बड़ी निर्दयता से वध्यभूमि की ओर घसीटा जा रहा था। पता चला, इन्हें वेद की आज्ञानुसार यज्ञशाला में ले जाया जा रहा है। बुद्ध साथ हो लिये। यज्ञभूमि पर पहुँचकर उन्होंने पशुओं के स्थान पर अपने-आपको अर्पित कर दिया और कहा, 'जो वेद प्राणी हत्या की अनुमति देता है उसे मैं नहीं मानता'। बात अवसर की थी, घर कर गई। ठीक ऐसी घटना ऋषि दयानन्द के जीवन में भी घटी, परन्तु आत्म-बलिदानार्थ प्रस्तुत होते हुए उन्होंने कहा था 'मैं ऐसे वेद-भष्य को नहीं मानता'।

६. पञ्चतन्त्र तथा हितोपदेश में कबूतर के चिता-प्रवेश द्वारा 'कश्चित् क्षुद्र-समाचारः घोरः शकुनि-लुब्धकः'—व्याध के हृदय-परिवर्तन तथा स्वर्ग-लाभ की कथा आती है, जिसमें पशु-हृदय की करुणा को मानव-करुणा से ऊँचा दिखाया गया है।

७. पारसी धर्म में तो शव को गगन-चुम्बी (जीमूतवाहन ?) मृत्यु-कूप के शिखरपर नंगा रख दिया जाता है, और चील-गिद्ध आदि नर-मांस भक्षक पक्षी, आकर उसे खा जाते हैं।

(ख) ८. जन-साधारण के अन्ध विश्वास तथा गाथा-लोक के राक्षसों के पश्चात्, अगले युग में राक्षस अजगर (Dragons) बन जाते हैं। काल्मुक (Kalmuck काल मुक्ति ?) की कथाओं में दो अजगरों का उल्लेख आता है जो मनुष्य जाति को खेती की सिंचाई के लिये अभीष्ट जल से वञ्चित कर देते हैं। इस अभिशाप से मुक्ति इसी शर्त पर होती है कि वे प्रतिदिन एक मनुष्य को अपना आहार बनाएँगे। एक दिन खान (The Khan) की बारी आती है। परन्तु खान का पुत्र उसके स्थान पर अपने-आपको अर्पित करता है। पिता-पुत्र साथ जाते हैं, और अजगरों की 'रहस्य' भरी बात-चीत—"मनुष्य न जाने अपने-आपको इतना बुद्धिमान् क्योंकर समझता है ? उसे इतना भी पता नहीं कि हमें मारना कितना सुगम है !"—ओट से सुनकर दोनों को मारने में सफल होते है। पृथ्वी फिर से हरी-भरी हो जाती है।

९. इसी प्रकार की एक और कथा Julg—Siddhi-kur No. 2; Coxwell—Siberian and Other Folk-Tales No. 4; Busk—Sagas From the Far East No. 2.—में 'सूर्य-रश्मि और उसका छोटा भाई' के नाम से उद्धृत है, जिसमें एक सरोवर पर अजगरों का आतंक छाया हुआ है। खेती-हर लोग विवश उन्हें प्रति वर्ष (एक विशेष मास में उत्पन्न) एक नवयुवक भेंट करते हैं। कथा के नायक की बारी आती है। उसकी प्रेयसी (राजकुमारी) के

अनुरोध पर दोनों (जीमूतवाहन-मलयवती ?) को एक खाल में इकट्ठे सीकर अजगरों के सम्मुख फेंक दिया जाता है। प्राण-संकट में प्रेमी-युगल के इस परस्पर प्रेम से विमुग्ध होकर अजगर न केवल दोनों को छोड़ देते हैं अपि तु उस सरोवर पर से भी अपना आतंक उठाकर खेती-बाड़ी के लिये पानी खुला छोड़ देते हैं।

१०. नाग-पूजा का सम्बन्ध सम्भवतः आर्यों तथा दस्युओं के प्रागैतिहासिक युद्ध-काल से है ऐसी एक विद्वान् की कल्पना है। एक लेख (The Nagas : A Contribution to the History of Serpent-Worship, JRAS, July 1901) में C.F. Oldham ने दर्शाया कि चनाब की घाटी में वासुकि अथवा वासुदेव (नागराज) के मन्दिरों में नागराज की प्रतिमा के साथ उसके मुख्य-मन्त्री की प्रतिमा भी संलग्न हैं। मुख्यमन्त्री का नाम है जीमूतवाहन। कथा के अनुसार वासुदेव का गरुड़ से घोर युद्ध हुआ, इस युद्ध में नागराज के प्राण बड़ी कठिनता से बचे। मन्त्री ने अपने प्राणों पर खेलकर राजा के प्राण बचाए। वासुदेव ने भागकर समुद्र से १३०० फुट की ऊँचाई पर, चनाब तथा रावी की घाटियों के बीच, कैलाश-कुण्ड में शरण ली। फिर से सेना का संगठन किया गया और गरुड़ को अगले युद्ध में परास्त कर दिया गया। नागराज ने प्रत्युपकार-स्वरूप आदेश दिया कि आगे से जीमूतवाहन की भी मेरे साथ-साथ पूजा हुआ करेगी। ऐतिहासिक तथ्य कुछ हो कैलास-कुण्ड पर आज भी (पाकिस्तान बनने के पश्चात् नहीं !) वार्षिक समारोह होता है, और आस-पास के सब नर-नारी इसमें सम्मिलित होते हैं।

११. जेन्द अवस्था में गरुड़ का नाम है एओरोष (Eorosh=उर्वश ? *v.l.* Chanmrosh)। भारतीय गाथाओं में जीमूतवाहन की कथा विक्रमादित्य अथवा त्रिविक्रमसेन के नाम से सम्बद्ध है। सम्भवतः विक्रम और उर्वशी का प्रेम-परिणय इसी बात का द्योतक हो कि विक्रम ने कभी एक नाग का जीवन बचाने के लिये आत्म-बलिदान से उर्वश (=एओरोष=गरुड़) को इतना मुग्ध किया हो कि उस ने स्वयं अपनी पुत्री उर्वशी का विवाह उसके साथ कर दिया हो।

१२. ह्यू न् त्सांग (य्वान् च्वाँग) ने, जो बौद्ध धर्म के प्रचार कार्य में भारत में कई वर्ष (६२९—६४५ ई०) तक परिव्राजक बनकर घूमता रहा, श्रीहर्ष द्वारा लिखे गए जीमूतवाहन सम्बन्धी 'एक नाटक' की प्रशंसा करते हुए कहा है कि स्वयं श्रीहर्ष जीमूतवाहन की भूमिका में उतरते थे। इसके साथ ही तुलना के रूप में य्वान् च्वाँग ने चीन की कराकश नदी (खोतान दरिया ?) की एक गाथा का उल्लेख किया है। इस नदी के आस-पास रहने वाले अनावृष्टि से तंग आए हुए थे। एक अर्हत ने उन्हें जताया कि यह एक अजगर की करतूत है, दुर्भिक्ष से मुक्ति का एक मात्र उपाय है बलिदान। ग्रामीण जनता पूजनार्थ नदी पर एकत्र हुई। एक नागकन्या ने जल में

से बाहर निकलकर कहा मैं विधवा हूँ, मुझे पति चाहिये। राजा का एक मन्त्री सफेद घोड़े पर चढ़कर नदी में कूद पड़ा। कुछ देर पीछे घोड़ा लौट आया, किन्तु उसकी पीठ खाली थी। नदी में बाढ़ आई, धरती पर फिर से हरियाली छा गई। इस कथा का उल्लेख करके अन्त में य्वान् च्वाँग लिखते हैं—"वर्ष पर वर्ष बीतते जाते हैं, अब न उस स्थान पर वे ढोल-ढमाके हैं, न वह पुराना चैत्य है, और न कोई अर्हत। अब वह स्थान सर्वथा सुनसान है"।

१३. जापान के कथासरित्सागर को-जी-की (Ko-ji-ki) में एक कथा अष्टावक्र साँप की कहानी नाम से संगृहीत हुई है। इद्ज़ुमो (Idzumo) देश में हि (Hi) नदी के मुहाने पर एक नर-वृषभ-अगस्त्य (His-Swift-Impetuous-Augustness) कहीं से आ टपका एक दिन वह नदी के तट पर मँडरा रहा था कि अकस्मात् उसने एक आर्त्त-नाद सुना। एक वृद्धा और वृद्ध अपनी युवती कन्या को लिये हुए चले आ रहे थे। पता चला कि यह उनकी आठवीं कन्या है। सात को तो नदी का देवता (अथवा राक्षस ?) कोशी (कंस ?) एक-एक करके हड़प चुका है। अगस्त्य ने कहा अपनी कन्या का विवाह मेरे साथ कर दो, तो मैं तुम्हें इस अभिशाप से मुक्ति दिला सकता हूँ। बुड्ढे और बुढ़िया को और क्या चाहिये था ? लड़की का जीवन बच जाय और उसका विवाह भी हो जाय—एक पन्थ दो काज !' अगस्त्य ने अपनी दस-धारी तलवार से अजगर के टुकड़े-टुकड़े कर दिये, और हि-नदी एक रक्त की नदी में परिवर्तित हो गई। (Cf. चर्मण्वती नदी—हमारा मेघदूत, पूर्वमेघ, श्लोक ४६, पृष्ठ ५७, तथा भूमिका पृष्ठ *xxix*—ग)

(ग) १४. सृष्टि में सब कहीं उत्पातों की शान्ति तथा सुख-वैभव का आवाहन सदा आत्मोत्सर्ग द्वारा ही सम्पन्न होता है। बलिदान का अर्थ सदा से आत्म-बलिदान ही रहा है, किन्तु भीरु ब्राह्मणों, मौलवियों और पादरियों ने स्वार्थ से पशु बलिदान की परम्परा चला दी है। आत्म-बलिदान का सम्बन्ध रक्त से है जिसका उपलक्षण नागानन्द के वध्यचिन्हभूत रक्तांशुक-युगल हैं, रन्तिदेव के गोमेध यज्ञों में (देखो मेघदूत, loc. cit.) चर्मण्वती की रक्त-धारा है, ईसा के आत्म-बलिदान में उसका लाल कपड़ों वाला (Man of Sorrows का) रूप है। सृष्टि के प्रवाह का मूलसूत्र है आत्मोत्सर्ग, इसीलिये वंशवृक्ष को आगे ले जाने वाले—पुत्र को 'आत्मज' नाम दिया गया है।

जैन बलिदान-कथाओं में नाग—तीर्थंकर-दिगम्बर अर्थात् नाँगे साधु हैं। कनफटे नाथ-पंथी जोगी संभवतः 'गो-कर्ण' के पुजारी थे। कभी गौओं के कान भी फाड़े जाते थे...दुर्गा तथा शिव का खप्पर भी 'हाथ में जान लिये-लिये फिरना' (जी-मूत-वाहन) का द्योतक ही तो है !

नागों की विपत्ति तथा जीमूतवाहन के बलिदान की विश्वव्यापी कथाओं का सार है—अनावृष्टि द्वारा धरती पर से लहलहाते (√नज् व्रीडायाम्, Cf. Naiad) सस्यों का लोप, तथा इस विपत्ति से मेघ (जीमूतवाहन) उत्सर्ग द्वारा मुक्ति तथा सुख-वैभव संप्राप्ति। फ्रेज़र (Frazer) ने इस कथा के विभिन्न प्रायः ६० (विश्व-व्यापी) संस्करणों के तुलनात्मक अध्ययन से यही निष्कर्ष निकला है कि इन कथाओं में जल-देवियों को सन्तुष्ट करने के लिये मनुष्य के आत्म-बलिदान की भावना निगूढ़ है।

(The Pausanias' Description of Greece, Vol. V, pp.143-144.) ; Golden Bough, Vol. II. pp. 155-170) ई० एस० हार्टलैंड (E. S. Hartland ने भी इसी प्रकार अपने (The Legend of Perseus 3 Vols. 1894-1896) में विश्व-विख्यात 'वृत्र तथा इन्द्र' के युद्धों के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा यही स्थापना प्रस्तुत की है कि देवी-देवता को, विशेषतः जलदेवता को, सन्तुष्ट करने में मनुष्य की यही भावना अन्तर्निहित है कि पृथ्वी, पशु तथा मनुष्य जगत् में कहीं भी उत्पत्ति का अभाव (barrenness) न रहे तथा सम्पूर्ण विश्व नव जीवन से उर्वर (fertile) हो जाए। जल 'उत्पादन-शक्ति' का उपलक्षण है; संस्कृत में जल का एक पर्यायवाची शब्द 'जीवन' है।

ऐतिहासिक दृष्टि में जीमूतवाहन का उपाख्यान सम्भव है भारतवर्ष के प्राचीन युग के आर्य-दस्यु कालीन 'कुरुक्षेत्र' की ओर ही संकेत करता हो (देखो ऊपर कथा संख्या १०)। परन्तु सृष्टि-चक्र में नाग-विपत्ति का अर्थ है खेती-बाड़ी की विपत्ति, पृथ्वी-शोषण; गरुड़ भगवान् सूर्य हैं; जीमूतवाहन मेघ है; समुद्र में डुबकी लगाकर जो अमृत गरुड़ लाता है वह वर्षा का जल ही तो है; जीमूतवाहन के आत्मोत्सर्ग से पुनरुज्जीवित सस्य ही नाग हैं। आध्यात्मिक जगत् में जो भी महामानव अपने प्राणों को शिव की भाँति 'हथेली पर लिये-लिये फिरे' वही 'जी-मूत-वाहन' है। मलयवती-जीमूतवाहन, विक्रमोर्वशी, शिव-पार्वती के पार्वतीय परिणय में इसी तथ्य की आधि-भौतिक छाया भी है और आध्यात्मिक प्रतिच्छाया भी।

जीमूतवाहन की कथा को त्रिविक्रम अथवा विक्रमादित्य का नायकत्व यूँही नहीं दे दिया गया।[1]

वेद में एक स्थान (ऋग्वेद २.१३.३) पर इन्द्र की स्तुति में कहा है—'यो गा उदाजदपधा वलस्य' अर्थात् जो 'वल' को 'नष्ट' करके गौओं को ऊपर निकाल लाया। टीकाकार अब तक गाः का अर्थ, न जाने क्यों, सूर्य की किरणें करते रहे हैं, जब कि

---

[1] विक्रम-आदित्य = त्रि-विक्रम = त्रि-अयन = त्रि-नयन। अर्थात् ब्रह्मा = विष्णु = महेश। अर्थात् सूर्य = विष्णु = इन्द्र (वृत्रहन्)

यास्क के निघण्टु में गौः शब्द 'पृथ्वी नामधेयानि' में सर्व प्रथम (निघण्टु समाम्नाय का पहला शब्द !) पढ़ा गया है। हमारे विचार में गा(व): वर्षा ऋतु में पृथ्वी (की गोदी) में ..नाज् से (नाग from Nनज् व्रीडायाम्; with व्रीडा cf. blush) अपना सिर ऊपर उठाकर अंकुरित होती हुई (गो[=पृथ्वी]-पुत्रियाँ)[1] सस्यावलियाँ ही हैं—जिन्हें आख्यानकारों ने नाग-कन्याएँ बना दिया है।

श्रीहर्ष : आलोचना—

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने एक निबन्ध में साहित्य की उपेक्षिताओं पर प्रकाश डाला है। उनका कहना है कि यदि आज संसार उर्मिला, यशोधरा और तारापीड की ताम्बूल-वाहिनी को एक साथ भुला बैठा है, तो इसमें दोष कविजनों का ही है। कवीन्द्र की इस भर्त्सना से प्रेरणा पाकर मैथिलीशरण गुप्त ने साकेत तथा यशोधरा लिखकर दो उपेक्षिताएँ तो पूर्ण कर दीं। परन्तु कादम्बरी की 'ताम्बूल-वाहिनी' अभी तक उपेक्षित ही रही।

महाकवियों की साधना में श्रेय होता भी इसी बात का है कि वे इतिहास, गाथा तथा परम्परा के किसी उपेक्षित अङ्ग को आत्मसात् करके उसे पुनर्नव कर देते हैं। कालिदास की अमरता शकुन्तला को अमर कर देने में है। शूद्रक को आज लोग भुला बैठे हैं, परन्तु मृच्छकटिक में जन-गण, एक दरिद्र ब्राह्मण और एक वेश्या, अमर बन चुके हैं।

श्रीहर्ष की कला-साधना की सफलता इसी में पर्याप्त है कि उन्होंने उपेक्षित बोधिसत्त्वांश जीमूतवाहन को पुनर्जीवित किया, उसे अमर कर दिया। आश्चर्य तो यह है कि आर्यशूर की बोधिसत्त्वावदानमाला (जातक-माला) में जीमूत की कथा संगृहीत नहीं हुई। य्वान् च्वाँग के जीवन पर घातक-आक्रमण की भनक ने श्रीहर्ष की आँखें खोल दीं, और उनकी काया पलट दी। श्रीहर्ष के दिनों में ब्राह्मणों तथा श्रमणों के बीच, गुप्त-कालीन पुनरुत्थान-युग की प्रतिक्रिया रूप में वैमनस्य चला आता था। किन्तु श्रीहर्ष में इतना परिवर्तन आया कि उन्होंने अपने नाटक की कथा-वस्तु न केवल इस वैमनस्य पर आधारित ही नहीं की प्रत्युत उसमें इस वैमनस्य का संकेत तक नहीं किया। हम नाटक की प्रगति के साथ-साथ यह भूल ही जाते हैं कि जीमूत-

[1]अथाप्यस्यां (ताद्धितेन) कृत्स्नवन् निगमाभवन्ति—निरुक्त २.५. Philologically the word *nigama* means implication, i.e. the sense implied. तद्धितेन=तस्मिन् हितेन, कृत्स्नवत्=कृत्स्नमस्मिन् इति कृत्स्नवत्, तद् यथा स्यात् तथा—i.e. all that is in it, all its associations implied therein.

वाहन बोधिसत्त्वांश के अवतार हैं और विदूषक ब्राह्मण है। नाटककार की इस उदार भावना तथा कलापूर्णता का प्रमाण अन्तिम अङ्क में बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है, जब जीमूतवाहन के आत्मोत्सर्ग की वेला में हमें विद्याधर राजकुमार के परम मित्र विदूषक की अनुपस्थिति, अखरना तो दूर, सर्वथा विस्मृत हो चुकी होती है। और यह भी स्मरणीय है कि यह मैत्री समय के वैमनस्यपूर्ण वातावरण के विपरीत बौद्ध अवतार तथा एक ब्राह्मण के बीच थी। जनताजनार्दन का उद्धार अशोक, तथा श्रीहर्ष सरीखे राजाओं की इसी सूक्ष्मनीति, धर्म-सहिष्णुता तथा मानव-प्रेम से प्रसूत उदारता द्वारा ही संभव है। गाँधी जी के चरखे में और भारतीय जन-तन्त्र के प्रतीक अशोक-धर्मचक्र में यही धर्मनिरपेक्ष, अर्थात् मत-मतान्तर के भेद-भाव से शून्य, मानव-प्रेम की मूलप्रेरणा ही काम कर रही है।

विषय की दृष्टि से नागानन्द नाटक की दूसरी विशेषता यह है कि मूलकथा के उद्देश्य को इसमें सर्वथा अछूता रखकर, कथा-वस्तु को धर्म-निरपेक्ष मानव-प्रेम तथा उत्सर्ग की लोकातिशायी, तथापि लौकिक, भावनाओं से उद्गूर्ण कर दिया गया है। नागानन्द का जीमूतवाहन बौद्ध अहिंसा का प्रतीक न होकर करुणा-शील, साधारण मनुष्य है। वह विस्मित है कि वासुकि इस निर्हृदयता से एक नाग-शिशु को प्रतिदिन गरुड़ के अर्पित कर सकता है और कि एक वृद्धा माता के करुण-क्रन्दन का गरुड़ के वज्र-हृदय पर तनिक भी प्रभाव नहीं ! मूलकथा में जीमूतवाहन का प्रत्युज्जीवन तथा गरुड़ का हृदय-परिवर्तन (एवं पूर्व-भक्षित नागों को पुनः जीवनदान भी) बोधि-सत्त्व के आत्मोत्सर्ग से सन्तुष्ट होकर गरुड़ के वरदान और जीमूतकेतु की वर-याचना के फल स्वरूप होता है। किन्तु नाटक में सभी का पुनरुज्जीवन, यहाँ तक कि गरुड़ की काया-पलट, नायक के आत्म-बलिदान के प्रभाव से जनित गरुड़ के पश्चात्ताप द्वारा संपन्न होती है। जीमूतवाहन का नव-जीवन गरुड़ के अनुग्रह से अस्पृष्ट है।

आलोचना के उदात्त सिद्धान्तों की दृष्टि से नागानन्द का रस-परिपाक अपनी ही विलक्षणता से परिपूर्ण है। सामान्य नाटकों की भाँति नागानन्द की कथा-वस्तु भी जीमूतवाहन और मलयवती की प्रणय-कथा है। यह प्रणय-कथा प्रथम दृष्टि से ही प्रसूत है परन्तु प्रणय का रस शृङ्गार नहीं। विवाह-विधि समाप्त होती है, बन्धु-बान्धव आपानोत्सव में मग्न हैं, और नव-विवाहित दम्पती को संभोग का अवसर ही नहीं मिलता कि अकस्मात् विप्रलम्भ की छाया उन्हें आ घेरती है। करुणा के बादल तृतीय अङ्क की समाप्ति के साथ वातावरण को आर्द्र तथा रसमय करने लग जाते हैं। वस्तुतः जीमूतवाहन तथा हर्ष का शृङ्गार रस—संभोग तथा विप्रलम्भ दोनों रूपों में—करुण ही है। इसमें उदात्तता है, हीनता का लेश भी नहीं। इस करुण रस के दो अङ्ग हैं—एक तो वह जब मलयवती की चेटी अपनी स्वामिनी से कहती है—इस

निष्करुण मूर्ति के आगे तेरी प्रार्थनाओं और वीणा-गीतों से लाभ ? यह निष्करुणा अथवा स्वप्न-करुणा परिणय की पूर्वावस्था है । बुद्ध भगवान् तथा भगवती गौरी निष्ठुर रहें तो रहें, परन्तु जीमूतवाहन—वह अभी बोधिसत्त्व है, बोधिसत्त्वांश है, वह भगवान् 'अतिमानव' अभी नहीं बना—कारुणिक है, मिथ्याकारुणिक नहीं । श्रीहर्ष की करुणा का दूसरा अङ्ग विवाहोपरान्त जीमूतवाहन का पुत्र-वत्सल बुढ़िया की पुकार सुनकर उसके पुत्र के लिये आत्मोत्सर्ग का संपूर्ण वातावरण है जो पूर्वनिर्दिष्ट करुण रस का पूरक है । करुण रस के ये दोनों अङ्ग अद्भुत कलास्पर्श के साथ नान्दी के दो श्लोकों में प्रस्तुत हुए हैं ।

कला

(१) नाटक का बहिरङ्ग—

विषय की भाँति ही, विषय-प्रस्ताव के विभिन्न अङ्गों में भी श्रीहर्ष की प्रतिभा मौलिक है । नाटक का आरम्भ नान्दी से होता है । नान्दी में स्तुति भगवान् बुद्ध की हुई है । भगवान् बुद्ध करुणा के अवतार थे । तथागत-सिद्धि प्राप्ति से पूर्व वे जन्म-जन्मान्तर में बोधिसत्त्व रहे थे । उन्हींकी करुणा के दो पूरक स्वरूप बोधिसत्त्वांश जीमूतवाहन की अमर गाथा में प्रकट हुए । नान्दी के दो श्लोकों में श्रीहर्ष ने बुद्ध की स्तुति के व्याज से ध्वनि रूप में जीमूतवाहन की करुणा के यही दो पार्श्व उपस्थित किये हैं । बुद्ध बोधि-अवस्था को पहुँचने वाले हैं, वे आँखें मूँदे 'परम तत्त्व' के ध्यान में लीन हैं । इसी समय काम की दूतियाँ आकर उनकी समाधि भङ्ग करने पर उतारू हैं—

"यूँ समाधि-मिस किस प्रेयसि के स्वप्न देखते मुँदी आँख से ?"
"क्षण-इक देखो प्रेम-विकल अबला को !" "निर्बल के बल, वाह रे !"
"झूठमूठ बनते करुणाकर !" "हृदय-हीन तुम-सा, प्रभु ! कौन ?"—१. १.

वाणी के ये पाँच बाण वस्तुतः कामदेव के पञ्चबाण ही तो थे । बुद्ध की अन्तिम परीक्षा का यह क्षण था । उन्होंने आश्रय लिया पृथ्वी माता का—भूमि-स्पर्श मुद्रा ! बुद्ध से पूर्व तपस्वि-जन पृथ्वी, पार्थिवता तथा भौतिक जीवन की उपेक्षा करते हुए आध्यात्मिक उड़ानें लिया करते थे । बुद्ध ही प्रथम योगी हुए जिन्होंने कामदेव के प्रलोभनों को किसी दैवी-शक्ति के द्वारा नहीं अपि तु भूमि-स्पर्श अर्थात् इह-जीवन की भौतिकता तथा मानव-प्रेम एवं करुणा द्वारा ही निष्फल किया । बुद्ध ने जिस प्रकार उपेक्षित भौतिकता के आदान द्वारा मानव जीवन को उदात्त किया, उसी प्रकार श्रीहर्ष ने (भौतिक बुद्धि द्वारा) नान्दी का विषय काम दूतियों की इन चुटकियों को ही बनाया ! श्रीहर्ष की कला अन्य संस्कृत कवियों में भी दिखाई देती है (यथा विशाखदत्त के मुद्रा राक्षस में—धन्या केयं स्थिता ते शिरसि ?), किन्तु श्रीहर्ष की विशेषता

उनकी सूक्ष्म कवि दृष्टि है, क्योंकि नान्दी का काव्य रस हास (व्यङ्ग्य) का आभास लिये हुए शृङ्गार, बोध तथा आत्मोत्सर्ग की करुणा-त्रयी है। क्या कामदूतियों के इन सिर-तोड़ प्रयत्नों पर कवि के चुभते पदों के संमुख बुद्ध किञ्चिन्मात्र भी विचलित हुए ? स्वयं हर्ष ने स्वीकार किया है, और इसी स्वीकृति में उनकी कथा-वस्तु रसान्तरित[1] हो गई है—

बोध-क्षण में काम-दूतियों की चुभती चोटों में मौन ! ॥१॥
खिंचा रह गया धनुष काम का, विफल वाद्य-नर्तन-रत वीर।
भृकुटि-कम्प-जृम्भा-स्मितिमय नव-मोहिनि् में सुन्दरीं अधीर॥
नत-मस्तक थे सिद्ध-योगि-जन पुलकित, इन्द्र सविस्मय मौन—
बोध-क्षण में अविचल-अविकल मुद्रा में तापस यह कौन ? ॥२॥

बुद्ध ने विवाह को न कभी बन्धन माना और अतएव न उसे हेय ही कहा। महात्मा बुद्ध की करुणा-त्रयी जीमूतवाहन के यौवन, शुश्रूषा-भाव, तथा आत्मोत्सर्ग के त्रि-'विक्रम' में सूक्ष्म कलार्पण द्वारा अन्तर्निहित है। भवभूति के 'एको रसः करुण एव' की मूल प्रेरणा नागानन्द ही है।

नागानन्द में ही क्यों, प्रियदर्शिका तथा रत्नावली में भी कवि की दृष्टि नान्दी के देवी-देवताओं पर शिष्ट-व्यङ्ग्यात्मक ही रही है। पाठक पढ़ता है और मुस्कराता है—

पादाग्रस्थितया मुहुः स्तन-भरेणानीतया नम्रतां
शम्भोः सस्पृह-लोचन-त्रय-पथं यान्त्या तदाराधने।
ह्रीमत्या शिरसीहिता स्व-पुलक-स्वेदोद्गमोत्कम्पया
विश्लिष्यन् कुसुमाञ्जलिर् गिरिजया क्षिप्तो ऽन्तरे पातु वः ॥रत्ना० १. १॥

यह थी पार्वती की विकलता साधना-क्षण में और उधर थी शिवजी महाराज की—'ध्यान व्याजमुपेत्य !' नागा० १. १.—सस्पृह-लोचनता, क्योंकि अधमुँदी आँखों की समाधि तो एक बहाना ही थी ! और सिद्धि क्षण में—

औत्सुक्येन कृतत्वरा, सहभुवा व्यावर्तमाना ह्रिया,
तैस्तैर्बन्धुजनस्य वचनैर्नीता ऽऽभिमुख्यं पुनः।
दृष्ट्वा ऽग्रे वरमात्तसाध्वस-रसा गौरी नवे संगमे
संरोहत्पुलका हरेण हसता श्लिष्टा शिवायास्तु वः ॥रत्ना० १. २॥

प्रथम संगम की वेला में रस-संकर स्वाभाविक है, सह-भू है; किन्तु देवी-देवता, महात्मा बुद्ध, काम को भले ही पराजित कर लें, कवि (श्रीहर्ष) के कटाक्ष से नहीं बच

---

१. अर्थात् 'बौद्ध' करुणा के (द्वितीय) 'पूरक' पार्श्वनाथ के रूप में।

सकते। 'साध्वस' भी एक रस है ! वः शिवाय अस्तु—पार्वती शिव के लिये है, किन्तु कवि द्वारा रस-'साधारणीकृत' होकर कन्या के साध्वस-रस का आनन्द सभी-किसीको मिल रहा है ! कुमारी की तपस्या-यातना तथा सिद्धि (सुहाग-रात) का रस ले लिया; विवाह मण्डप की झाँकी लीजिये—

धूमव्याकुलदृष्टिर् इन्दुकिरणैराह्लादिताक्षी पुनः
पश्यन्ती वरमुत्सुका ऽऽनतमुखी भूयो ह्रिया ब्रह्मणः।
सेर्ष्या पादनखेन्दुदर्पणगते गङ्गां दधाने हरे—
स्पर्शादुत्पुलका, करग्रहविधौ गौरी शिवायास्तु वः ॥प्रिय० १. १॥

इसी नान्दी का तृतीय चरण 'मुद्राराक्षस' की नान्दी[1] का आधार है—परन्तु वहाँ ईर्ष्या पार्वती और शशिकला में है, विवाह के अनन्तर मधु-मास में, कभी—

पादावष्टम्भसीदद्वपुषि दशमुखे याति पातालमूलं।
क्रुद्धो ऽप्याश्लिष्टमूर्त्तिर् भयघनमुमया पातु तुष्टः शिवो वः ॥प्रिय० १. २॥

किस 'रसीली' उद्धतता पर रावण को दण्ड-स्वरूप एक वर मिल गया[2] !

हर्ष की कला में नान्दी की ध्वनि तथा नाटक की प्रगति में परस्पर संगति के अतिरिक्त नान्दी तथा भरतवाक्य की परस्पर संगति भी स्वतः विशिष्ट होती है। प्रियदर्शिका तथा रत्नावली का अभिनय वसन्तोत्सव पर हुआ था, नागानन्द का

---

१. मुद्राराक्षस, १. १.—

'धन्या केयं स्थिता ते शिरसि'—शशिकला, किं नु नामैतदस्याः ?
नामैवास्यास्तदेतत्...।

दोनों नाटकों के पूर्ववर्ती, महाकवि कालिदास मेघदूत में संकेत छोड़ गए थे—

गौरी-वक्त्रभृकुटिरचनां या विहस्यैव फेनैः
शम्भोः केश-ग्रहणमकरोदिन्दुलग्नोर्मिहस्ता ॥पूर्वमेघ, ५४॥

२. कालिदास-मेघदूत, पूर्वमेघ—

"गत्वा चोर्ध्वं दशमुखभुजोच्छ्वासितप्रस्थसन्धेः ॥६२॥"
"त्वामासाद्य स्तनितसमये मानयिष्यन्ति सिद्धाः
सोत्कम्पानि प्रियसहचरीसंभ्रमालिङ्गितानि ॥१५॥

धनपति का यक्ष (=कालिदास) को 'शाप' भी तो 'मेघदूत' का प्रेरक होने के कारण 'वरदान' ही है !

शिशुपालवध १. ५०.—

समुत्क्षिपन् यः पृथिवीभृतां वरं वरप्रदानस्य चकार शूलिनः।
त्रसत्-तुषाराद्रिसुता ससंभ्रम-स्वयंग्रहाश्लेष-सुखेन निष्क्रयम् ॥

इन्द्रोत्सव अर्थात् वर्षा-स्वागत पर हुआ। इसलिये बुद्ध, जीमूतवाहन की करुणा-वृष्टि, मलयवती से पाणिग्रहण के अनन्तर, पंचम अङ्क में गरुड़ की अमृतवृष्टि द्वारा नाग-पुनरुज्जीवन तथा भरतवाक्य की वृष्टि (एवं प्रजाजन की सुख-समृद्धि)-याचना में पुष्ट होती है। मूलकथा में जीमूतवाहन ने बाप-दादा से चले आ रहे कल्प-वृक्ष से अन्तिम वर माँगकर उसे मुक्त कर दिया था। इस प्रकार विसृष्ट कल्पवृक्ष ने स्वर्ग से पृथ्वी पर ऐसी पुष्प-वृष्टि की थी कि संसार में कहीं दारिद्र्य न रहा। कल्पवृक्ष की यही पुष्प-वृष्टि ही तो नाटककार ने भारतवाक्य द्वारा प्रस्तुत करते हुए नाटक को भारतीय प्रथा के अनुसार सुखान्त बना दिया है।

कला—

(२) नाटक का अन्तरङ्ग—

नाटक के अन्तरङ्ग में सर्व प्रथम अङ्ग आमुख होता है। किस प्रकार आमुख के द्वारा सूत्रधार नायक अथवा नाटक के प्रथम दृश्य का अवतरण कराता है, कवि प्रायः इस अंश में नवीनता प्रस्तुत करते रहे हैं। प्रियदर्शिका तथा रत्नावली में तो श्रीहर्ष नें, नाटकीय कथावस्तु उदयन-कथाएँ होने के कारण मानों भास का आभार स्वीकार करते हुए, भास-नाटकों की भाँति सूत्रधार के नेपथ्य-रचना-प्रस्ताव द्वारा नाटक का प्रथम दृश्य उपस्थित किया है। नेपथ्य-रचना का प्रस्ताव हुआ तो नागानन्द में भी है परन्तु राजकुमार जीमूतवाहन को, राजपाट छोड़कर वृद्ध (वानप्रस्थ) माता-पिता की शुश्रूषा में वनवास भोगता हुआ देखकर, सूत्रधार रंगमंच से विदा होता है। श्रीहर्ष की विशेषता नाटक के संपूर्ण घटनाचक्र को एक सुसंगत शृंखला में बाँधने की अपनी ही है। वह आमुख तक ही सीमित नहीं।

घटना-संगति—

१. कुछ पात्र तो, यथा चेटी, प्रतीहार, कंचुकी, रंगमंच पर कोई संदेश लेकर ही आते हैं—'आज्ञप्तो ऽस्मि यथा...'।

२. (क) मलयवती और जीमूतवाहन की आँखें चार होती हैं। चेटी को परिहास सूझता है। मलयवती एकदम शङ्कित हो उठती है—कहीं कोई तापस आ निकले और मुझे इस अवस्था में देख ले तो ?... (ततः प्रविशति तापसः)

(ख) मलयवती चेटी को अपना स्वप्न सुना रही है कि गौरी ने वर देकर कल रात उसकी मनःकामना पूरी कर दी है। विदूषक, जो स्वप्न सुन रहा था, जीमूतवाहन को हाथ पकड़कर खींचता हुआ कहता है, चलो हम भी देवी के दर्शन कर आएँ, वह ठीक ही तो कह रही है—'सत्यमेवेषा भणति, वर एव एष (जीमूतवाहनः !) देव्या दत्तः'। और दोनों मलयवती और चेटी के निकट पहुँच जाते हैं।

(ग) प्रथम दर्शन के अनन्तर मलयवती के लिये न रात में चैन है, न दिन में। चांदनी, चन्दनगृह, कदलीवृन्त सभी उसके अन्तस्ताप को बढ़ाते ही हैं। चेटी सब समझती है। विह्वलता में मलयवती पूछती है—सखि, अस्ति को ऽप्यस्य दुःखस्योपशमोपायः? चेटी—भर्तृदारिके, अस्ति, यदि स इहागच्छेत्। (ततः प्रविशति नायको विदूषकश्च)

(घ) जीमूतवाहन ने भी स्वप्न में मलयवती को प्रणयकुपिता प्रेयसी के रूप में पा लिया है। चन्दनलतामण्डप के वातावरण में वही स्वप्न सजीव हो उठता है। 'एषा सा चन्द्रमणिशिला'। चेटी और मलयवती, विदूषक और जीमूतवाहन के वार्तालाप को अधूरा ही सुन पाती हैं। मणिशिला पर उधर जीमूतवाहन स्वप्न-प्रेयसी मलयवती का चित्र बना रहा है, और इधर मलयवती इस अज्ञात प्रेयसी का संकेत पाकर सशङ्क, सेर्ष्य हो उठती है। चित्र-लेखन दृश्य में मलयवती के मन का पूर्ण आविर्भाव इन्हीं दो शब्दों 'एषा सा' पर आश्रित है। मलयवती की विकलता में रस की पूर्णता संभवतः अभी नहीं आई, वह भाई मित्रावसु के लिये विह्वल है। परन्तु चेटी कहती है—गतैव तस्मिन् मनोहरिका। अतः कदाचिद् भर्तृदारको मित्रावसुरिहैवागच्छेत्। (ततः प्रविशति मित्रावसुः)।

(ङ) विवाह के उपरान्त सब कहीं आपानोत्सव की रंगरलियाँ हो रही हैं। चेटी को परिहास सूझा है, और उसने विदूषक का दिवास्वप्न मुद्रा में मुँह काला कर दिया है। जीमूतवाहन और मलयवती की हँसी छूटती है। विदूषक क्रुद्ध होकर चला जाता है। पीछे-पीछे चेटी भी उसे मनाने (के बहाने) चल पड़ती है। नववधू मलयवती काँप उठती है—"हञ्जे चतुरिके, कथं मामेकाकिनीम् उज्झित्वा गच्छसि? चेटी—(जीमूतवाहनमुद्दिश्य, सस्मितम्) एवमेव चिरमेकाकिनी भव। (निष्क्रान्ता)। अब, एकान्त पाकर जीमूतवाहन कहता है—प्रिये, यह तेरा मुख खिला हुआ अरुण कमल ही तो है, "मधु मधुकरः किन्त्वेतस्मिन् पिबन्न विभाव्यते। (मलयवती विहस्य मुखमुन्नमयति)।" परन्तु चुम्बन भारतीय परम्परा के अनुसार रंगमंच पर प्रस्तुत नहीं हो सकता, इसीलिये—"(प्रविश्य) चेटी—(सहसोपसृत्य) एष खलु सिद्ध युवराजो मित्रावसुः कार्यान्तरेण कुमारं प्रेक्षितुमागतः।"

(च) शङ्खचूड बलि होने चला है। उसे अपने कुल का गर्व है। वह इस प्रकार जीमूतवाहन के बलिदान से जीवन-दान पाकर शङ्खपाल के शुभ्र कुल का कलंक नहीं बनेगा। वह रक्तांशुक युगल साथ लेकर मृत्यु से पूर्व भगवान् दक्षिणगोकर्ण की प्रदक्षिणा करने चला जाता है। "जीमूतवाहन—कष्टं न संपन्नमभिलषितम्। तत् को ऽत्राभ्युपायः? (सहसोपसृत्य) काञ्चुकीयः—इदं वासोयुगलम्।"

(छ) जीमूतकेतु यौवन, कीर्ति, राज्य, पुत्र तथा पुत्रवधू आदि गृहस्थ के

संपूर्ण सुखों का आस्वादन करके, अब केवल एक वस्तु की प्रतीक्षा में हैं—"चिन्त्यो मया ननु कृतार्थतया ऽद्य मृत्युः। (प्रविश्य) प्रतीहारः—(सहसोपसृत्य) जीमूतवाहनस्य।"

(ज) "जीमूतकेतुः—देवि, अपि नाम नाग चूडामणिरयं भवेत्? (ततः प्रविशति रक्तवस्त्रसंवीतः शङ्खचूडः) जीमूतकेतुः—(शङ्खचूडमुपसृत्य) वत्स, किं तव चूड़ामणिरपहृता? शङ्खचूडः—आर्य, न ममैकस्य, त्रिभुवनस्यापि।"

जीमूतवाहन की मृत्यु-समाचार की सूचना के लिये कितना करुणापूर्ण वातावरण उपस्थित किया है!

(झ) जीमूतवाहन की आत्म-संतोष मुद्रा को देखकर गरुड़ ने उसे खाना छोड़ दिया है। वह जीमूतवाहन से जानना चाहता है कि वस्तुतः वह है कौन?

"जीमूतवाहनः—एवं क्षुदुपतप्तो न श्रवण-योग्यः। तत्कुरुष्व तावद् अस्मन्मांसशोणितेन तृप्तिम्। शङ्खचूडः (सहसोपसृत्य)—न खलु, न खलु साहसमनुष्ठेयम्। नायं नागः, परित्यजैनम्। मां भक्षय। अहमसौ तवाहारार्थं वासुकिना प्रेषितः।" और उधर जीमूनवाहन का जी बैठ गया, कमबख्त ने आकर सब कुछ किया कराया चौपट कर दिया।

(ञ) जीमूतवाहन को मरा देखकर गरुड़ को इतना पाश्चात्ताप हुआ कि वह अग्निप्रवेश के लिये उद्यत हो गय। परन्तु, "क्व नु खलु वह्निमासादयामि? (दिशः पश्यन्) अमी केचिद् गृहीताग्नय इत एवागच्छन्ति।"

(ट) माँ के सामने पुत्र मरा पड़ा है वह कहती है—अब भी देवता अमृत की दो बूँद टपका दें तो वह जी उठे। "गरुडः—(सहर्षमात्मगतम्) अमृत-संकीर्तनात्साधु स्मृतम्। मन्ये प्रमृष्टमयशः।...अमृतवर्षेण...जीमूतवाहनं...पूर्वभक्षितानस्थिशेषान् आशीविषान् प्रत्युज्जीवयामि।"

३. जिस प्रकार काव्य-समय-शिष्टाचार के अनुसार मित्रावसु के प्रवेश ने जीमूतवाहन को मलयवती के अधर-रस आस्वादन से वञ्चित कर दिया, उसी भाँति चतुर्थ अङ्क में कञ्चुकी तथा प्रतीहार को दो भिन्न सन्देश देकर भेजा गया है। प्रतीहार का काम है मित्रावसु को घर बुला लाए। इसके अनन्तर, अर्थात् जब जीमूतवाहन अकेला रह जाता है तब कञ्चुकी लाल जोड़ा लेकर पहुँच जाता है। शङ्खचूड भी नाटकीय संगति को पूर्ण करते हुए अवसर पर ही गोकर्ण पूजा के लिये क्षणभर ओझल हो जाता है, इसी अवसर में जीमूतवाहन को गरुड़ उठा ले जाता है। तत्पश्चात् रोता-धोता शङ्खचूड ठीक समय पर ही, जीमूतवाहन की मृत्यु से पूर्व पहुँचकर गरुड़ की आँखें खोल देता है और जीमूतवाहन के हृदय में स्वमनोरथ विफल होने की आशंका उत्पन्न कर देता है।

इसी प्रकार दूसरे अङ्क में मलयवती के आत्मघात-उद्योग के अवसर पर जीमूतवाहन तथा विदूषक की निकट उपस्थिति भी नाटकीय-घटना-चक्र की सुसंगत योजना है।

४. पात्रों का अवतरण जिस प्रकार श्लिष्ट हुआ है उसी प्रकार उनका निष्क्रमण भी, यथा—प्रथम दर्शन वेला में विमूढ मलयवती को तापस आकर कहता है कि मध्यन्दिन सवन की वेला बीत रही है।...नायक और नायिका के विलास के लिये एकान्त आवश्यक है। विदूषक का चेटी द्वारा 'उपवर्णन', विदूषक का क्रुद्ध होकर निकल जाना, और चेटी का उसे मनाने जाना स्वाभाविक संगति जुटा देते हैं। परन्तु चुम्बन नाटकीय प्रथा को अभिमत नहीं, सो मित्रावसु आकर नायक को अपने साथ ले जाता है।

५. श्रीहर्ष के अन्य नाटकीय उपकरणों में स्वप्न-संमिलन, स्वप्नानन्तर पाणि-ग्रहण, विरहोत्कण्ठिता प्रेयसी का आत्महत्या उद्योग, और उसी समय नायक द्वारा उसे पाश-मुक्त करते हुए लतापाश को फेंककर उसके बाहुपाश में स्वयं उलझ जाना, लताजाल अथवा कुञ्ज की ओट से रहस्य वार्तालाप सुनना, वैवाहिक वस्त्र-युगल की उपयोगिता, इत्यादि भी सम्मिलित हैं।

दृश्य—

नागानन्द के सम्पूर्ण घटनाचक्र में दो-तीन दृश्य स्मृति-पट पर से उतर नहीं सकते, यथा—

१. चित्र-लेखन दृश्य। इधर नायक स्वप्न-प्रेयसी का चित्र बनाने में तल्लीन है, और उधर नायिका अधूरी बातें सुनकर ईर्ष्या से जली जा रही है। ऊपर से मित्रा-वसु आकर जीमूतवाहन से मलयवती के पाणिग्रहण का प्रस्ताव उपस्थित करता है। जीमूतवाहन का अपने-आपको अन्यासक्त कहकर उसका प्रत्याख्यान मलयवती के लिये जले पर नमक का काम करता है। अब, वह आत्महत्या न करे तो क्या करे ?

२. विवाह के अनन्तर आपानोत्सव के रंग अपने ही हैं। विट तथा उसका चेट मदिरा की मस्ती में नवमालिका को ढूँढ रहे हैं। उधर से मधुकरों से अपने-आप-को बचाने के लिये उपहार के वस्त्र-युगल से घूँघट निकाले बेचारा विदूषक इन मधु-करों के हाथ पड़ जाता है। विट उसे रुष्ट नवमालिका समझकर उसके पाँव पड़कर मनाता है। ऊपर से नवमालिका आ जाती है। बड़ा मनोरञ्जक और परिहासपूर्ण दृश्य बन पड़ता है।......समधी से समधियों जैसी ही ठठोली छिड़ जाती है। विट अपने सेहरे से दो फूल मदिरा के प्याले में डालकर नवमालिका से कहता है—"लै नवमालिका, लै, एन्नूँ पीके अपने बुल्हाँ नाल सुच्ची करके एस बाह्मन नूँ दे दे।"

३. जीमूतवाहन के बलिदान के लिये और गरुड के अवतरण के लिये सन्ध्या

उपयुक्त समय है। प्रतिपदा है। गरुड़ के आगमन से पूर्व विपत्ति के बादल घिर रहे हैं। सामने एक हिम-शिखर सा अस्थि-पर्वत है । समुद्र में ज्वार आने वाली है और एक ओर श्मशानभूमि की बीभत्सता है । गरुड़ स्वाभिमान से वध्यभूमि पर उतर रहा है, और उधर बोधिसत्त्व संतुष्ट है कि आज प्राण-दान से जीवन सफल हुआ। मृत्यु से कुछ क्षण पूर्व तथा मृत्यु वेला में 'एको रसः करुण एव'—जीमूतकेतु, कनक-देवी, मलयवती तथा शङ्खचूड और गरुड़ मानो जीमूतवाहन के 'महा-परिणिब्बाण' के साक्षी होने के लिये ही आ इकट्ठे हुए हैं। अद्भुत सन्नाटा छाया हुआ है—नायक का धैर्य और शान्ति, 'अद्भुत करुणा' का वातावरण और गरुड़ की विवशता और पश्चात्ताप—संपूर्ण दृश्य इतना हृदय-स्पर्शी है कि कवि के पास उसके लिये शब्द ही नहीं। किंकर्तव्यविमूढ गरुड़ की अवस्था—सब रो धो रहे हैं परन्तु—वह निःस्तब्ध बैठा बगलें झाँक रहा है !—पाठक इसकी केवल कल्पना ही कर सकता है।

४. करुणा के वातावरण में जहाँ गरुड़ की काया पलट रही है वहाँ मलयवती का विवाह के एक दिन पश्चात् ही सुहाग लुटा जा रहा है। जीमूतवाहन के वृद्ध माता-पिता, शङ्खचूड का पश्चात्ताप, और वृद्धा माता की पुकारों ने दृश्य को सर्वथा ही आर्द्र, अश्रुमय बना दिया है। परन्तु एक बात इस संपूर्ण दृश्य में अखरती ही रहती है कि कवि ने नागों का वर्णन सचमुच के साँपों का-सा ही किया है। नाग भी तो सिद्धों, विद्याधरों की भाँति एक पार्वतीय गण ही हैं !

परिहास—

१. श्रीहर्ष की परिहास-बुद्धि से स्वयं भगवान् बुद्ध भी नहीं बच सके। (नान्दी, १. १)

२. प्रथम दर्शन की वेला में मलयवती मूक है । चेटी को परिहास सूझता है—अभ्यागत का दो शब्दों से स्वागत तो कर देती ? चलो, मैं ही किये देती हूँ।

३. आपान-दृश्य में शेखरक विदूषक से समधियों की-सी ठठोली करता है। वह कहता है—"नवमालिका, आ, तूँ एहदे कोल बैठ जा।" मैं तुहानूँ दोहाँ नूँ मनौनाँ आँ।...लै, नवमालिका, तूँ एन्नूँ पीके अपने बुल्लाँ नाल सुच्ची करके एस बाह्मन नूँ दे दे।"

४. रत्नावली में संकेत अङ्क का परिहास अपना ही है। सागरिका और उसकी सहेली ने विदूषक की सहायता से यह आयोजना बनाई है कि वासवदत्ता और उसकी चेटी के रूप में उदयन से मिला जाए । परन्तु भेद खुल जाता है, और स्वयं वासवदत्ता संकेत स्थान पर पहुँच जाती है। उदयन उसीको प्रच्छन्न वेष में सागरिका समझ बैठता है......। वासवदत्ता रुष्ट होकर चली जाती है। उसी समय वासवदत्ता के वेष में सागरिका आ जाती है।......उदयन सागरिका के साथ प्रेम आलाप में

मग्न हो जाते हैं कि ऊपर से फिर वासवदत्ता अपनी धृष्टता के लिये क्षमा माँगने आ पहुँचती है। परन्तु वहाँ पहुँचते ही प्रणय की नोंक-झोंक देखकर उसकी क्षमा-याचना-बुद्धि रोष में परिणत हो जाती है। [बरुआ की फ़िल्म 'ज़िन्दगी' इत्यादि में Mrr. X और Vagabond (यमुना और सहगल) में यही घात-प्रतिघात चलते रहते हैं]।

ध्वनि—

श्रीहर्ष के नाटकों में ध्वनि सूक्ष्म होती है, इसीलिये केवल रसिक ही उसका रस-पान कर सकते हैं। इसका दिग्दर्शन हम नान्दी के प्रकरण में कर आए हैं। संस्कृत के अन्य नाटककारों में ध्वनि प्रायः नान्दी तथा प्रथम अङ्क में ही समाप्त हो जाती है। परन्तु श्रीहर्ष की ध्वनि पग-पग पर, यहाँ तक कि नाटक के अन्तिम दृश्य तक, स्फुरित होती चलती है। प्रथम अङ्क में चेटी मलयमती को समझाती है—'इस निष्करुण मूर्त्ति के सामने याचना से लाभ ?' जीमूतवाहन की मृत्यु से गौरी के वरदान के होते हुए भी, मलयवती एक बार तो विधवा हो ही जाती है। नान्दी की ध्वनि के अनुसार जीमूतवाहन भी इस प्रकार 'मिथ्या-कारुणिक' ही तो ठहरते हैं।......विवाह-विधि से पूर्व नेपथ्य में सिद्ध-लोक में स्नान वेला की घोषणा करते हुए सभी की मङ्गल-कामना की है। संभवतः इस द्वितीय नान्दी की ध्वनि पूर्व सब ध्वनियों की अमङ्गल-सूचनाओं को निरस्त कर देती है।......जीमूतवाहन के शरीर का भार अनुभव करते हुए गरुड़ कहता है—

नागानां रक्षिता भाति गुरुरेष यथा मम।
तथा सर्पाशनाशङ्कां व्यक्तमद्यापनेष्यति ॥४. २८॥

और सचमुच जीमूतवाहन न केवल शङ्खचूड की प्रत्युत संपूर्ण नाग लोक की रक्षा करने में समर्थ होता है। गरुड़ जीमूतवाहन से उपदेश ग्रहणकर नूतन-मार्ग पर अग्रसर होता है, और नाग-भक्षण की अपनी पुरानी आदत को सदा के लिये छोड़ ही नहीं देता अपि तु अमृत-वर्षा से पूर्व-भक्षित नागों को पुनरुज्जीवित करके अपना सब पुराना कलङ्क धो देता है।

नाटक के अन्य उपकरण—

ध्वनि की भाँति अन्य नाटकीय उपकरणों को भी श्रीहर्ष ने अपने ही ढंग से अपने नाटकों में उपयुक्त किया है। अन्य नाटकों में एक ही रस होता है, अन्य रस संचारी बनकर उसीकी पुष्टि करते हैं। नागानन्द का प्रथम दृश्य तपोवन में—शकुन्तला-दुःष्यन्त की भाँति—जीमूतवाहन तथा मलयवती के गान्धर्व-प्रेम से आरम्भ होता है। कुछ देर के लिये नायिका का मन शङ्कित हो जाता है। किन्तु सुगमता से ही विवाह हो जाता है। दोनों परिवारों के सम्बन्धी आपानोत्सव में मस्त हैं।

इसी समय बोधिसत्त्व का शृङ्गार आत्मोत्सर्ग की उद्वलता द्वारा दान-वीर रस में परिणत हो जाता है। यही दान-वीर अन्ततोगत्वा करुण-रस बनकर संपूर्ण विश्व में छा जाता है।

नाटक की पाँच प्रकृतियों, पाँच अवस्थाओं, पाँच संधियों का अनुकरण हर्ष की मौलिकता एवं उदारता के अनुकूल नहीं उतरता। जहाँ शृङ्गार रस स्वभावतः दान-वीर में, दान-वीर धर्म-वीर में, तथा धर्मवीर करुण-रस तथा परोपकार में क्रमशः परिणत होता चले, ऐसे नाटक में अवस्था-संगति तो आ सकती है परन्तु प्रकृति के इस प्रकार तीन अथवा चार रसों में एक-साथ आप्लावित होने के कारण नाटकीय संधियों का तो अवकाश ही नहीं रह जाता।

चरित्र-चित्रण—

१. विदूषक—श्रीहर्ष के नाटकों में नाटककार का सब से अधिक स्वाभाविक तथा नाटकीय रूढ़ियों के विपरीत सर्वथा मौलिक चित्रण विदूषक का हुआ है। नागानन्द में जब मलयवती और जीमूतवाहन का गान्धर्व-सम्बन्ध हो गया, केवल उसी एक अवसर पर ही उसे खाने-पीने की स्मृति आई है—

"चलो, मेरे मित्र की इच्छा पूर्ण हुई, अथवा बहिन जी की। या दोनों में से किसीकी भी नहीं, यह तो केवल (अपने पेट की ओर संकेत करते हुए) इस ब्राह्मण की इच्छा पूर्ण हुई है।"

एक बार पहले भी—

"दृष्टं यत्प्रेक्षितव्यम्। इदानीं मध्याह्नसूर्यसंतापद्विगुणित इव मे जठराग्नि-र्धमधमायते। तन्निष्क्रामावः, येनातिथिर् भूत्वा मुनिजनसकाशाल्लब्धैः कन्दमूलफलैरपि तावत् प्राणधारणं करिष्यामि।"

पर यहाँ उसकी भूख स्वाभाविक है, लड्डुओं का लालच नहीं।

श्रीहर्ष के नाटकों में विदूषक सचमुच नायक का गान्धर्व-मित्र है। मलयवती और जीमूतवाहन की आँखें चार होती हैं और वह कहता है आख़िर मेरे मित्र पर कामदेव के, नहीं नहीं मेरे, तीर चल ही गए। कुछ क्षण पूर्व ही तो वह उसे समझा रहा था—'छोड़ो जी, इन बुड्ढों को जो जीते जी ही मुरदा हैं, इनकी सेवा से लाभ? जवान बनो, दोस्त जवान' और ओट से मलयवती का स्वप्न सुनकर मित्र को हाथ से घसीटता हुआ ले जाकर कहता है—'देखा, वह सच ही तो कह रही है, देवी ने इसे ही तो वरदान रूप में यहाँ भेजा है'।

आपानोत्सब में भौंरे मलयवती के होंठों पर नहीं मँडराने गए, उन्हें भी इसी-से छेड़ख़ानी सूझी है। परन्तु किस्मत का मारा एक प्रकार के मधुकरों के पंजे से बच-

कर दूसरी ही प्रकार के 'मधु-करों' के पाले पड़ जाता है।......चेटी के संमुख वह अपने-आपको ब्राह्मण भी सिद्ध नहीं कर सकता, उसका यज्ञोपवीत टूट चुका है; वेदाक्षर, जो दो-एक उसे आते भी होंगे, मदिरा की दुर्गन्ध से वे भी भाग गए और वह कोरे का कोरा रह गया। विवश बेचारे को चेटी के आगे नाक रगड़नी पड़ी !

एक ओर चेटी इससे प्रेम-लीला करने चली थी—विदूषक यही समझ रहा था—किन्तु उसने इसका मुँह काला कर दिया।

काले ब्राह्मण के हृदय में प्रेमांकुर फूट भी निकलें, गान्धर्व लीला में तो उसका मुंह ही काला होता है।

रत्नावली में सागरिका और उदयन के मिलन की योजना इसीके मस्तिष्क की उपज है। विदूषक से तो बृहस्पति भी हार जाए। और चेटियाँ चकित हैं, कि आज तक तो सुनते आए थे कि प्रेमी-प्रेयसियों के विषय में यौगन्धरायण ही सिद्ध-हस्त है, पर आज तो मैत्रेय ने उसे भी मात कर दिया !.... वासवदत्ता पर भेद खुल गया है परन्तु फिर भी सागरिका और उदयन का मिलन होकर ही रहा; विदूषक ने कहा सँभलकर रहो, कहीं वासवदत्ता बवंडर बनकर आ गई, फिर किसीकी खैर नहीं !

संस्कृत के अन्य नाटकों के विपरीत हर्ष के विदूषक नपुंसक नहीं हैं, वे नारी, मदिरा आदि का रस ले सकते हैं। नवमालिका के होंठों से सुच्ची की हुई मदिरा में रस अपना ही है, चाहे पीकर नहाना ही क्यों न पड़े; आखिर है तो ब्राह्मण ही ना ?

विदूषक परिहास का उपलक्षण होता हुआ नवमालिका तथा शेखरक की संगति के अनुकूल ही है और राजकीय अन्तः-पुर का सुयोग्य पात्र भी है। परन्तु स्मरण रहे कि मूल कथा के जिस पात्र को हर्ष ने नायक का परम मित्र विदूषक बनाया है वह कथासरित्सागर में एक मुनिपुत्र है। हर्ष के कटाक्ष मलयवती पर, बुड्ढे खूँसटो पर, भगवान् बुद्ध पर, काले-कलूटे (कदाचित् मोदक-वृत्ति-शून्य दुबले-पतले भी) ब्राह्मण अथवा मुनिपुत्र पर एक से पड़ते हैं।

२. गरुड़—जीमूतवाहन की बलि से पूर्व गरुड़ अपने आगमन द्वारा संपूर्ण वातावरण को आतंक से भर देता है। परन्तु मृत्यु के मुख में भी जीमूतवाहन की आत्म-संतुष्टि उसकी काया पलट देती है। वह निष्करुण से सकरुण बन जाता है। यह महान् आत्मोत्सर्ग एक नवीन अनुभूति द्वारा उसके रोम-रोम को पश्चाताप और सद्भावना से पूर्ण कर देता है। उसका हृदय-परिवर्तन अन्तस्तल पर गहरी चोट लगने के कारण गम्भीर और सच्चा है, दिखावे का नहीं। गरुड़ का पश्चात्ताप श्रीहर्ष की अपनी कृति है मूलकथा में गौरी की भाँति वह भी जीमूतवाहन से संतुष्ट होकर उसे वर माँगने के लिये कहता है। परन्तु जीमूतवाहन को जिलाने की उसकी साध श्रीहर्ष का कवि-न्याय सहन नहीं कर सकता। गरुड़ की अमृतवर्षा के पूर्व ही भगवती

गौरी मलयवती का वर पूरा करती हुई उसे जीवित कर देती है।

न गरुड़ कोई पक्षी है, न शंखचूड़ कोई नाग। नाटकीय कथा-वस्तु में दोनों पात्र हैं--एककी हृदय-हीनता पर मन खीझ उठता है तो दूसरे की विवशता पर हृदय बरबस पसीज जाता है। शंखचूड़ किसी भी अन्य की बलि द्वारा अपने प्राण बचाकर अपने उज्ज्वलवंश को कलङ्क नहीं लगा सकता। एक कथा में तो उसके चरित्र को जीमूतवाहन से भी ऊँचा ठहराया गया है—क्योंकि जीमूतवाहन की बलिदान भावना जन्म-जन्मान्तर सिद्ध है, परन्तु शंखचूड़ अपने स्वाभाविक शत्रु गरुड़ से एक बार बचकर भी फिर भागता-भागता आकर उसके सामने अपनी छाती खोल देता है--बलि का बकरा मैं हूँ, यह नहीं है, तुम अन्धे हो ?

३-४. जीमूतवाहन-मलयवती—जीमूतवाहन आत्म-बलिदान का पुतला है इसलिये शंखचूड़ की माँ उसे अपना पुत्रवत् ही नहीं, पुत्र से भी अधिक प्यारा समझती है। (उसके बाप-दादा स्वार्थी थे, किन्तु इस परार्थ के पुतले ने कल्पवृक्ष से विश्वभर को दारिद्र्य-दुःख से मुक्त कराकर, स्वयं कल्पवृक्ष को भी छुट्टी दे दी। वह युवा है, मलयवती के सर्वथा अनुकूल है परन्तु यह उसका गुण नहीं है। जीमूतकेतु ने अनेकों मनोरथों से उसे पाया था--

तं प्रार्थ्य देवतात्मानं स राजा तत्प्रसादतः।
प्राप जातिस्मरं पुत्रं बोधिसत्त्वांश-संभवम् ॥
दानवीरं महासत्त्वं सर्वभूतानुकम्पिनं।
गुरु - शुश्रूषण - परं नाम्ना जीमूतवाहनम् ॥

(कथासरित्सागर, ९०. ८-९)

विवाह के उपरान्त भी संसार उसके लिये असार है। वह चकित है कि शेषनाग की सहस्र जिह्वाओं में से एक भी फूटी ज़बान ऐसी न निकली जो कह सकती कि इस नाग-शिशु के स्थान पर मेरी ही बलि ले लो! और गरुड़ के विषय में उसका विचार है—

'चञ्चुर्नैव खगाधिपस्य हृदयं वज्रेण मन्ये कृतम्।'

परन्तु उसे विश्वास है कि वृद्धा की करुण पुकार सुनकर—

'अकरुण-हृदयः करुणां कुर्वीत भुजङ्ग-शत्रुरपि।'

इसी उदात्तता का एक रूप गरुड़ ने आकर स्वयं देखा, और उसके मृत्युमुख में उज्ज्वल आत्म-संतोष पर वह मुग्ध हो उठा और चकित रह गया कि—

'दृष्टिर्मय्युपकारिणीव निपतत्यस्यापकारिण्यपि।'

मलयवती संभवतः गुण-कर्म-स्वभाव की दृष्टि से जीमूतवाहन की पत्नी बनने योग्य न हो। वह युवती है, उसके सब काम गौरी के प्रसाद से चलते हैं। वीणा से

वह स्तुति गौरी की कर रही थी किन्तु, उसके मन की पुकार, सुन जीमूतवाहन ने ली। आँखें चार हुईं और तब से शय्या, चन्दनलतागृह, कदलीवृन्त, चाँदनी—सब जैसे उसे काटने को दौड़ते हैं। उसकी सुधि मारी गई है, जाना मणिशिला की ओर है किन्तु पैर उसके देवी मन्दिर की ओर पड़ते हैं। चित्र-लेखन दृश्य में सिद्ध-कन्या होते हुए भी वह यह कभी सहन नहीं कर सकती कि जिसपर वह स्वयं मरती हो उसे किसी अन्य से प्रेम हो। ईर्ष्या स्त्री का स्वभाव है। परन्तु तपस्या आखिर फल लाती है—'क्लेशः फलेन हि पुनर्नवतां विधत्ते'। अब वह नववधू है। जीमूतवाहन के साथ बैठते वह लजाती है—

दृष्टा दृष्टिमधो ददाति कुरुते नालापमाभाषिता।
शय्यायां परिवृत्य तिष्ठति बलादालिङ्गिता वेपते।
निर्यान्तीषु सखीषु वासभवनान् निर्गन्तुमेवेहते।

परन्तु जीमूतवाहन को इसी कारण वह और भी प्यारी लगती है। किन-किन तपस्याओं के अनन्तर उसने उसे पाया है! उसकी दृष्टि में—

एतत् ते भ्रूलतोल्लासि पाटलाधरपल्लवम्।
मुखं नन्दनमुद्यानम् अतो ऽन्यत्केवलं वनम्॥
स्मित-पुष्पोद्गमो ऽयं ते दृश्यते ऽधर-पल्लवे।
फलं तु जातं मुग्धाक्षि पश्यतश्चक्षुषोर्मम॥

और कवि के साधारणीकरण द्वारा 'पश्यतश्चक्षुषोस्तव !' यही नवदम्पति का प्रथम तथा अन्तिम मिलन है। मूलकथा में जब जीमूतवाहन को लेकर गरुड़ उड़ता है, उस समय जीमूतवाहन की चूड़ामणि मलयवती के चरणों में आ गिरती है, परन्तु श्रीहर्ष जीमूतवाहन की पितृ-भक्ति के समर्थन में उसे उसके पिता के चरणों में गिराते हैं।

चूड़ामणिं चरणयोर्मम पातयता त्वया।
लोकान्तरगतेनापि नोज्झितो विनयक्रमः॥५. १२॥

अब कथा का मुख्य पात्र जीमूतवाहन का बोधिसत्त्व रूप है, एक लौकिक सद्यो-विवाहिता पत्नी नहीं। स्वयं मलयवती भी जीमूतवाहन की करुणा का पात्र ही तो थी—बुद्ध मिथ्या-कारुणिक हो सकता है, गौरी निष्ठुर हो सकती है, किन्तु जीमूतवाहन बोधिसत्त्व नहीं (अभी वह अति-मानव नहीं बना)। आत्महत्यार्थ फाँसी लगाने से पूर्व स्वयं मलयवती ने ही तो उसे पुकारा था—

हा नाथ विश्व-विख्यात-करुणेनापि न त्वया।
कथमस्मि परित्राता देव जीमूतवाहन॥कथासरित्० ९०.७४॥

अब मलयवती की परीक्षा का समय है। वह स्त्री-स्वभावतः कातर है। उसके

मन में चित्र-लेखन दृश्य की भाँति अब नूतन घात-प्रतिघात उठेंगे ही—

(i) अहं तु पुनर्मुहूर्तकमपि आर्यपुत्रमपश्यन्ती अन्यदेव किमप्याशंके।

(ii) देवी—(सहर्षं, मलयवतीमालिङ्ग्य) अविधवे, धीरा भव। न खलु त ईदृशी आकृतिर्वैधव्य-दुःखमनुभवितुम्।

मलयवती—(सहर्षम्) अम्ब, तवैषाशीः (पादयोः पतति)।

(iii) मलयवती—हा, कथं सत्यीभूतं मे दुश्चिन्तितम्?

(iv) मलयवती—(बद्धाञ्जलिरूर्ध्वं पश्यन्ती) भगवति गौरि, त्वयाज्ञप्तं विद्याधरचक्रवर्ती ते भर्ता भविष्यतीति कथं तन्मम मन्दभाग्यायास् त्वमप्यलीकवादिनी संवृत्ता?

किन्तु नहीं, देवता जीवन में धोखा भले ही दे जाएँ, काव्य में उन्हें ध्वनि-पूर्ति के अर्थ कवि-न्याय के अधीन ही रहना पड़ता है। (ततः प्रविशति ससंभ्रमा गौरी)।

५-६. जीमूतकेतु-कनकदेवी—श्रीहर्ष ने जीमूतवाहन की माता का नाम न देकर उसे केवल 'देवी' शब्द से ही संबोधित किया है। सोमदेव की कथा में उसका नाम कनकदेवी है। नागानन्द में पुत्र की मृत्यु के अनन्तर वातावरण की करुणार्द्रता को जीमूतकेतु-दम्पती का अग्नि-चयन और भी सान्द्र कर देता है। यही इस वृद्ध वानप्रस्थ दम्पती की प्रस्तुत नाटक में नाटकीय उपयोगिता है। कथासरित्सागर में कल्प-वृक्ष की मुक्ति जीमूतवाहन ने माता-पिता की अनुमति से ही की थी, और जब बूढ़े माँ-बाप ने देखा कि जिसके लिये हम यह राज्य-वैभव छोड़ चले हैं, उसीकी इसमें कोई आसक्ति नहीं, तब उन्होंने प्रसन्नता-पूर्वक जीमूतवाहन को भी अपने साथ वन में चलने की अनुज्ञा दे दी। नागानन्द में केवल एक प्रतीहार को ही जीमूतकेतु-दम्पती के वानप्रस्थ-रूप के दर्शन हुए हैं—"जीमूतकेतु एक शुभ्र रेशमी दुपट्टा पहने हैं। दुपट्टे पर तरङ्गें उठ रही हैं। पास कनकदेवी की गङ्गा के समान शुभ्र मूर्त्ति विराजमान है। मलयाचल की वेला के समान चरणों में मलयवती विद्यमान है" (५. २)। जीमूतकेतु सचमुच समुद्र हैं। करुणा के अथाह समुद्र, विशालहृदय समुद्र!

७. कञ्चुकी—कञ्चुकी की नाटकीय उपयोगिता जीमूतवाहन को उसकी बेबसी में विवाह-मंगल का लाल जोड़ा पहुँचाने में है। उसका अपना चरित्र सभी अन्तःपुर के बुड्ढे कर्मचारियों का प्रतिरूपक है—

अन्तःपुराणां विहित-व्यवस्थः
पदे-पदे ऽहं स्खलितानि रक्षन्।
जरातुरः संप्रति दण्ड-नीत्या
सर्वं नृपस्यानुकरोमि वृत्तम्॥४. १॥

शब्द-गुण—

श्रीहर्ष की अन्तरङ्ग तथा बहिरङ्ग शैली से हम परिचित हो लिये। हमने देखा कि किस प्रकार नाटकीय उपकरणों तथा साहित्य की उपेक्षिताओं के उपयोग में वे सिद्ध-हस्त हैं। किन्तु क्या भाषा तथा नाटकोपयोगी अन्य कलाओं में भी उनका यथा-योग्य प्रवेश है ? मलयवती के तन्त्री-उपवीणन में जो व्यञ्जन धातु, त्रिविध लय, त्रिविध यति, त्रिविध वाद्यविधि का सूक्ष्म दर्शन उपस्थित किया है, तथा मलयवती के गीत सुनने में निःस्तब्ध, व्याजिह्माङ्ग हिरणों को उपस्थित किया है—ये सब बातें श्रीहर्ष की कला-प्रियता, प्रकृति-अन्तस् के साक्षात्कार तथा कला-परिचय की बोधक हैं। भाषा के विषय में यह कह सकना तो कठिन है कि संस्कृत अथवा प्राकृत पर उन्हें वही अधिकार था जो उनके राज-कवि बाणभट्ट को था (उनकी शैली को वैदर्भी आदि नामों से, तथा प्राकृत को शौरसेनी आदि नामों से विशिष्ट करना अनुचित होगा)। दोनों समकालीन थे, किन्तु बाणभट्ट की परिहास-ग्रहण बुद्धि, गाथा-विज्ञान, भाषा-विज्ञान, मनो-विज्ञान आदि का सर्वाङ्ग परिचय अनुपम है। परन्तु नागानन्द नाटक में ही भाषा प्रयोग में भी श्रीहर्ष की लेखन-चातुरी स्वतः विशिष्ट है। विचार-दृष्टि से देखें, तो जहाँ कुछ प्रेरणाएँ उन्हें अपने पूर्ववर्ती कवि-नाटककार कालिदास से उपलब्ध हुईं, वहाँ उनकी मौलिकता परवर्ती कवि भवभूति, विशाखदत्त, आदि के लिये उपजीव्य वस्तु बन ही गई थी। प्रथम हम उनकी शब्द-चातुरी को ही लेते हैं।

शब्द—कुछ शब्द श्रीहर्ष की शैली के इतने अन्तरङ्ग हैं कि वे अन्य कवियों ने प्रयुक्त ही नहीं किये, यथा—पिष्टातक, आयल्लक। कोष में 'पिष्टातक' अनुपलभ्य है, प्रकरण में इसका अर्थ स्पष्ट है : पिष्ट + अत + क, अर्थात् पुष्पादि का उड़ता हुआ पराग, *Cf.* Panjabi पीठया होया अट्टा। आयल्लक का अर्थ कोषकार उत्कण्ठा, उत्सुकता आदि करते हैं, किन्तु इसकी ध्वनि भी पंजाबी शब्दों की सी है, ध्वन्यर्थता-बुद्धि से हम इसका अर्थ (हार्दिक) गाढ-स्नेह की (आकुल) परिपूर्णता समझ पाए हैं। (*Cf.* the '*la-la-la*', of songs, and the '*tirra-lirra*' of Tennyson)। इसी प्रकार आकृति शब्द में मलयवती का परिपूर्ण यौवन समाविष्ट हैं, न कि केवल उसका मुखड़ा—"न खलु त ईदृशी आकृतिर् वैधव्य-दुःखमनुभवति।" पंजाबी में भी "एहो जई मुटयार नूँ ए रँडेपा !' हर्ष कभी किसी हार्दिक अनुभूति के लिये 'स्वाभाविक', 'प्राकृतिक' शब्द का प्रयोग नहीं करते, उसके वर्णन के लिये उनका प्रिय शब्द है 'सह-भू' *Cf.*—पंजाबी—'नाल ई जम्मे ने'। चेटी को ठठोली सूझती है, तो मलयवती कहती है "नी चुलबुलिये, तूँ एह की कीता ए ?" एह वी कोई हासे दा वेला सी ?"—'परिहास-शीले, मैवं कुरु'। आपानोत्सव में भी विट ने विदूषक से समधियों का-सा ही परिहास किया है—'सम्बन्धिकानुरूपः परिहासः कृतः'। शेखरक

नवमालिका से कहता है—नवमालिका, लै, एनूँ पीके अपने बुल्लाँ नाल सुच्ची करके बाह्मन नूँ दे दे (नवमालिके, पीत्वा चोक्षित्वा देह्येतदेनम्)। आपनोत्सव का हँसी-ठट्ठा, शब्द, मुहावरे, वातावरण सब कुछ पंजाबी हैं। जीमूतवाहन जब मित्रावसु के प्रस्ताव को ठुकरा देता है तब मित्रावसु ने कहा है—'एवं निवेदितात्मनो ऽस्मान् प्रत्याचक्षाणः कुमार एव बहुतरं जानाति,' (असाँ ताँ आपने वलों कह छड्डेया, तुसाँ न मन्नया, तुसीं आप ई सयाने ओ)। गरुड़ से कहता है—पहलाँ रज के सुनन जोगे (श्रवण-योग्यः) ताँ हो जाओ। सूत्रधार नटी को बुलाते हुए कहता है 'परपुरुष-चन्द्र-कमलिनि'—वाह, चन्द वर्गे पराए पुरख (अर्थात अतिथि, श्रोता-जन) आए बैठे ने ते तूँ कमलिये अन्दर लुकी बैठी एँ।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हर्ष का अपना देश पंजाबी बोली का देश है, जहाँ आजकल पंजाबी बोली जाती है। हर्ष के दिनों की संस्कृत, प्राकृत, तथा अपभ्रंश परम्परा आजकल की पंजाबी का मूल है। ये पंजाबी विशेषताएँ बाण के काव्य में भी कहीं-कहीं मिलती हैं यथा—बहुकरी = बौखर (बुहारी)। परन्तु इनकी पंजाबी में सिन्धी की पुट नहीं है, जिससे प्रमाणित होता है कि उनकी भाषा मूलतः ग्रियरसन के इनर बैंड (Inner Band) वर्ग की भाषा थी, आउटर बैंड की नहीं। यह हिन्दी के निकटतर थी, 'मुलतानी' अथवा 'लहँदा' से दूरतर। परम्परा भी तो श्रीहर्ष को कुरुक्षेत्र, थानेसर का ही मानती है।

श्रीहर्षनाटकचक्र का नाटककार कौन है इस प्रश्न पर विचार-विनिमय प्रस्तुत करते हुए हम ऊपर कह आए हैं कि धावक कोई कवि नहीं हुआ, बाण-भट्ट इन नाटकों का लेखक हो नहीं सकता। और कि इतने श्रीहर्षों में से केवल महाराज श्रीहर्षवर्धन ही इनके रचयिता हो सकते हैं। एक और श्रीहर्ष भी हैं, जिन्होंने भाऊदा जी, फ़र्ग्युसन की कल्पना के अनुसार, कोरूर की लड़ाई (५८७ ई०) में शकों को परास्त करके विक्रमादित्य की उपाधि अर्जित की थी, (और ६०० वर्ष पूर्व ! विक्रमादित्य संवत् की स्थापना की थी)। एक टीकाकार (मधुसूदन-१७११ वि०) ने तो लिख भी दिया कि रत्नावली का रचयिता उज्जयिनी का श्रीहर्ष था (देखो ऊपर—श्रीहर्ष-नाटकचक्र का रचयिता—बाह्यसाक्षी, पृष्ठ *vi*)। इस प्रकार प्रस्तुत नाटकचक्र के रचयिता के विषय में यह चतुर्थ हर्ष एक नई समस्या उपस्थित कर देते हैं। परन्तु इसका प्रत्याख्यान इ-त्सिंग और य्वान् च्वाँग की साक्षियों द्वारा—कि नागानन्द न केवल श्रीहर्ष ने रचा और उसका अभिनय कराया, अपि तु जीमूतवाहन के पात्र में स्वयं अभिनय किया—यदि विश्वसनीय न भी समझा जाए, तो भी भाषा की युक्ति के आधार पर इस नाटक-त्रयी के रचयिता का मध्य भारत, उज्जैनवासी होना असंभव है। वह निश्चय ही पाञ्चाल देशीय था। सूक्ष्म तुलना पर श्रीहर्ष की शैली काव्य-सम्प्रदाय की शास्त्रीय रीतियों में पाञ्चाली ही उतरेगी। श्रीहर्ष की श्लेष तथा

अर्थगौरव-प्रधान वृत्ति बाण के निम्न-लिखित लक्षण के अनुसार भी उत्तर-पश्चिम-'स्थानीय' ठहरती है—

'श्लेष-प्रायमुदीच्येषु प्राच्येष्वर्थ-गौरवम् ।'

नान्दी की सूक्ष्म ध्वनि में अर्थ-गौरव पुष्ट होता है तो चतुर्थ अङ्क की समाप्ति पर गरुड़ की उक्ति में अर्थ-गर्भित श्लेष की सुन्दरता अनुपम है—

नागानां रक्षिता भाति गुरुरेष यथा मम ।
तथा सर्पाशनाशङ्कां व्यक्तमद्यापनेष्यति ।।४. २८।।

श्रीहर्ष के श्लेष में रस है, शब्दालङ्कारमात्र नहीं । इस श्लेष का रस केवल पंजाबी ही दे सकती है—आपनोत्सव में बेचारा विदूषक एक प्रकार के मधुकरों से बचता है तो दूसरे प्रकार के मधुकरों के चुंगल में जा फँसता है ।—

अमी गीतारम्भैर्मुखरितलतामण्डपभुवः
परागैः पुष्पाणां प्रकटपटवासव्यतिकराः ।
पिबन्तः पर्याप्तं सह सहचरीभिर्मधुरसं
समन्तादापानोत्सवमनुभवन्तीह मधुपाः ।।३. ८।।

यह मौज-बहार विद्याधर और सिद्ध लूट रहे हैं कि भौंरे ? श्लोक का प्रत्यक्षर श्लिष्ट है, किन्तु सुबन्धु के श्लेष के विपरीत, सरस है । आपानोत्सव दृश्य का अनुवाद भाषा, वातावरण, तथा मानव-प्रवृत्ति अर्थात् सभी दृष्टियों से पूर्ण पाञ्चाली वृत्ति ही कर सकती है । ब्राह्मण के जनेऊ पर एक पंजाबी मतवाला (मत्तपालक) ही हाथ डालने का साहस कर सकता है । पंजाबी मदिरा की तीक्ष्ण गन्ध से ही वेदाक्षर उड़ सकते हैं और एक पंजाबी लफंगा (विट) ही अपनी प्रेयसी को पर पुरुष के पास बिठाकर उसके होंठों से सुच्ची की हुई मदिरा एक ब्राह्मण को देकर कह सकता है—'एतन्नवमालिकामुखसंसर्गविर्वधितरसं शेखरकाद् अन्येन केनाप्यनास्वादितपूर्वम् । तत् पिबैतत् । किं ते अतः परं संमानं करोमि ?'—(ए नवमालिका दे बुल्लाँ दे रस दी भरी जिदा शेखरक तों बिना पहलाँ किसे स्वाद नहीं लित्ता, लै पी ताँ सही । एदूँ पराँतेरा होर की मान कराँ ?), और एक पंजाबी ब्राह्मण ही विवशता में चेटी के चरणों पर गिरने का और उसकी मुँह-लगी शराब का रस ले सकता है, और फिर 'मत्तपालक-संसर्गदूषित' होने के पाप को जाकर छप्पड़ के 'सुथरे' पानी में धो सकता है ।

टीकाकार, आलोचक तथा अनुश्रुतियाँ किसी भी व्यक्ति को श्रीहर्ष-नाटक-चक्र के रचयिता होने का श्रेय दे सकती हैं, परन्तु निष्पक्ष अनुसंधान इन नाटकों के लेखक को पंजाबी ही ठहराएगा । यही एक युक्ति थानेसर अथवा कुरुक्षेत्र के श्रीहर्ष को यह श्रेय देने के लिये पर्याप्त है । श्रीहर्ष तथा शूद्रक, दो ही नाटककार संस्कृत वाङ्मय में ऐसे हुए हैं जिनका परिहास अनोखा भी है, शिष्ट भी है, और स्वाभाविक

भी है। इस परिहास की कुछ झलक हमें बाण में भी मिलती है—प्रथम-मिलन में श्रीहर्ष ने बाण के विषय में कहा था 'माहानयं नागः' और राजकवि ने अपनी गुण-ग्राहिता से इस उक्ति को हर्षचरित में अमर कर दिया है। परिहास करने और परिहास सहने—दोनों में हृदय की महत्ता अपेक्षित होती है।

श्रीहर्ष का आभार—

श्रीहर्ष के आभार को संस्कृत नाटकों की कालानुक्रमणी के अनुसार तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है—

१. श्रीहर्ष की अपनी मौलिकता, जिसमें सातवीं शताब्दी की बाण-मयूर आदि कवियों की अपनी समकालीन विशेषताएँ समाविष्ट हैं। इस युग की सबसे बड़ी आकांक्षा ब्राह्मणों तथा श्रमणों के परस्पर वैमनस्य को शान्त करना थी। और यह पूर्त्ति महाराज श्रीहर्षवर्धन ने ही अपने कलास्पर्श से प्रस्तुत की। संस्कृत साहित्य का प्रस्थान काल (Classical Period) तथा हिन्दू-संस्कृति का स्वर्णयुग गुप्तकाल के अनन्तर अभी अस्त नहीं हुआ था। किन्तु श्रीहर्ष की नाटककार रूप में सूक्ष्म-सरस परिहास, ध्वनि, श्लेष, अर्थान्तरन्यास प्रथाओं के विरुद्ध नाटकीय अवस्था-प्रकृति-सन्धि आदि अङ्गों से विहीन मौलिकता को पंजावी के लोक-साहित्य के अतिरिक्त किसी ने भी नहीं अपनाया। श्रीहर्ष को और पंजाबी साहित्य को आचार्य-समय के बहिरङ्ग अलङ्कार, रीति, तथा सन्धि आदि नहीं जँचते। यहाँ काव्य का विषय 'अन्तरङ्ग' है—शृङ्गार अथवा भक्ति की, मानसिक एवं आध्यात्मिक, आन्तरिक काय-कल्प कर देने वाली, अनुभूति।

२. (क) श्रीहर्ष से पूर्व शूद्रक, भास तथा कालिदास अपूर्व ख्याति प्राप्त कर चुके थे। शूद्रक से संभवतः श्रीहर्ष ने परिहास बुद्धि ग्रहण की हो। उदयन-नाटकों, प्रियदर्शिका तथा रत्नावली, में भास की छाया स्पष्ट ही है, किन्तु उनमें भी कथा-प्रयोग, वेष-परिवर्तन आदि कल्पना-वैचित्र्य द्वारा कवि ने अपनी निजी मौलिकता का परिचय दिया है। साथ ही राज्य की घटनाओं—राज्यश्री का आत्म-हत्या प्रयास तथा ग्वान् च्वाँग की विपत्ति—को भी अपने नाटकों में प्रतिच्छायित कर दिया है। एक त्रुटि जो हमें आपाततः खटकती है वह यह है कि—राज्यश्री (जिसका परिगणन भारतीय इतिहास में प्रभावती गुप्ता, अहल्या बाई तथा झाँसी की रानी के साथ होता है) को, राज्य कार्य में अपनी सह-योगिनी बहिन राज्यश्री को, श्रीहर्ष ने एक स्वतन्त्र नाटक का विषय क्यों नहीं बनाया?

(ख) नागानद नाटक में शकुन्तला की उदात्तता एवं शिष्ट शृङ्गार-बुद्धि का भी स्थान-स्थान पर परिचय मिलता है। मलयवती तथा जीमूतवाहन के गन्धर्व प्रेम का वातावरण वही शकुन्तला का तपोवन है, परन्तु राजकुमार यहाँ आखेटक बनकर

नहीं आया । तपोवन में पहुँचने पर पशु-पक्षी कण्वाश्रम की भाँति उसका स्वागत करते हैं । परन्तु एक बात कालिदास की कवि दृष्टि से ओझल रह ही गई—यहाँ शुक साम-गान कर रहा है । अन्यथा तपोवन का संपूर्ण वातावरण तथा चित्र-लेखन दृश्य कालिदास की शकुन्तला ने प्रदान किये हैं । यह तपोवन है, किन्तु दुःष्यन्त की भाँति मलयानिल जीमूतवाहन को एक नवीन स्फूर्ति से संचारित कर देता है—

सेव्यो ऽयं मलयाचलः किमपि मे चेतः करोत्युत्सुकम् ॥१. ९॥

और दुःष्यन्त की ही भाँति—

स्पन्दते दक्षिणं चक्षुः फल-कांक्षा न मे क्वचित् ।
न च मिथ्या मुनि-वचः कथयिष्यति किं न्विदम् ? (१. १०)

दुःष्यन्त की भाँति ही जीमूतवाहन की हृदयाशङ्का शान्त हो जाती है—

कथमियमेवासौ विश्वावसोर्दुहिता मलयवती ? अथवा, रत्नाकरादृते कुतश्चन्द्र-लेखाप्रसूतिः ?

मलयवती को पिता विश्वावसु ने मध्यंदिन सवन के लिये घर बुला भेजा है । शकुन्तला की भाँति वह भी—(उत्थाय, निःश्वस्य, सलज्जं सानुरागं च जीमूतवाहनं पश्यन्ती तापस-सहिता निष्क्रान्ता) । जीमूतवाहन कहता है—

अनया जघनाभोग-मन्थर-यानया ।
अन्यतो ऽपि व्रजन्त्या मे हृदये निहितं पदम् ॥१. १६॥

विदूषक नायक को समझाता है धैर्य धारण करो, तो नायक उत्तर देता है, क्या मैं धैर्य धारण नहीं कर रहा ?—

नीताः किं न निशाः शशाङ्क-रुचयः. . .॥२. ३॥

विवाह के अनन्तर जीमूतवाहन की दृष्टि में मलयवती के स्वभाव-सुन्दर, यौवनभरावनत शरीर पर आभूषण केवल व्यर्थ का बोझ ही हैं—

स्वाङ्गैरेव विभूषिता ऽसि वहसि क्लेशाय किं मण्डनम् ? ॥३. ६॥

और दुःष्यन्त को तो शकुन्तला के वल्कलवस्त्रों, शैवल आदि आभूषण-प्रवचनीयों में भी दैवी सौन्दर्य की झलक ही मिली थी—

इयमधिक-मनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी ।
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ? (शकु० १.२०)

शकुन्तला का शिकार होकर दुष्यन्त ने मृगया का त्याग कर दिया था और जीमूतवाहन का शिकार होकर गरुड़ ने नाग-भक्षण का । तुलना करो—

गाहन्तां महिषा निपानसलिलं शृङ्गैर्मुहुस्ताडितं
छायाबद्धकदम्बकं मृगकुलं रोमन्थमभ्यस्यतु ।

विश्रब्धं क्रियतां वराहततिभिर्मुस्ताक्षतिः पल्वले
विश्रामं लभतामिदं च शिथिलज्याबन्धमस्मद्धनुः ॥ (शाकुन्तले २. ६)

क्वचिद् द्वीपाकारः पुलिनविपुलैर्भोगनिवहैः
कृतावर्तभ्रान्तिर्वलयितशरीरः क्वचिदपि ।
व्रजन् कूलात्कूलं क्वचिदपि च सेतुप्रतिसमः
समाजो नागानां विहरतु महोदन्वति सुखम् ॥ (नागानन्दे ५. २७)

कालिदास के 'न खलु न खलु बाणः संनिपात्यो ऽयमस्मिन्' की छाया श्रीहर्ष के 'न खलु न खलु मुग्धे साहसं कार्यमेवम्' (नाग० २. ११) और 'अलमलमतिमात्रं साहसेनामुना ते' (रत्नावली ३. १७) में स्पष्ट है ।

(ग) शब्दादि अंशों में कथासरित्सागर तथा नागानन्द की तुलना निरर्थक है । क्योंकि कथावस्तु एक होने से प्रतीत ऐसे होता है जैसे श्रीहर्ष ने स्थल-स्थल पर सोमदेव को शब्दशः, वाक्य तथा परिस्थिति आदि सभी अङ्गों में पूर्ण-रूपेण उद्धृत ही किया है । ऐसे कुछ स्थल हमने टिप्पण में उदाहरण-स्वरूप यथास्थान संगृहीत कर दिये हैं । यदि गुणाढ्य की पैशाची बृहत्कथा उपलभ्य होती तो संभव है हमें श्रीहर्ष के अन्य अंशो में भी पूर्ववर्ती कवियों के आभार दृष्टिगोचर होते ।

३. भारत में प्रस्थान साहित्य की समाप्ति सुबन्धु, बाण, श्रीहर्ष के साथ अथवा सातवीं शती के प्रथमार्ध के साथ हो जाती है । प्रस्थान-युग की समाप्ति के अनन्तर भी दो एक प्रतिभाशाली कवि हुए हैं, किन्तु उनकी संस्कृत में, उनकी प्राकृत में, लोक-भाषा की-सी सजीवता नहीं हैं ।

भवभूति के नाटकों में प्राकृत कहीं-कहीं पर तो संस्कृत से भी अधिक समास-बहुल है, अत्यधिक कृत्रिम है । रस-दृष्ठि से साधारणतया आलोचक भवभूति को करुण रस का प्रतिनिधि कवि स्वीकार करते हैं । परन्तु हमें तो उनका संपूर्ण रस कालिदास तथा (विशेषतः) श्रीहर्ष की प्रतिभा से नितान्त अकृतज्ञता के साथ ले लिया गया प्रतीत होता है । श्रीहर्ष ने भी कालिदास के तपोवन आदि से अपने नाटकों को प्रतिच्छायित किया है, परन्तु भवभूति ने कालिदास तथा श्रीहर्ष की नवलता में अपना अनुदान कुछ भी तो नहीं जोड़ा । भवभूति का 'एको रसः करुण एव' नागानन्द नाटक तथा जीमूतवाहन-बोधिसत्त्व की सहृदयता से प्रेरित है । *Cf.*—

श्रीहर्ष के 'मिथ्या-कारुणिको ऽसि,' 'किमेतस्या निष्करुणायाः पुरतो वादितेन' के व्यङ्ग्य, करुणरस, तथा जीमूतवाहन के बलिदान और बलिदान से पूर्व मलयवती-प्रणय की उभय-विध करुणा का पूर्ण वातावरण ही तो उत्तररामचरित का 'विवर्त-भेदात्' भिन्न-भिन्न रूप में प्रस्तुत 'एको रसः करुण एव' है ।

अपि च,

चञ्चुर्नैव खगाधिपस्य हृदयं वज्रेण मन्ये कृतम् ॥४. ९॥

अस्या विलोक्य मन्ये पुत्र-स्नेहेन विक्लवत्वमिदम् ।
अकरुण-हृदयः करुणां कुर्वीत भुजङ्ग-शत्रुरपि ॥४. ११॥

और भवभूति—अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्यहृदयम् ॥उत्तर०॥

परन्तु उत्तररामचरित अथवा रामभद्र की करुणा किसी 'वज्रहृदय' गरुड़ का हृदय विदीर्ण नहीं कर सकी। और देखिये—

१. न प्रभातरलं ज्योतिरुदेति वसुधातलात् ॥ (शकुन्तला १. २५)
२. रत्नाकराद् ऋते कुतश्चन्द्रलेखा प्रसूतिः ॥ (नागानन्द पृष्ठ ६४)
३. कुतो वा महोदधिं वर्जयित्वा पारिजातस्योद्गमः ॥ (मालती० २.)

अन्यत्र, गरुड़ और श्मशानभूमि आदि का बीभत्स वातावरण श्रीहर्ष जिस प्रकार समास-बहुल, श्रवण-कठोर, और कहीं-कहीं दुर्बोध एवं सामान्यतः अज्ञात पदावलियों से भरे श्लोकों में प्रस्तुत करते हैं, वही वृत्ति भवभूति ने लव तथा चन्द्रकेतु के युद्ध में वनवास के अजगरों के वर्णन में अपनाई है। श्रीहर्ष के निम्न उद्धरण सहसा भवभूति का स्मरण कराते हैं—

उद्गर्जज्जलकुञ्जरेन्द्ररभसाऽऽस्फालानुबद्धोद्धतः ॥४. ३॥
चञ्चच्चञ्चूद्धृतार्धच्युतपिशितलवग्राससंवृद्धगर्वैः ॥४. १७॥
क्षिप्त्वा बिम्बं हिमांशोर्भयकृतवलयां संहरन् शेषमूर्त्तिम् ॥४. २४ ॥ इत्यादि

परन्तु श्रीहर्ष की कलादक्षता भवभूति में नहीं है। जीमूतवाहन के मृत्युमुख में आत्म-संतोष से गरुड़ का न केवल हृदय-परिवर्तन ही संपन्न हुआ है, अपि तु 'वाच्य'-परिवर्तन भी—

ग्लानिर्नाधिकपीयमानरुधिरस्याप्यस्ति धैर्योदधेर्
मांसोत्कर्तनजा रुजो ऽपि वहतः प्रीत्या प्रसन्नं मुखम् ।
गात्रं यन्न विलुप्तमेष पुलकस्तत्र स्फुटो लक्ष्यते
दृष्टिर् मय्युपकारिणीव निपतत्यस्यापकारिण्यपि ॥५. १५॥

अपि च

आवर्जितं मया चञ्च्वा हृदयात्तव शोणितम् ।
अनेन धैर्येण पुनस्त्वया हृदयमेव नः ॥५. १७॥

पश्चात्ताप की अग्नि ने झुलसाकर गरुड़ को अपनी ही दृष्टि में नीच बना दिया है—

ज्वालाभङ्गैस् त्रिलोकीग्रसनरसचलत्कालजिह्वाग्रकल्पैः
सर्पद्भिः सप्त सर्पिष्कणमिव कवलीकर्तुमीशे समुद्रान् ।

स्वैरं एवोत्पातवातप्रसर-पटुतरैर् धुक्षिते पक्षवातैर्
अस्मिन् कल्पावसान-ज्वलनभयकरे बाडवाग्नौ पतामि ॥५. २२॥

अमृत की स्मृति से वह फिर जाग उठता है, वह क्या कुछ नहीं कर सकता ?—

पक्षोत्क्षिप्ताम्बुनाथः पटुजवपवनप्रेर्यमाणे समीरे
नेत्रार्चिःप्लोषमूर्च्छा-विधुर-विनिपतत्सानलद्वादशार्कः ।
चञ्च्वा संचूर्ण्य शक्राशनिधनदगदाप्रेतलोकेशदण्डान्
अन्तः-संमग्नपक्षः क्षणममृतमयीं वृष्टिमभ्युत्सृजामि ॥५. ३२॥

अवस्था तथा मानसिक परिस्थितियों के अनुकूल शब्द-प्रस्ताव श्रीहर्ष के अतिरिक्त बाण की भी अपनी विशेषता है । बाण की सन्ध्याएँ धीमे-धीमे आती हैं; आरम्भ में स्वच्छ, शुभ्र, शनैःशनैः अरुण, अन्धकारमय, ज्योति-हीन, गाथा-देश की-सी अनन्त तमोमयी, फिर नक्षत्रों के विस्फुरण से विलासमय, स्वप्नमय, सुषुप्तिमय होती हुई और फिर प्रभातोदय में उद्भासित ! और वाक्य-रचना, उसी प्रकार, सदा नवीन तथा तदनुकूल ही होती है । मनोवैज्ञानिक विश्लेषण में तथा उपदेशों में, कुमारियों के परिहास में, बाण के वाक्यों में लघुता और चुलबुलापन आदर्श हैं ।

(ख) मुद्राराक्षस की नान्दी—

धन्या केयं स्थिता ते शिरसि, शशिकला, किं नु नामैतदस्या
नामैवास्यास्तदेतत् परिचितमपि ते विस्मृतं कस्य हेतोः ।
नारीं पृच्छामि नेन्दुं, कथयतु विजया न प्रमाणं यदीन्दुर्
देव्या निह्नोतुमिच्छोरिति सुरसरितं शाठ्यमव्याद्विभोर्वः ॥मुद्रा० १. १॥

के परिहास-प्रस्ताव की प्रेरणा महाराज विशाखदत्त[1] को श्रीहर्ष की निम्ननान्दी से मिली थी—

धूमव्याकुलदृष्टिर् इन्दुकिरणैराह्लादिताक्षी पुनः
पश्यन्ती वरमुत्सुका ऽऽनतमुखी भूयो ह्रिया ब्रह्मणः ।
सेर्ष्या पादनखेन्दुदर्पणगते गङ्गां दधाने हरे
स्पर्शाद् उत्पुलका करग्रहविधौ गौरी शिवायास्तु वः ॥ (प्रियदर्शिका १.१)

(ग) नागानन्द के श्मशान दृश्य—

प्रतिदिनम् अशून्यमहिनाहारेण विनायकाहितप्रीति ।
शशिधवलास्थिकपालं वपुरिव रौद्रं श्मशानमिदम् ॥४. १८॥

को नाटकीय बुद्धि से वेणीसंहार में—नागानन्द के विट-चेटी-विदूषकमय आपानोत्सव की भाँति—युद्ध भूमि के बीभत्स वातावरण में 'लुहिलप्पिय' तथा 'लुहिल-

---

१ यदि जस्टिस काशीनाथ त्र्यम्बक तेलांग के अनुसार महाराज विशाखदत्त का काल सातवीं-आठवीं शताब्दी ईस्वी माना जाए, तो

प्पिआ' द्वारा अतीव उपयुक्त रूप में दृश्यार्पित किया गया है।

श्रीहर्ष की सूक्तियाँ—

श्रीहर्ष की सूक्तियों के कुछ उदाहरण, हम १. नागानन्द से और २. सुभाषितावली आदि से उपस्थित करते हैं—

१. नागानन्द—

प्रथम अङ्क में

(क) आयासः खलु राज्यमुज्झितगुरोस्तेनास्ति कश्चिद् गुणः। (१.७)

(ख) वन्द्याः खलु देवताः। (पृ० १८)

(ग) निर्दोषदर्शना हि कन्यकाः। (पृ० २०)

(घ) सर्वस्याभ्यागतो गुरुः। (पृ० ३०)

द्वितीय अङ्क में

(क) किं मधुमथनो वक्षः-स्थलेन लक्ष्मीमनुद्वहन् निर्वृतो भवति? (पृ० ४२)

(ख) किं सुजनः प्रियं वर्जयित्वा ऽन्यद्भणितुं जानाति? (पृ० ४२)

(ग) न शक्यते चित्तमन्यतः प्रवृत्तमन्यतो निवर्तयितुम्। (पृ० ५८)

(घ) रत्नाकराद् ऋते कुतश्चन्द्रलेखाप्रसूतिः? (पृ० ६४)

(ङ) अन्योन्यदर्शनकृतः समानरूपानुरागकुलवयसाम्।
केषांचिद् एव मन्ये समागमो भवति पुण्यवताम्॥ (२.१४)

तृतीय अङ्क में

(क) कीदृशो नवमालिकया विना शेखरकः? (पृ० ७२)

(ख) जाता वामतयैव मे ऽद्य सुतरां प्रीत्यै नवोढा प्रिया। (३.४)

(ग) स्वाङ्गैरेव विभूषिता ऽसि वहसि क्लेशाय किं मण्डनम्? (३.६)

(घ) एतत्ते भ्रूलतोल्लासि पाटालाधरपल्लवम्।
मुखं नन्दनमुद्यानमतो ऽन्यत् केवलं वनम्॥ (३.११)

(ङ) स्मितपुष्पोद्गमो ऽयं ते दृश्यते ऽधरपल्लवे।
फलं तु जातं मुग्धाक्षि पश्यतश्चक्षुषोर्मम॥ (३.१२)

(च) एकः श्लाघ्यो विवस्वान् परहितकरणायैव यस्य प्रयासः। (३.१८)

चतुर्थ अङ्क में

(क) सर्वाशुचिनिधानस्य कृतघ्नस्य विनाशिनः।
शरीरकस्यापि कृते मूढाः पापानि कुर्वते॥ (४.७)

(ख) क्रोडीकरोति प्रथमं जातं नित्यमनित्यता।
धात्रीव जननी पश्चात् ततः शोकस्य कः क्रमः॥ (४.८)

(ग) ये नित्यं परदुःखदुःखितधियस्ते साधवो ऽस्तंगताः । (४.१०)

(घ) परार्थे बद्धकक्षाणां त्वादृशामुद्भवः कुतः ? (४.१६)

पञ्चम अङ्क में

(क) स्वगृहोद्यानगते ऽपि स्निग्धे पापं विशङ्क्यते स्नेहात् । (५.१)

(ख) विषादृते किमन्यद् विषधरस्य मुखान्निष्क्रामति ? (पृ० १४४)

(ग) आत्मीयः पर इत्ययं खलु कुतः सत्यं कृपायाः क्रमः । (५.२१)

(घ) मेदोऽस्थिमांसमज्जाऽसृक्-संघाते ऽस्मिंस्त्वगावृते ।
शरीरनाम्नि का शोभा सदा बीभत्सदर्शने ॥ (५.२४)

२. श्रीहर्ष की अन्य उक्तियों को कवीन्द्र वचन-समुच्चय, सदुक्तिकर्णामृत, आदि में उद्धृत किया गया है । य्वान् च्वांग ने अपने संस्मरणों में अष्टमहाश्रीचैत्यसंस्कृत-स्तोत्र की रचना का श्रेय श्रीहर्ष को दिया है । इसके अतिरिक्त, ताम्रशासनों में कहीं-कहीं श्रीहर्ष के राज-वचन उद्धृत हैं, यथा—

कर्मणा मनसा वाचा कर्तव्यं प्राणिने हितम् ।
हर्षेणैतत्समाख्यातं धर्मार्जनमनुत्तमम् ॥

इसमें अशोक के संपूर्ण धर्म-चक्र का संक्षेप में समावेश हो गया है ।

सुभाषितावली से हम एक ही उद्धरण देकर विषय समाप्त करते हैं—

अशठमलोलमजिह्मं त्यागिनमनुरागिणमशेषज्ञम् ।
यदि नाश्रयति नरं श्रीः श्रीरेव हि वञ्चिता तत्र ॥

श्रीहर्ष आचार्य-आलोचकों की दृष्टि में—

१. बाण—

(i) काव्यकथासु अपीतामृतमुद्वमन्तम् ।

(ii) विमल-कपोल-प्रतिबिम्बितां चामर-ग्राहिणीं विग्रहिणीमिव मुख-वासिनीं सरस्वतीमादधानम् ।

(iii) अपि चास्य प्रज्ञायाः शास्त्राणि कवित्वस्य वाचो न पर्याप्तो विषयः ।

२. जयदेव—

यस्याश्चोरश्चिकुरनिकरो कर्णपूरो मयूरो
भासो हासः कविकुलगुरुः कालिदासो विलासः ।
हर्षो हर्षो हृदये वसति पञ्चबाणस्तु बाणः
तेषां नैषा कथय कविता-कामिनी कौतुकाय ।।

३. सोड्ढल—

श्रीहर्ष इत्यवनिर्वातषु पार्थिवेषु नाम्नैव केवलमजायत वस्तुतस्तु।
गीर्हर्ष एष निजसंसदि येन राज्ञा संपूरितः कोटिकनकशतेन बाणः ॥

श्रीहर्ष तथा उनके पूर्वोत्तरवर्ती नाटककारों की विशेषताएँ—

१. भास के नाटकों में सर्वप्रियता का अंश उदयन की प्रेम लीलाओं में है। यह सम्भवतः गुणाढ्य की बृहत्कथा का युग था, नाट्य-मण्डली और उदयन-कथा का युग था।

२. कालिदास में भारतीय संस्कृति की स्वर्ण-युगीन सर्वतोमुखी परिपक्वता विद्यमान है। कवि-दृष्टि से भी कालिदास भारतवर्ष के राष्ट्र-एकीकरण के साहित्य-कार हैं, अग्रदूत हैं। उन्होंने अपनी कथा-वस्तु के लिये प्रेरणा साहित्य के उपेक्षित कथानकों से ही ली है।

३. शूद्रक के मृच्छकटिक के समय में एक गणिका और एक दरिद्र ब्राह्मण की गन्धर्व-लीला उपहासास्पद और गर्हणीय वस्तु नहीं थी। आवश्यक नहीं था कि नाटक का नायक केवल किसी ख्यात-वृत्त कथा का राजकुमार ही हो, प्रत्युत जनता का प्रत्येक व्यक्ति नायक बन सकता था। यह विक्रमादित्य के जन-गण का युग था।

४. अश्वघोष—परन्तु शूद्रक-विक्रमादित्य के प्रायः दो शताब्दी पश्चात् अश्वघोष के नाटकों में कथावस्तु तथा कला का प्रधान-सूत्र नाटककार की धर्म-प्रचार बुद्धि में संनिहित है।

५. श्रीहर्ष के नाटकों की विशेषता यह है कि उनमें प्रेरणा कवि को राज्य-काल में हो रही घटनाओं से ही मिली है। नाटककार ने राज्यश्री तथा ग्वान् च्वाँग के जीवन की, अर्थात् समकालीन, घटनाओं से जहाँ अपने जीवन में काया-पलट अनु-भव की है, वहाँ उदयन-कथाओं तथा जीमूतवाहन की बलि द्वारा वर्तमान को कथा सरित्सागर के चिर-सत्य से आवृत करते हुए जन-गण के मनोरंजन तथा उदात्ती-करण की वस्तु बना दिया है।

६. भवभूति विशाखदत्त तथा भट्टनारायण आदि की रचनाओं में भरत-नाट्यशास्त्र तथा पाणिनीय व्याकरण के शुद्ध रूप प्रस्तुत होते हैं, किन्तु उनमें कलाकारों की निजी मौलिकता दुर्लभ है। ये सभी नाटककार अपनी कथावस्तु रामा-यण, महाभारत तथा मौर्ययुग की राजनीतिक (किन्तु धर्म-बुद्ध्या) घटनाओं को बनाते हैं। भवभूति का स्वप्न था कि वह राम भक्ति तथा कवि प्रतिभा द्वारा संस्कृत का सर्वश्रेष्ठ कवि और नाटककार माना जाएगा। परन्तु भवभूति की सबसे बड़ी त्रुटि अपने पूर्ववर्ती कलाकारों का आभार स्वीकार न करने की कृतघ्नता है। इसके अतिरिक्त—जैसे कि भूमिका में "श्री हर्ष का आभार" प्रस्तुत करते हुए हम भली भाँति दर्शा चुके हैं—भवभूति में मौलिकता का प्रायः क्यों, नितान्त अभाव ही है।

* * *

नाटकों का अध्ययन हम एक और कोण से भी कर सकते हैं। यदि प्राकृत

और इसी प्रकार केवल संस्कृत अथवा केवल प्राकृत का प्रयोग भी हो सकता है या दोनों का एकसाथ भी । विष्कम्भक के इन दो प्रकारों को क्रमशः शुद्ध तथा मिश्र (विष्कम्भक) कहते हैं ।

कुछ घटनाओं का संकेत 'नेपथ्ये कोलाहलः' अथवा सूचना के रूप में भी होता है । इन सब उपायों का प्रयोग दर्शक के हृदय में अद्भुत रस संचार करता रहता है, और इस प्रकार कहानी की प्रगति बनी रहती है ।

यदि एक अङ्क की कथा दूसरे अङ्क में बिना किसी दृश्य-परिवर्तन आदि के अनुस्यूत हो जाए, तो (नाटककार की) इस (वृत्ति) को अङ्कावतार कहते हैं । और यदि आने वाले अङ्क की घटना का संकेत मात्र हो तो उसे अङ्कास्य कहते हैं ।

कहीं-कहीं मुख्य कथा-वस्तु के समानान्तर एक और गन्धर्व-लीला भी चल रही होती है । इस गौण कथा का अभिप्राय नायक तथा नायिका की कथा में रंग लाना होता है । प्रारम्भ में संभवतः विट तथा चेटी का मनोरञ्जक प्रणय दर्शकों के हृदय को लाघव प्रदान करता था । प्रणय की इस सह-कथा को पताका तथा प्रकरी भेद से आचार्यों ने दो प्रकार का कहा है ।

अपवार्य, सहसा, प्रविश्य, आत्मगतम्, अपटीक्षेपेण, आदि संकेत भी कथरस की स्वाभाविकता प्रस्तुत करने के लिये ही होते हैं ।

नाटक की सुखान्तता न केवल नायक-नायिका की दृष्टि से अपेक्षित होती है, अपि तु नाट्य-मण्डली के समकालीन राज्य-शासन के लिये मङ्गल-कामना तथा दर्शक-गण और प्रजागण के सुख, शान्ति और वैभव की दृष्टि से भी अत्यावश्यक होती है ।

सिद्ध-हस्त कलाकार प्रायः जिस प्रकार नान्दी तथा आमुख के द्वारा नाटकीय कथा-वस्तु के सूत्रों को विकीर्ण करते हैं उसी प्रकार अपनी कला-कुशलता द्वारा भरत-वाक्य तक पहुँचते-पहुँचते उनका प्रत्याहार कर लेते हैं ।

किन्तु यह सब घटना-संगति इन उपकरणों द्वारा अत्यन्त स्वाभाविक रूप में उपस्थित होनी चाहिये । इसीमें नाटककार की कला-कुशलता एवं सफलता है ।

नागानन्द में प्रयुक्त मुख्य छन्द—

सस्कृत नाटकों की एक और विशेषता है । उनमें पात्रों की योग्यता और स्थिति के अनुसार संस्कृत तथा प्राकृत का प्रयोग होता है । संस्कृत केवल उच्च पात्र ही बोलते हैं । प्राकृत स्त्रियों, बालकों, विदूषक तथा नीच पात्रों के लिये है । सीता आदि महारानियों तक को संस्कृत में बोलने का अधिकार नहीं, परन्तु गणिकाएँ शिक्षित होने के कारण संस्कृत बोल सकती हैं ।

कीथ ने एक स्थान पर कालिदास के विषय में लिखा है "वस्तुतः यह एक विचित्र चमत्कार है कि एक विषय को एक ही निश्चित छन्द में ग्रथित करना कालि-

दास की एक अपनी ही विशिष्ट अभिरुचि प्रतीत होती है—भक्ति-रस के लिये 'श्लोक', मृत्यु का वर्णन 'वियोगिनी' में, तथा विनाश का 'उपजाति' में, और वर्षा, प्रवास, व्यथा का 'मन्दाक्रान्ता में'। परन्तु संस्कृत के अन्य कवियों में यह कौशल उपलभ्य नहीं।

लौकिक संस्कृत में दो प्रकार के छन्द होते हैं, एक 'वृत्त' और दूसरे 'मात्रा' छन्द। मात्रा छन्दों में लघु-गुरु की क्रमशः एक, और दो मात्राएँ गिनते हुए प्रत्येक चरण में केवल मात्राओं की संख्या पूर्ण करनी होती है। इसका प्रसिद्ध उदाहरण है 'आर्या'। गुरु-लघु-भेदे—

सानुस्वारश्च दीर्घश्च विसर्गी च गुरुर्भवेत्।
वर्णः संयोग-पूर्वश्च तथा पादान्तगो ऽपि च ॥

वृत्त छन्दों के लक्षण में प्राचीन आचार्य प्रायः लघु-गुरु की प्रगति अथवा क्रम को तीन-तीन 'अक्षरों' (*Syllables*) के निम्न गणों में विभाजित करते हैं—

आदि-मध्यावसानेषु य-र-ता यान्ति लाघवम्।
भ-ज-सा गौरवं यान्ति, म-नौ तु गुरु-लाघवम् ॥

अर्थात्				
	य⌣ — —	भ— ⌣ ⌣	म— — —	ग—
	र— ⌣ —	ज⌣ — ⌣	न⌣ ⌣ ⌣	ल⌣
	त— — ⌣	स⌣ ⌣ —		

इन्हीं परिभाषाओं के अनुसार अब हम नागानन्द का वृत्त परिचय उपस्थित करते हैं। छन्द के गान में कहाँ रुकना (यति) है, यह भी लक्षणान्तर्गत ही है। प्रत्येक लक्षण के नीचे गणनाङ्क अङ्कों और श्लोकों के दिये हैं।

१. शार्दूल-विक्रीडितम्—*19 Syllables* : म-स-ज-स-त-त-ग।

लक्षण—सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्।

१. १,३,६,७,८,६,११,१५,१६,१८,२१
२. २,३,१०
३. ४,५,६,६
४. २,३,६,१०,२७
५. २,१४,१५,१८,१६,२१,३३,३७,४०

२. स्रग्धरा—*21 Syllables* : म-र-भ-न-य-य-य

लक्षण—म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्।

१. २,१३
२. १३
३. ७,१५,१८

सचमुच नाटककार के समय में लोक-भाषा थी, और संस्कृत भी—चाहे उसका प्रयोग शिष्ट-मंडली तक ही सीमित रहा हो—स्थानीय आचार, शैली आदि द्वारा वैदर्भी, पाञ्चाली प्रभृति रीतियों, वृत्तियों में विभाजित होती थी, तो उस अवस्था में स्वभावतः हमें नाटकों का वर्गीकरण भिन्न-भिन्न प्रान्तीय शैलियों के प्रतिनिधि रूप में करना चाहिये। किन्तु खेद का विषय तो यह है कि (i) वैदर्भी, पाञ्चाली आदि प्राच्य, उदीच्य सभी प्रान्तीय रीतियों (विशेषताओं) को बाण सरीखे कवियों ने एक-शैली के रूप में ही इस सुन्दरता से स्वांगीकृत किया हुआ था कि इन शैलियों में 'स्थानिकता' कसौटी पर उतर ही न सकती थी (जिस प्रकार उन्नीसवीं शती के अन्त में भेद-शून्य, प्रान्तीयता-हीन व्रज/अवधी); (ii) वैदर्भी आदि के लक्षणों में प्राचीन आचार्यों ने कोमल तथा परुष ध्वनियों को ही आधार बनाया है, भाषा तथा जीवन के अन्य रीति-भूत अंगों को नहीं। प्राचीन साहित्य तथा कला को हम लोक-वस्तु तथा लोक-वाङ्मय मानते हैं, और क्योंकि प्रान्तीय रीति-शृङ्खला इतनी सुगमता से लुप्त नहीं हो जाया करती—भाषा तथा जीवन के इस प्रकार उपेक्षित अंगों के अनुसंधान द्वारा वैदर्भी, पाञ्चाली आदि रीतियों का पूर्णरूप अब भी उपस्थित किया जा सकता है।

नाटक-रचना के अङ्ग—

नाटक-रचना के अङ्गों में सब से मुख्य अंग कथावस्तु है। कथावस्तु काल्पनिक हो सकती है, इतिहास अथवा गाथाओं की कोई ख्यात-वृत्त कहानी भी हो सकती है संस्कृत परम्परा के अनुसार नाटक का उद्देश्य केवल मनोरञ्जन नहीं होता अपि तु रस की साधारणीकरण वृत्ति द्वारा लोकचरित्र का उदात्तीकरण ही होता है। संभवतः इसीलिये संस्कृत नाटकों में दुःखान्त रचनाएँ लिखने का निषेध है। दुःखद घटनाओं का प्रभाव दर्शक के हृदय पर स्थायी पड़ जाने से उसका जीवन 'एको रसः व्यथैव' से भर जाता है। कथा-प्रवाह में मानसिक घात-प्रतिघात द्वारा रोचकता लाने के लिये कथावस्तु को दृश्यों तथा अंकों की घटना-संगति में बाँध दिया जाता है।

नाटक में मुख्य रस एक ही होना चाहिये, शेष सब रस उसीको परिपुष्ट करने के लिये गौण रूप से अर्थात् संचारी भाव बमकर आ सकते हैं। यदि कथा-वस्तु में रस अन्तःपुर की शृंगार, ईर्ष्या आदि वृत्तियों का लाना अभिप्रेत हो तो ऐसे नाटक नाटक न कहला कर—*for ladies only!*—नाटिका कहलाएँगे। नाटिका में तीन या चार अङ्क होते हैं जब कि साधारणतया नाटक में पाँच से सात तक और प्रकरण में दस तक।

कथा के मुख्य पात्र नायक और नायिका होते हैं। नायक को कथा-वस्तु तथा

रस के अनुसार चार प्रकार का माना गया है—शृङ्गार में धीर ललित, शत्रु-प्रतिशोध में धीरोद्धत, लोकोत्तर चरित्र में धीरोदात्त तथा सुख-दुःख की समता में धीर-प्रशान्त। इसीके साथ नायिका के भेद—उत्तम, मध्यम तथा नीच—मुख्यतया नायिका की सामाजिक स्थिति पर आधारित, क्योंकि स्त्री का स्वाभाविक स्थान घर में होता है, अथवा संकेत-स्थान में, अन्यत्र नहीं—माने गए हैं।

नाटक का प्रवाह तथा घटना-चक्र की संगति इन्हीं दो पात्रों को केन्द्र मानकर प्रस्तुत होते हैं। अन्य पात्र यथा विदूषक, चेटी, दूती, आदि केवल नायक तथा नायिका की प्रणय-लीला के साधन बनकर ही आ सकते हैं, इनकी उपयोगिता और कुछ नहीं होती। कञ्चुकी तथा प्रतीहार भी इसी प्रकार राज-प्रासाद और अन्तः-पुर के द्वार पर इसलिये खड़े किये जाते हैं कि अन्दर हो रही गन्धर्व-लीला के रंग में भंग न पड़ जाए।

सूत्रधार तथा नटी, और कभी-कभी पारिपार्श्विक, नाटक की प्रस्तावना प्रस्तुत करते हैं। और बात-चीत करते-करते किसी बहाने प्रस्तूयमान पात्र की भूमिका रचने के लिये विदा हो जाते हैं।

नाटक खेलने से पूर्व नट-मण्डली 'देव-द्विज-नृपादीनां' स्तुति करती है। उसको नान्दी कहते हैं। दक्षिणी नाटकों में कदाचित् नान्दी भी पूर्व रंग के ही अन्तर्गत थी और संभवतः इसीलिये भास के नाटकों की विशेषता, जो उसे कालिदास आदि उत्तर भारत के नाटक-कारों से विशिष्ट करती है, उनकी 'सूत्रधारकृतारम्भता' है। परन्तु नाटक में नान्दी का उपयोग संपूर्ण कथा-वस्तु का ध्वनि रूप में पूर्वाभास दे देने में है। कवि की मौलिकता व्यञ्जना में होती है, और यही उसका अवसर होता है।

नान्दी के अनन्तर सूत्रधार रंग-मञ्च पर उतरता है और अभिनेतव्य नाटक का प्रस्ताव उपस्थित करते हुए लोक-रञ्जनार्थ ज्योंही गीत, नृत्य आदि के लिये वह अपनी सहयोगिनी नटी को बुलाता है, त्यों ही लो, उधर से कोई मुख्य पात्र अथवा मुख्य घटना नेपथ्य से शब्द आदि द्वारा दृश्य परिवर्तन कर देती है। दृश्य परिवर्तन का यह साधन आमुख अथवा प्रस्तावना कहलाता है, इसी से नाटक के प्रथम दृश्य पर परदा उठता है।

नाटक के प्रथम दृश्य को प्रवेशक कहते हैं। इसमें कभी-कभी नायक तथा नायक का कोई साथी, प्रायः कुछ एक गौण पात्र यूहीं बात-चीत करते-करते नायक अथवा नायिका की किसी घटना का संकेत दे जाते हैं और इस प्रकार दर्शकों के संमुख रंगमञ्च पर 'अप्रस्तुत घटनांश' की संगति संपूर्ण घटना क्रम से बँध जाती है। दो अङ्कों के बीच में इसी युक्ति के अवलम्बन को विष्कम्भक कहते हैं, जिसमें केवल नीच, केवल मध्यम अथवा केवज उत्तम पात्र भी आ सकते हैं, या मिलेजुले भी।

समाज शौरसेनी प्राकृत बोलता है, जब कि नीच जाति का व्यवहार-माध्यम मागधी अथवा अर्धमागधी होता है। परन्तु भगवान् बुद्ध ने धर्म-चक्र-प्रवर्तन के लिये इसी नीच भाषा को ही अपनाया था।

३. शौरसेनी तथा मागधी के अतिरिक्त संगीत के लिये माहाराष्ट्री प्राकृत को ही श्रेष्ठ कहा गया है। संगीत में मुख्य अंग आलाप होता हैं, और आलाप के लिये व्यञ्जनों की उतनी आवश्यकता नहीं होती जितनी स्वरों की।

(ख) १. मागधी, शौरसेनी, गुर्जरी, पाञ्चाली, आदि को देश-भेद के अनुसार अवस्थापित करते हुए कुछ अन्य भाषा-शास्त्रियों ने इन प्राकृतों के क्षेत्र सीमित करते हुए प्राकृतों के विकास द्वारा अपभ्रंश का विकास तथा अपभ्रंशों के विकास द्वारा आधुनिक प्रान्तीय भाषाओं के विकास की युक्ति उपस्थित की है। जिन संस्कृत कवियों के काल के विषय में हमें कुछ ज्ञात नहीं, उनके विषय में प्राकृत-विकास की ऐतिहासिक युक्ति ही एकमात्र प्रमाण ठहरती है। इसके अनुसार भास, कालिदास, शूद्रक, अश्वघोष, हर्ष, भवभूति संस्कृत नाट्य-परम्परा में कुछ निश्चित सोपान हैं।

२. प्रायः सभी प्राकृतों का प्रयोग शूद्रक के मृच्छकटिक में हुआ है। पाश्चात्य विद्वानों का विचार है कि इन प्राकृतों का कलापूर्ण उपयोग नाटककार ने भरत नाट्य शास्त्र आदि में परिगणित प्राकृतों के (हेमचन्द्र व्याकरण के) आधार पर किया है। परन्तु प्रश्न यह उठता है कि यही कलापूर्णता भास, कालिदास, तया भवभूति क्यों नहीं दिखा सके ? हमारे विचार के अनुसार नाट्य-शास्त्रादि के लिये मृच्छकटिक की ही साक्षी पर्याप्त थी। मृच्छकटिक की रचना ईसा से पूर्व शताब्दियों में हुई।

३. ग्रियर्सन आदि ने परम्परानुसार प्राकृत, अपभ्रंश तथा 'खड़ी' बोलियों के विकास की शृङ्खला बाँधते हुए शौरसेनी को 'अन्तर्देशीय' तथा बंगाल, उड़ीसा, आसामी, राजस्थानी, गुजराती, माहाराष्ट्री, सिन्धी आदि को 'बहिर्देशीय' स्थापित किया है। शौरसेनी कभी प्राचीनकाल की मौलिक भाषा थी, पश्चिमी हिन्दी शौरसेनी का आधुनिक रूपान्तर है। पाञ्चाली आदि भाषाएँ मूलतः (i) या तो अन्त- र्देशीय थीं और धीरे-धीरे बहिर्देशीय पड़ोसिन के प्रभाव से वे बहिर्मुख होती गईं, या फिर— (ii) वे बहिर्देशीय से उसी प्रकार अन्तर्देशीय बन गईं।

४. पंजाबी इसी प्रकार की द्विमुखी भाषा है, जो थी तो शौरसेनी परिवार की, किन्तु विवाहानन्तर एक कुमारी की भाँति वह सिन्धी घराने की बहू बन गई। *Cf.*—मुलतानी दाह तथा वीह (बहिर्देशीय) *vs.* दस तथा वीह (पंजाबी)। 'प्राकृतों' में पंजाबी की एक और विशिष्टता यह है, जो संभवतः अन्य प्रान्तीय-भाषाओं में अनुपलभ्य है, कि पंजाबी में स्वर (*accent*) आज भी प्राकृत का है, जब कि हिन्दी में अपभ्रंश का स्वर है। *Cf.*—संझा (पंजाबी) *vs.* साँझ (हिन्दी)। पंजाबी में ही

कुछ ऐसे प्रयोग अभी तक अवशिष्ट हैं जो किसी भी प्राकृत में नहीं मिलते, यथा वैदिक 'यह्वीः' तथा आत्मनेपद 'जासु' (गच्छस्व)।

(ग) हर्ष की प्राकृत न केवल शास्त्र के नियमों का अन्धा अनुकरणमात्र है (वह बोल-चाल की भाषा तो है ही नहीं), अपि च वह समास-बहुल तथा क्लिष्ट है। परन्तु भवभूति ने नाटककारों में हर्ष का ही अनुकरण किया है। दोनों की प्राकृत संस्कृत की अपेक्षा अधिक अस्वाभाविक है, क्योंकि संभवतः पहले इन नाटककारों ने संस्कृत संवाद लिखे होंगे और तदनन्तर व्याकरण के नियम लगाते हुए उनका प्राकृत रूपान्तर कर दिया होगा।

(घ) संस्कृत तथा प्राकृत में मुख्य अन्तर निम्न हैं—

१. प्राकृत में द्विवचन, नपुंसक लिङ्ग, आत्मनेपद सर्वथा लुप्त हैं। नाम-रूपों में कुछ कारक-विभक्तियों के भेदक-चिह्न ही नहीं रहे। धातुरूपों में आशीर्लिङ्, लुङ्, लृङ् आदि प्रयुक्त नहीं होते, सारा काम लट्, लङ्, लोट् और लृट् से ही चला लिया जाता है। शब्दों तथा धातुओं के रूप बनाने के लिये राम तथा भवति के अकारान्त पुंलिङ्ग तथा शप्-विकरण को आदर्श मान लिया गया है।

२. उच्चारण सौकर्य के कारण श् ष् स्—इस तीनों का 'स्' ही हो जाता है। पाँचों अनुनासिक संयुक्ताक्षरों में अनुस्वार मात्र ही रह जाते हैं। दन्त्य 'न्' मूर्धन्य 'ण' बन बाता है। भाषा-वैज्ञानिकों का कहना है कि संपूर्ण मूर्धन्य वर्ग इसी प्राकृत 'नियम' (मूर्धन्यी-करण) की देन है। स्वरों के मध्य-वर्ती स्पर्श व्यञ्जनों में मुख्य प्रवृत्ति संवृत से विवृत होने की ओर है। क→ ग→अ; थ→ध→ह, यथा— भगवती→भगवदी→भअवदी→भअवई। इन अवशिष्ट स्वरों में सन्धि नहीं होती, *Cf*. वैदिक 'तितउ' 'प्रउग'। दूसरा मुख्य नियम 'दो-मात्रा' का है, जिसके अनुसार प्राकृत शब्दों का कोई भी स्वर मात्रा की दृष्टि से दो मात्राओं से अधिक नहीं जा सकता अर्थात् भक्त→भत्त←भात। 'कार्त्स्न्यम्' जैसे संयुक्त व्यञ्जन-समुदाय प्राकृत में असंभव हैं।

३. प्राकृत-युग में स्वर-व्यत्यय तथा अवशिष्ट-स्वर सन्धिश्र संभव थी। किन्तु अपभ्रंश में 'गृह' का 'घरु' तथा 'भअवइ' का 'भावी' बन गया! संभवतः अपभ्रंश काल में ही स्वर (*accent, not vowel*) के स्थानान्तरण से ही 'सन्ध्या' का 'साँझ्' बन गया है। इस प्रवृत्ति से, जैसा कि हम ऊपर दर्शा आए हैं, संभवतः केवल पंजाबी ही मुक्त रही। ग्रियरसन के अनुसार भारत की आधुनिक बहिर्देशीय भाषाएँ संश्लोषात्मक हैं और अन्तर्देशीय हिन्दी विश्लेषात्मक है। परन्तु वस्तु-स्थित्या पंजाबी आदि भी विश्लेषण की अवस्था लाँघकर पुनः अगले संश्लेषण-पग (ओस [ने] मारेआ) पर आरूढ हैं। संभवतः इन भाषाओं की विशेषता यह है कि ये अपभ्रंश

४. १५,१८,२२,२५,२८

५. ६,२२,२५,२८,३२,३६,३६

३. आर्या (= *Pkt.* गाथा)—चार पादों में क्रमश १२,१८,१२,१५ मात्राएँ।
लक्षण—यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीये ऽपि।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश सार्या॥
पढमं बारहिं मत्ता बीए अट्ठारहेहिं संजुत्ता।
जह पढमं तह तीयं दहपंच बिहूसिआ गाहा॥

१. ४,१४,१६

२. १,४,५,८,१४

३. १,२,३,१०,१४,१७

४. ४,१२,१६,२३,२४

५. १,४,२०,३५,४१

४. अनुष्टुभ्—*8 Syllables in a quarter*—
लक्षण—पञ्चमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्विचतुर्थयोः।
षष्ठं गुरु विजानीयात् शेषेष्वनियमो मतः॥

१. ५, १०,२०

२. ७,६,१२

३. ११,१२

४. ७,८,११,१६,१७,२०,२१,२६

५. ६,१०,११,१२,१७,२४,२६,२६,३४

५. मालिनी—*15 Syllables in a quarter*—न-न-म-य-य
लक्षण—ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः।

१. १२

२. ११

६. द्रुतविलम्बितम्—*12 Syllables in a quarter*—न-भ-भ-र
लक्षण—द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ।

१. १७

७. हरिणी—*17 Syllables in quarter*—न-स-म-र-स-ल-ग
लक्षण—नसमरसला गः षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता।

२. ६

३. १३

८. शिखरिणी—*17 Syllables in a quarter*—य-म-न-स-भ-ल-ग
लक्षण—रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी ।

३. ८

५. २७.३१

९. वसन्ततिलका—*14 Syllables in a quarter*—त-भ-ज-ज-ग-ग
लक्षण—उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः ।

३. १६

४. ५

५. ३,५,७,१३,३०,३८

१०. उपजाति—*11 Syllables in a quarter*—त/ज-त-ज-ग-ग (*See* इन्द्रवज्रा *and* उपेन्द्रवज्रा *following*).

लक्षण—अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः ।

४. १,१३,१४,२६

५. १६,२३

११. इन्द्रवज्रा—*11 Syllables in a quarter*—त-त-ज-ग-ग
लक्षण—स्यादिन्द्र-वज्रा ततजास्ततो गौ ।

(*Cf.* उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ)

४. ६

१२. शालिनी—*11 Syllables in quarter*—म-त-त-ग-ग
लक्षण—मात्तौ गौ चेत् शालिनी वेद-लोकैः ।

५. ८

नाटकों में प्राकृत—

(क) १. साहित्यदर्पणादि ग्रथों में पात्रों की शिक्षा-सभ्यता के अनुसार उनकी भाषा में भी भेद रखा गया है । शिक्षित वर्ग की भाषा संस्कृत है तथा अशिक्षितों की प्राकृत । इससे प्रतीत होता है कि कम-से-कम नाटक-विकास के युग में भारतीय स्त्रियाँ अशिक्षित ही समझी जाती थीं । सीता, अरुन्धती, सावित्री, आदि आदर्श भारतीय नारियाँ संस्कृत की अधिकारिणी नहीं समझी गईं । इसके विपरीत वेश्याएँ प्रायः साधारण जन-समाज से भी अधिक सुशिक्षित थीं । कालिदास ने कुमार-संभव (७. ९०) में विवाहानन्तर सरस्वती द्वारा पार्वती की स्तुति भी प्राकृत में कराई है ।

२. अशिक्षितों में प्रायः दो वर्ग तो निश्चित ही हैं । साधारण अशिक्षि

के माध्यम से न आकर सीधी प्राकृत से ही प्रसूत हुई हैं।

यदि हर्ष ने सचमुच बोलचाल की प्राकृत को अपने नाटकों में प्रयुक्त किया होता, तो उसमें (स्मरण रहे हर्ष थानेसर का वासी था) यही पंजाबी पुट आ जाती। परन्तु यह 'पंजाबीपना हर्षनाटकों की, संस्कृत में अधिक " !

पात्र-परिचयः

(पुरुषाः)

१. सूत्रधारः—नाटक का प्रवर्तक
२. जीमूतवाहनः—नायक, जीमूतकेतु का पुत्र, राजकुमार
३. आत्रेयः—विदूषक, नायक का ब्राह्मण मित्र
४. शाण्डिल्यः—तापस
५. मित्रावसुः—महाराज विश्वावसु का पुत्र, मलयवती का भाई
६. शेखरकः—विट
७. चेटः—शेखरक का भृत्य
८. काञ्चुकीयः—अन्तःपुर का संरक्षक
९. राजपुरुषः—वासुकि का कर्मचारी
१०. गरुडः—विनता का पुत्र, नागों का शत्रु
११. शङ्खचूडः—एक नाग
१२. जीमूतकेतुः—जीमूतवाहन का पिता
१३. सुनन्दः—विश्वावसु के घर का सेवक

(स्त्रियः)

१. नटी—सूत्रधार की पत्नी
२. मलयवती—नायिका, विश्ववसु की पुत्री, राजकुमारी
३. नवमालिका—विट की प्रेयसी
४. चतुरिका—मलयवती की चेटी
५. मनोहारिका—मलयवती की चेटी
६. वृद्धा—शङ्खचूड की माता
७. देवी—जीमूतवाहन की माता
८. गौरी—भगवती हिमालयपुत्री

नागानन्दम्

श्रीहर्षदेवप्रणीतं

नागानन्दम्

प्रथमो ऽङ्कः

ध्यानव्याजमुपेत्य चिन्तयसि काम् ? उन्मील्य चक्षुः क्षणं
पश्यानङ्गशरातुरं जनमिमं ! त्रातापि नो रक्षसि !
मिथ्याकारुणिको ऽसि ! निर्घृणतरस्त्वत्तः कुतो ऽन्यः पुमान् ?
सेर्ष्यं मारवधूभिरित्यभिहितो बोधौ जिनः पातु वः ॥१॥

अपि च—

कामेनाकृष्य चापं, हतपटुपटहावल्गिभिर्मारवीरैर्,
भ्रूभङ्गोत्कम्पजृम्भास्मितललितवता दिव्यनारीजनेन ।
सिद्धैः प्रह्वोत्तमाङ्गैः पुलकितवपुषा, विस्मयाद् वासवेन,
ध्यायन् बोधेरवाप्तावचलित इति वः पातु दृष्टो मुनीन्द्रः ॥२॥

(नान्द्यन्ते ततः प्रविशति सूत्रधारः)

FIRST ACT

"Under the semblence of meditation, of what sweetheart art thou dreaming, my dear ?" "Just open thine eyes and see how mortally smitten with love I am !" "What a Saviour, if thou canst not save me !" "In vain do they call thee Compassionate !" "Who could be more heartless than thou ?"—teased thus by the sirens of Kama in the hour of his Enlightenment, may the Lord Victorious (i. e. Buddha) protect you all. (*1*)

And—

Though marked by Kama as a target of his drawn bow and

श्रीहर्ष देव रचित

नागानन्द

पहला अङ्क

"अजी, समाधि के मिस किस प्रेयसी का ध्यान कर रहे हो ?" "तनिक आँख खोलकर तो देखो कि कामदेव के बाणों ने मेरी क्या दुर्दशा कर दी है !" "अच्छे रक्षक बने हो कि हमारी सुध ही नहीं लेते !" "झूठमूठ के दयालु बने बैठे हो !" "तुमसा निर्दयी जन और होगा कौन ?'—बोध की अवस्था में जिस भगवान् जिन (बुद्ध) को कामदेव की (पाँच) दूतियों ने इस प्रकार के उपालम्भ दिये, वही समाधि-लीन भगवान् तुम्हारी रक्षा करे। (१)

और भी—

जिसे बोध की अवस्था में ध्यान-मग्न देखकर कामदेव का धनुष खिंचा का खिंचा रह गया, उसके वीर योधा नगाड़े पीटते और नाचते रह गए तथा दिव्याङ्गनाएँ आँखें नचातीं, जम्भाइयाँ लेतीं और मुस्काराती रह गईं और तिसपर भी उसे अविचलित देखकर सिद्ध-महात्माओं के सिर आदर-भाव से झुक गए और उन्हें रोमाञ्च हो आया तथा स्वयं इन्द्र भी आश्चर्य-चकित रह गया—वह मुनीन्द्र (भगवान् बुद्ध) तुम्हारी रक्षा करे। (२)

(नान्दी के अनन्तर सूत्रधार का प्रवेश)

---

regarded (viciously) by his warriors with the beat of drums and jubilant dance, and ogled by heavenly damsels with tremulous leers, parted (luscious) lips and bewitching smiles, who remained unruffled in his meditation in the hour of his Enlightenment, and who was, therefore, looked at by the Siddhas with heads bowed and bodies athrill and gazed at by Indra with amazement—may that Lord of Sages protect you all. (2)

[*At the end of the Invocation enter* STAGE-MANAGER]

सूत्रधारः—अद्याहमिन्द्रोत्सवे सबहुमानमाहूय नानादिग्देशागतेन राज्ञः श्रीहर्षदेवस्य पादपद्मोपजीविना राजसमूहेनोक्तः, "यत् तदस्मत्स्वामिना श्रीहर्षदेवेनापूर्ववस्तुरचनालंकृतं विद्याधरजातकप्रतिबद्धं नागानन्दं नाम नाटकं कृतमित्यस्माभिः श्रोत्रपरम्परया श्रुतं, न च प्रयोगतो दृष्टम्। तत्तस्यैव राज्ञो बहुमानादस्मासु चानुग्रहबुद्ध्या यथावत् प्रयोगेणाद्य त्वया नाटयितव्यम्" इति। तद् यावदिदानीं नेपथ्यरचनां कृत्वा यथाभिलषितं संपादयामि। (परिक्रम्यावलोक्य च) आवर्जितानि च सामाजिकजनमनांसीति मे निश्चयः। कुतः,—

श्रीहर्षो निपुणः कविः, परिषदप्येषा गुणग्राहिणी,
लोके हारि च बोधिसत्त्वचरितं, नाट्ये च दक्षा वयम्।
वस्त्वेकैकमपीह वाञ्छितफलप्राप्तेः पदं किं पुनर्
मद्भाग्योपचयादयं समुदितः सर्वो गुणानां गणः ॥३॥

तद् यावद् गृहिणीमाहूय सङ्गीतकमनुतिष्ठामि।

(परिक्रम्य नेपथ्याभिमुखमवलोक्य)

द्विजपरिजनबन्धुहिते मद्भवनतटाकहंसि मृदुशीले।
परपुरुषचन्द्रकमलिन्यार्ये, कार्यादितस्तावत् ॥४॥

Stage-manager—Today at the Indra festival I was very respectfully summoned by the assemblage of Kings come from various regions as vassals at the lotus-feet of His Majesty King Harsha, and was thus addressed, "We have heard it from current rumours that our lord, His Majesty King Harsha, has written a play called *Nagananda*, based on the (story of) Vidyadhara Jataka and adorned with an original arrangement of the plot; but we have not seen it produced. So, out of high respect for the king himself and with the idea of obliging us also, you should have it staged in appropriate style." Accordingly, after arranging the costumes, I shall proceed to fulfil their desire. (*Walking around and looking*) I believe the minds of the audience are all agog. For,—

Sri Harsha is the master of his muse, this assemblage is appreciative of merit, the stories of Bodhisattva do catch the popular fancy, and we are expert in the art of acting. Any of these facts is enough for producing the desired effect, but how much more so does this whole set of excellences when combined through my abundant good fortune! (3)

सूत्रधार—आज, इन्द्रोत्सव में देश-देशान्तर से आए हुए श्रीहर्षदेव महाराज के चरणकमलानुदास राजाओं ने बड़े आदर-पूर्वक बुलाकर मुझसे कहा है—"भाई, कानों-कान तो हमने सुन लिया कि हमारे महाराज श्री हर्षदेव ने (बोधिसत्त्व की जन्म-कथाओं में से) अद्भुत कथानक से सुशोभित विद्याधर-जातक को नागानन्द नाम के एक नाटक के रूप में लिखा है, किन्तु उसे हमने अभी तक अभिनयार्पित हुआ नहीं देखा। सो, महाराज के प्रति आदरभाव के निमित्त तथा हमें अनुगृहीत करने के लिये नागानन्द का समुचित अभिनय उपस्थित करो।" (मुझे भी यह बात जँचती है) तदनुसार मैं वेश-भूषा आदि का प्रबन्ध करके उनकी इच्छा पूर्ण करता हूँ। (घूमकर इधर-उधर देखकर) मुझे तो विश्वास है कि दर्शकों के हृदय को हमारी प्रस्तुत योजना ने पहले ही से मोह लिया है, क्योंकि,—

श्रीहर्ष स्वयं एक सिद्ध-हस्त कवि हैं, तिसपर दर्शक-वृन्द की गुण-ग्राहिता (मानो सोने पर सुहागा है) ! बोधिसत्त्व की पूर्व-जन्म कथाएँ विश्वभर में मोहक सिद्ध हो चुकी हैं ! नाटक की प्रयोग कला में हमारी नाट्य-मण्डली को (अपनी ही) निपुणता प्राप्त है । अभीष्ट फल की प्राप्ति के लिये इनमें से एक-एक वस्तु भी पर्याप्त है, और जब हमारे सौभाग्य से ये सब विभूतियाँ एकत्र उपलभ्य हों तब तो कहना ही क्या ! (३)

तो, अच्छा अपनी सहचरी को बुलाकर कुछ सँगीत आदि का आयोजन करता हूँ।

(घूमकर, नेपथ्य-भूमि की ओर देखते हुए)

प्रिये, ब्राह्मणों, नौकर-चाकरों और बन्धुजनों के हित में तू कितनी संलग्न है ! मेरे घर-रूपी सरोवर में तू हंसी के समान शोभा देती है । और पराए पुरुषों के सामने आने से तू ऐसे झिझकती है जैसे (दिनकी) कमलिनी चन्द्रमा के दर्शन से । अस्तु, अब तनिक इधर आओ, कुछ काम आ पड़ा है । (४)

I shall, therefore, call my wife and arrange for the (preliminary) concert.

[*Turning and looking toward the tiring room*]

My lady, thou art amiable to all—priests, attendants, and kinsmen alike, thou art the enlivening spirit of my house as the swan is that of a lake, thou art sweet of disposition and becomest modest in the presence of strangers as doth the lotus droop at the appearance of the moon. Pray, just come hither. I have something on hand. (4)

नटी—(प्रविश्य, सास्रम्) अज्ज, इयह्मि मन्दभग्गा । आणवेदु अज्जउत्तो को णिओओ अणचिट्ठीअदु त्ति ।

(प्रविश्य, सास्रम्) आर्य, इयमस्मि मन्दभाग्या । आज्ञापयत्वार्यपुत्रः को नियोगो ऽनुष्ठीयतामिति ।

सूत्रधारः—(नटीमवलोक्य) आर्ये, नागानन्दे नाटयितव्ये किमिदमकारणमेव रुद्यते ?

नटी—अज्ज, कधं ण रोइस्सं ? जदा तादो अज्जुआ अ थविरभावजादणिव्वेदाओ कुडुम्बभारुव्वहणजोग्गो दाणिं तुमं त्ति हिअए आरोविअ तवोवणं गदाओ ।

आर्य, कथं न रोदिष्यामि ? यदा तातो ऽज्जुका च स्थविरभावजातनिर्वेदौ कुटुम्बभारोद्वहनयोग्य इदानीं त्वमिति हृदय आरोप्य तपोवनं गतौ ।

सूत्रधारः—(सनिर्वेदम्) कथं मामपि परित्यज्य वनं प्रयातौ पितरौ ? तत् किमिदानीं युज्यते ? (विचिन्त्य) अथवा, कथमहं गुरुचरणपरिचर्यासुखं परित्यज्य गृहे तिष्ठामि ? कुतः,—

पित्रोर्विधातुं शुश्रूषां त्यक्त्वैश्वर्यं क्रमागतम् ।
वनं याम्यहमप्येष यथा जीमूतवाहनः ॥५॥

(निष्क्रान्तौ)

[आमुखम्]

(ततः प्रविशति जीमूतवाहनो विदूषकश्च)

जीमूतवाहनः—(सनिर्वेदम्) वयस्य आत्रेय,—

रागस्यास्पदमित्यवैमि न हि मे ध्वंसीति न प्रत्ययः
कृत्याकृत्यविचारणासु विमुखं को वा न वेत्ति क्षितौ ।
एवं निन्द्यमपीदमिन्द्रियवशं प्रीत्यै भवेद् यौवनं
भक्त्या याति यदीत्थमेव पितरौ शुश्रूषमाणस्य मे ॥६॥

Actress—(*Entering, in tears*) My lord, here I am, a wretched being. Let my lord give the orders that should be carried out.

Stage-manager—(*Observing the* Actress) Lady, while Nagananda is going to be staged here, why do you start weeping for nothing ?

Actress—My lord, why shouldn't I—when I see that revered father-and-mother-in-law, growing indifferent to worldly affairs on account of their old age, have retired to the penance-grove, considering in their mind that you are quite fit to bear the burden of the family.

नटी--(प्रवेश कर, आँसूभरे) जी, आ गई मैं अभागिन। आज्ञा दें, क्या करना है।

सूत्रधार--(नटी को देखकर) देवि, इधर हम तो नागानन्द का नाटक खेलने की सोच रहे हैं और उधर तुम अकारण रो रही हो।

नटी--क्यों न रोऊँ, जी? जब कि सासु और सुसर जी दोनों वृद्धावस्था के कारण संसार से विरक्त होकर और यह समझकर कि आप गृहस्थ का भार उठाने के सर्वथा योग्य हैं वान-प्रस्थी बन गए हैं।

सूत्रधार--अच्छा! तो मुझे भी छोड़कर मात-पिता ने जंगल की राह ले ली? तो अब क्या किया जाए? (सोचते हुए) या फिर मैं ही क्यों गुरु-जनों की सेवा-शुश्रूषा के आनन्द से वञ्चित हो यूँही घर में पड़ा रहूँ? क्योंकि,—

माता-पिता की परिचर्या निमित्त वंश-परम्परागत संपत्ति-वैभव को तिलाञ्जलि देकर, लो, मैं भी इस जीमूतवाहन की भाँति वन को प्रस्थान करता हूँ। (५)

(दोनों का निष्क्रमण)

[प्रस्तावना का अन्त]

(जीमूतवाहन और विदूषक का प्रवेश)

जीमूतवाहन—(दुःख से) मित्र आत्रेय,—

मैं जानता हूँ कि युवा अवस्था विषय-वासना का घर है, मैं इससे भी अनभिज्ञ नहीं कि यौवन शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। संसार में कौन नहीं जानता कि भले-बुरे (अथवा कर्तव्य-अकर्तव्य) के विचारने का उचित समय युवास्था नहीं। परन्तु इन्द्रियों के अधीन होने के कारण इतना दोष-युक्त होते हुए भी यह यौवन काल मेरे सन्तोष का कारण बन सकता है यदि यह इसी प्रकार भक्ति-पूर्वक माता-पिता की सेवा में कट जाए। (६)

Stage-manager—What! Have my parents retired to the forest, leaving me behind? What am I to do now? (*Reflecting*) Or, how can I deprive myself of the pleasure of attending at the feet of my elders and stay here at home? For,—

Spurning the comforts of a hereditary fortune, I shall also leave for the forest in order to serve my parents and follow the example of this Jimutavahana. (5)

[*Exeunt both*]

END OF PRELUDE

[*Enter* JIMUTAVAHANA *and the* JESTER]

Jimutavahana—(*Dejectedly*) Friend Atreya,—

I know that youth is the season of rising passion; I am also not unaware of its transience. Who on earth does not know that it flouts all discretion between right and wrong? Be it ever so reprehensible because of passion's sway, it can still contribute to my happiness if I pass it in serving my parents with the same devotion as ever. (6)

विदूषक—(सरोषम्) भो वअस्स, ण णिव्विण्णो एव तुमं एत्तिअं काल एदाणं जीवन्तमुआणं वुड्ढाणं किदे ईदिसं वणवासदुक्खं अणुहवन्तो ? ता पसीद, दाणिं पि दाव गुरुजणसुस्सूसानिब्बन्धादो निव्वत्तिअ इच्छापरिभोअरमणिज्जं रज्जसोक्खं अणुहवीअदु ।

(सरोषम्) भो वयस्य, न निर्विण्ण एव त्वमेतावन्तं कालमेतयोर्जीवन्मृतयोर्वृद्धयोः कृत ईदृशं वनवासदुःखमनुभवन् ? तत् प्रसीद, इदानीमपि तावद् गुरुजनशुश्रूषानिर्बन्धान्निवृत्येच्छापरिभोगरमणीयं राज्यसौख्यमनुभूयताम् ।

जीमूतवाहनः—सख, न सम्यगभिहितं त्वया । कुतः,—

तिष्ठन् भाति पितुः पुरो भुवि यथा सिंहासने किं तथा
किं संवाहयतः सुखानि चरणौ तातस्य किं राजकम् ।
किं भुक्ते भुवनत्रये धृतिरसौ भुक्तोज्झिते या गुरोर्
आयासः खलु राज्यमुज्झितगुरोस्तेनास्ति कश्चिद् गुणः ॥७॥

विदूषकः—(आत्मगतम्) अहो, से गुरुजणसुस्सूसाणुराओ ! (विचिन्त्य) भोदु, एवं दाव भणिस्सं । (प्रकाशम्) भो वअस्स, ण क्खु अहं केवलं रज्जसोक्खं उद्दिसिअ एव्वं भणामि, अण्णं पि दे करणिज्जं अत्थि ज्जेव्व ।

(आत्मगतम्) अहो, अस्य गुरुजनशुश्रूषानुरागः ! (विचिन्त्य) भवतु, एवं तावद्भणिष्यामि । (प्रकाशम्) भो वयस्य, न खल्वहं केवलं राज्यसौख्यमुद्दिश्यैवं भणामि, अन्यदपि ते करणीयमस्त्येव ।

जीमूतवाहनः—वयस्य, ननु कृतमेव करणीयम् । पश्य,—

Jester—(*Indignantly*) My dear friend, have you not grown sick of enduring so long the hardships of life spent in the forest for the sake of these two (wasted) old people who are more dead than alive ? Should it please you to have my advice, it is time you desisted from your resolve of attending on your parents and enjoyed the luxuries of the King's life which is so alluring on account of affording surfeit of all desires.

Jimutavahana—You are not right, my friend. For,—

The majesty a man acquires by sitting on the ground waiting

विदूषक—(रोष-पूर्वक) मित्र, इतने दिनों से इन बूढ़ों के कारण, जो जीते भी मरों के समान हैं, तू इस प्रकार वनवास के कष्टों को झेलता हुआ आज तक तनिक भी खिन्न नहीं हुआ ? तू मेरी मान और अब भी गुरु-जनों की शुश्रूषा के इस व्यर्थ के आग्रह से निवृत्त होकर अपनी इच्छा अनुसार सुखोपभोग करता हुआ अपने राज्य का अनन्द लूट ।

जीमूतवाहन—भाई, तेरी बात मुझे नहीं जँचती । क्योंकि,—

पिता के संमुख धरती पर बैठे हुए पुत्र की जो शोभा बन आती है, क्या वह सिंहासन पर बैठे आ सकती है ? माता-पिता के चरणों को दबाते हुए जो (स्वर्गिक) आनन्द स्वतः उपलब्ध होता है क्या वह राज-समूह पर अनुशासन से मिल सकता है ? क्या त्रिभुवन का राज्य उपभोग करने पर भी वह सन्तोष मनुष्य को कभी मिल सकता है जो माता-पिता को भोजन खिलाकर उनके भुक्त-शेष से प्राप्त होता है ? और, माता-पिता की सेवा से वंचित होकर तो राज्य केवल एक क्लेश ही बन जाता है । ऐसे राज्य से भला क्या लाभ ? (७)

विदूषक—(मन ही मन) अहो, गुरु-जनों की सेवा-सुश्रूषा म इसकी आसक्ति आश्चर्य-जनक है ! (विचारकर) अस्तु, तो मैं इसे इस प्रकार कहता हूँ । (प्रकट में) भई, मैंने केवलमात्र राज्योपभोग को ही लक्ष्य में रखकर यह बात नहीं कही थी । और कई काम भी तो तुम्हारे करने के हैं ।

जीमूतवाहन—भई, मैंने तो जो कुछ करना था, कर चुका । देख,—

---

upon his parent—can it ever be his whilst he sits on the throne? The pleasure a man finds in shampooing the feet of his parent—can it ever be his whilst he rules over feudatory chiefs? The satisfaction a man gets by partaking of what is left after feeding his parent—can it ever be his whilst he enjoys the lordship of the three worlds? Even Kingship, I daresay, is a curse for him who neglects his parent. What is there then to commend it? (7)

Jester—(*Aside*) O, what an obsession has this service of parents become with him! (*Reflecting*) Well, I shall then say this: (*Aloud*) "My friend, I did not simply mean to refer to the life of royal luxuries in what I said. There are other things, too, which are to be done by you."

Jimutavahana—My friend, I have indeed finished with all I had to do. Look,—

न्याय्ये वर्त्मनि योजिताः प्रकृतयः सन्तः सुखं स्थापिता
नीतो बन्धुजनस्तथात्मसमतां राज्ये ऽपि रक्षा कृता।
दत्तो दत्तमनोरथाधिकफलः कल्पद्रुमो ऽप्यर्थिने
किं कर्तव्यमतः परं कथय वा यत् ते स्थितं चेतसि ॥८॥

विदूषकः—भो वअस्स, अच्चन्तसाहसिओ मदङ्गदेवहदओ दे पडिवक्खो। तस्सि अ समासण्णट्ठिदे पहाणामच्चसमहिट्ठिदं पि ण तुए विणा रज्जं सुत्थिदं त्ति मे पडिभादि।

भो वयस्य, अत्यन्तसाहसिको मतङ्गदेवहतकस्ते प्रतिपक्षः। तस्मिंश्च समासन्नस्थिते प्रधानामात्यसमधिष्ठितमपि न त्वया विना राज्यं सुस्थितमिति मे प्रतिभाति।

जीमूतवाहनः—किं मतङ्गो राज्यं ग्रहीष्यतीत्याशङ्कसे ?

विदूषकः—अध इं ?

अथ किम् ?

जीमूतवाहनः—यद्येवं ततः किम् ? स्वशरीरतः प्रभृति सर्वं परार्थमेव मया परिपाल्यते। यत् तु स्वयं न दीयते, तत् तातानुरोधात्। तत् किमनेनावस्तुना चिन्तितेन ? वरं ताताज्ञैवानुष्ठिता। आज्ञापितो ऽस्मि तातेन, यथा—"वत्स जीमूतवाहन, बहुदिवसपरिभोगेण दूरीकृतं समित्कुशकुसुमम्। उपभुक्तमूलफलकन्दनीवारप्रायमिदं स्थानं वर्तते। तदितो मलयपर्वतं गत्वा निवासयोग्यमाश्रमपदं निरूपय" इति। तद्यावन्मलयमेव गच्छावः।

विदूषकः—जं भवं आणवेदि। एदु भवं।

यद् भवानाज्ञापयति। एतु भवान्

(उभौ परिक्रामतः)

The officers have already been set on the path of righteousness. Good men are living in happiness now. Kinsmen have been raised to a footing equal to my own. Security has been established in the State. To the needy I have given away even the Kalpa tree which yields them more than they desire. What more remains to be done after this ? Or tell me, what you have in mind. (8)

Jester—You know, my friend, the desperate Dare-Devil, that Matangadeva, is your foe. He being your next-door neighbour, I am afraid your kingdom is insecure without you, however well-administered it may be under your Prime Minister.

Jimutavahana—Do your apprehend that Matanga will annex my kingdom ?

Jester—Certainly.

Jimutavahana—Even if he does, what matters ? I hold

राजाधिकारियों को धर्म-मार्ग पर प्रवृत्त कर चुका हूँ। साधु-जनों के सुख की भी व्यवस्था कर दी गई है। सगे-संबन्धियों को अपने समान अधिकार दे दिये हैं। राज्य की रक्षा का प्रबन्ध भी पूरा-पूरा हो लिया। मुँह-माँगे से भी अधिक फल देने वाला कल्प-वृक्ष भी याचकों को दे दिया है। इसके अनन्तर अब करना ही क्या शेष रह गया? जो तेरे मन में हो, मुझे बता। (८)

विदूषक—हाँ, पर मित्र, मतङ्गदेव जैसा दुष्ट साहसी वीर तेरा शत्रु है। उसका राज्य यहीं निकट है। सो भले ही तूने राज्य-व्यवस्था का भार अपने प्रधान मंत्री को सौंप दिया है, पर मेरी दृष्टि में तेरे बिना राज्य सुरक्षित नहीं।

जीमूतवाहन—तो तुझे डर है कि मतङ्ग मेरा राज्य हड़प लेगा?

विदूषक—और क्या?

जीमूतवाहन—मान लो, यदि हड़प ही ले तो भी क्या हुआ? मैंने तो अपना सब कुछ, अपना शरीर तक परोपकार के लिये धरोहर समझ रखा है। और जो मैंने अभी तक अपने-आप ही इस (राज्य) को नहीं दे डाला सो केवल पिता जी के अनुरोध से। पर ऐसी तुच्छ वस्तु की चिन्ता करने से ही क्या लाभ? पिता जी की आज्ञा का पालन करना ही सबसे अच्छी बात है। मुझे पिता की आज्ञा हुई है कि "पुत्र, जीमूतवाहन, इतने दिन (इस वनस्थली का) उपभोग करते-करते यहाँ समिधाएँ, कुशाएँ तथा पुष्प आदि सब कुछ निपट चुका है। यहाँ अब कन्द-मूल, फल और नीवार-शष्प प्रायः समाप्त हो रहे हैं। तो, अब तू तनिक मलयाचल की ओर जाकर वहाँ हमारे रहने के लिये किसी आश्रम की खोज कर।" तो आ भई, दोनों ही मलय की ओर चलें।

विदूषक—जैसी आपकी आज्ञा। चलिये!

(दोनों चल पड़ते हैं)

---

everything, not excluding my own person, as a sacred trust for the good of others. That I have not voluntarily given it (*i. e.* my kingdom) away is all due to my deference to the wishes of my father. But why bother about a trifle like this? Better I should carry out the behest of my father. Father has commanded me saying, "Jimutavahana dear, flowers, grass and fuel have grown sparse here from continued picking over all these days, and the edible roots, fruits and tubers and rice have have been practically exhausted from this place by constant consumption. Go ye, therefore, to the Malaya hills and find out a place of hermitage fit for our living." So, come, let us go to Malaya.

Jester—As you command. Come, Sir.

[*Both walk about*]

विदूषकः—(अग्रतो ऽवलोक्य) भो वअस्स, पेक्ख पेक्ख ! एसो क्खु सरसघणसिणिद्धचन्दणवणच्छङ्गपरिमिलणलग्गबहलपरिमलो विसमतडणिबडणजज्जरिज्जन्तणिज्भरुच्चलिअसिसिरसीअरासारवाही पढमसङ्गमोक्कण्ठिअपिआकण्ठग्गहो विअ मग्गपरिस्समं अवणअन्तो रोमञ्चेदि पिअवअस्सं मलअमारुओ ।

(अग्रतो ऽवलोक्य) भो वयस्य, प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व ! एष खलु सरसघनस्निग्धचन्दनवनोत्सङ्गपरिमिलनलग्नबहलपरिमलः विषमतटनिपतनजर्जरायमाणनिर्भरोच्चलितशिशिरशीकरासारवाही प्रथमसङ्गमोत्कण्ठितप्रियाकण्ठग्रह इव मार्गपरिश्रममपनयन् रोमाञ्चयति प्रियवयस्यं मलयमारुतः ।

जीमूतवाहनः—(निरूप्य) अये, कथं प्राप्ता एव मलयपर्वतम् ! (सर्वतो दत्तदृष्टिः) अहो रामणीयकमस्य ! तथा हि,—

माद्यद्दिग्गजगण्डभित्तिकषणैर् भग्नस्रवच्चन्दनः
क्रन्दत्कन्दरगह्वरो जलनिधेरास्फालितो वीचिभिः ।
पादालक्तकरक्तमौक्तिकशिलः सिद्धाङ्गनानां गतैः
सेव्यो ऽयं मलयाचलः किमपि मे चेतः करोत्युत्सुकम् ॥९॥

तदेह्यारुह्य निवासयोग्यमाश्रमपदं निरूपयावः ।

(आरोहणं नाटयतः)

जीमूतवाहनः—(निमित्तं सूचयन्) सखे,—

स्पन्दते दक्षिणं चक्षुः फलकांक्षा न मे क्वचित् ।
न च मिथ्या मुनिवचः कथयिष्यति किं न्विदम् ॥१०॥

विदूषकः—भो वअस्स, आसण्णं दे पिअं णिवेदेदि ।

भो वयस्य, आसन्नं ते प्रियं निवेदयति ।

Jester—(*Looking ahead*) Look, my friend, look here! This Malaya breeze, laden heavily with fragrance from its contact with fresh and shady thickets of sandal trees and wafting the cool sprays tossed by rills dashing upon rugged rocks, thrills my friend like the embrace of the sweet-heart anxiously waiting for the first meeting, and removes the fatigue of the journey.

Jimutavahana—(*Observing*) O, we have already reached the Malaya hill! (*Looking all round*) How lovely it is! For,—

Here flows the sap of sandalwood trees broken by wild elephants as they rub their temples against them. Here the vaults of caves are resonant with the dash of the breakers. Here the rocks of pearly feldspar bear the red foot-prints of Siddha women walking on them.

विदूषक—देखो, मित्र, देखो तो सही, यह मलय वायु यात्रा की थकावट को दूर करती हुई तुम्हारे शरीर में इस प्रकार रोमाञ्च का संचार कर रही है जैसे कोई प्रेयसी प्रथम मिलने की उत्सुकता से आकर गले में बाहें डाल रही हो। सरस तथा घने, छायाकुल चन्दनवन में से बहती हुई यह समीर पुष्प-धूलि से लदी हुई और ऊबड़-खाबड़ चट्टानों पर गिरने से उछलकर उठी हुई पानी की शीतल फुहार को साथ लिये हुए कैसे बह रही है !

जीमूतवाहन—(देखकर) अरे, हम तो मलय-पर्वत पर आ ही पहुँचे ! (सभी ओर दृष्टि दौड़ाते हुए) क्या ही रमणीयता है इसकी ! क्योंकि,—

यह मलयाचल तो वास्तव में उपभोग्य स्थान है और न जाने मेरे हृदय में कैसी उत्कण्ठा उत्पन्न कर रहा है। कहीं इसमें मस्ताने दिग्गजों के गण्ड-स्थल की रगड़ से टूटे हुए चन्दन-वृक्षों से रस टपक रहा है, कहीं समुद्र की उत्ताल तरङ्गों के टकराने से इसके गुहा-कन्दर प्रतिध्वनित हो रहे हैं, तो कहीं महावर लगा कर चलती हुई सिद्ध युवतियों के चरण-राग से इसकी मोतियों के समान स्वच्छ शिलाएँ रञ्जित हो रही हैं। (६)

आओ, तनिक और ऊपर चढ़कर किसी निवास-योग्य आश्रम की पड़ताल करें।

(दोनों आरोहण का अभिनय करते हुए)

जीमूतवाहन—(शुभ शकुन की अनुभूति सूचित करते हुए) मित्र,—

मेरी दाईं आँख फरक रही है। परन्तु मुझे तो किसी फल की आकांक्षा है नहीं। और न ही मुनिजनों (शकुन-शास्त्रियों) का वचन कभी असत्य हो सकता है। तो इसका क्या अर्थ समझा जाए? (१०)

विदूषक—मित्र, यह अवश्य ही निकट में होने वाले तेरे किसी मङ्गल की सूचना है।

Malaya hills are indeed a fine resort and fill my mind with great excitement. (9)

Come, let us climb it and find out a hermitage suitable for living in.

[*They act as if climbing*]

Jimutavahana—(*Indicating an omen*) Friend,—

My right eye throbs but I have no desire for any boon. The word of the wise cannot be untrue. Then what possibly could it mean? (10)

Jester—My dear friend, it only augurs for you of some windfall at hand.

जीमूतवाहनः—एवं नाम, यथा भवान् आह ।

विदूषकः—(सहर्षम्) भो वअस्स, एदं क्खु सविसेसघणसिणिद्धपाअवोवसोहिदं सुरहिहविग्गंधगब्भिणुद्दामधूमणिग्गमं अणुव्विग्गमग्गसुहणिसण्णसावअगणं तवोवणं विअ लक्खीअदि ।

(सहर्षम्) भो वयस्य, एतत् खलु सविशेषघनस्निग्धपादपोपशोभितं सुरभिहविर्गन्धगर्भितोद्दामधूमनिर्गमम् अनुद्विग्नमार्गसुखनिषण्णश्वापदगणं तपोवनमिव लक्ष्यते ।

जीमूतवाहनः—सखे, सम्यगुपलक्षितम् । तपोवनमेवैतत् । कुतः,—

वासोऽर्थं दययैव नातिपृथवः कृत्तास्तरूणां त्वचो
भग्नालक्ष्यजरत्कमण्डलु नभः-स्वच्छं पयो नैर्झरम् ।
दृश्यन्ते त्रुटितोज्झिताश्च वटुभिर्मौञ्ज्यः क्वचिन्मेखला
नित्याकर्णनया शुकेन च पदं साम्नामिदं पठ्यते ॥११॥

तदेहि, प्रविश्यावलोकयावः ।

(प्रवेशं नाटयतः)

जीमूतवाहनः—(सर्वतो विलोक्य) अहो नु खलु मुदितमुनिजनप्रविचार्यमाणसंदिग्धवेदवाक्यविस्तरस्य पठद्वटुजनाच्छिद्यमानार्द्रसमिधः तापसकुमारिकापूर्यमाणबालवृक्षकालवालस्य प्रशान्तरमणीयता तपोवनस्य ! इह हि,—

मधुरमिव वदन्ति स्वागतं भृङ्गशब्दैर्
नतिमिव फलनम्रैः कुर्वते ऽमी शिरोभिः ।
मम ददत इवार्घ्यं पुष्पवृष्टीः किरन्तः
कथमतिथिसपर्यां शिक्षिताः शाखिनो ऽपि ॥१२॥

Jimutavahana—Be it as you say.

Jester—(*Joyfully*) Look there, my friend, it appears to be a penance-grove. How magnificent it is with its dense and shady trees ! Thick curls of smoke laden with the fumes of fragrant oblations are rising from it. The beasts are lying at ease on the footpaths with an air of reassurance.

Jimutavahana—Friend, you have guessed well. This, no doubt, is a penance grove. For here,—

Out of compassion indeed, has the bark of trees been removed for raiment in thin strips. Old and broken pails are visible at the bottom of sky-clear waters of the brooks. Broken girdle-strings of Munja flung away by students are seen scattered here and there.

जीमूतवाहन—जैसे आप कहते हैं वैसे ही हो।

विदूषक—(हर्ष से) अरे, यह तो सामने तपोवन सा दीख पड़ता है ! देखो ना, कितनी घनी छाया वाले वृक्ष शोभा दे रहे हैं, सुगन्धित आहुति द्रव्यों की सुरभि से भरा धुआँ निकल रहा है, और वन्य-पशु मार्ग ही में कैसे निर्भय होकर सुख-पूर्वक बैठे हुए हैं !

जीमूतवाहन—तूने ठीक पहचाना, मित्र। यह तपोवन ही है, क्योंकि यहां,—

वस्त्रार्थ वृक्षों की छाल दयाभाव के कारण ही अधिक मोटी नहीं उतार ली गई। झरनों के आकाश-सम निर्मल जल में टूटे-फूटे पुराने कमण्डलु पड़े दिखाई दे रहे हैं। कहीं-कहीं ब्रह्मचारियों की टूटी और फेंकी हुई मुञ्ज की मेखलाएँ भी पड़ी हैं और यह देखो, प्रतिदिन सुनने के अभ्यास से तोता भी साम-मन्त्रों का गान कर रहा है। (११)

आओ, चलें अन्दर चलकर देखें।

(प्रवेश का अभिनय करते हुए)

जीमूतवाहन—(सभी ओर दृष्टि दौड़ाते हुए) अहो, तपोवन कितना शान्त और सुन्दर है ! कहीं मुनिजन प्रसन्नता-पूर्वक संदिग्ध वेद-वाक्यों पर आपसमें विचार कर रहे हैं, कहीं ब्रह्मचारी अपने पाठ को दुहराते हुए साथ-साथ हरी-हरी समिधाएँ काट रहे हैं और कहीं तपस्वि-कन्याएँ पौधों को जल से सींच रही हैं। अरे यहाँ तो,—

वृक्षों को भी अतिथि-सत्कार की कैसी शिक्षा दी गई है ! ये भौरों की मीठी गुञ्जार से मेरा स्वागत कर रहे हैं और फल-भार से झुकी हुई शाखाओं से मुझे नमस्कार कर रहे हैं तथा अपने फूलों को बिखेरते हुए मुझे अर्घ्य प्रदान कर रहे हैं। (१२)

The parrot repeats the verses of Saman hymns as it hears them everyday. (11)

Come, let us get in and see.

[*They act as if entering*]

Jimutavahana—(*Looking all round*) How inviting is the serene charm of the penance-grove ! Here the contented sages are busy discussing the doubtful passages of the Vedic texts, the students, while repeating their lessons, are cutting the fresh fire-wood and the hermit girls are filling the basins of young plants with water. What !—

Have even the trees here been taught the etiquette of receiving the guests ? For, they extend to me a sweet welcome as it were with the humming of the bees, they make obeisance to me as it were with their boughs bending low with fruit, and they present an offering to me as it were by shedding their flowers. (12)

तन्निवासयोग्यमिदं तपोवनम् । मन्ये भविष्यतीह निवसतामस्माकं निर्वृतिः ।

विदूषकः— भो वअस्स, किं णु क्खु एदे ईसिवलिअकन्धरा णिच्चलमुहावसरंतदरदलिअदब्भगब्भकवला समुण्णमिअदिण्णेक्ककण्णा णिमीलिदलोअणा आअण्णअंतो विअ हरिणा लक्खिअंति ।

भो वयस्य, किं नु खल्वेते ईषद्वलितकन्धरा निश्चलमुखापसरद्दरदलितदर्भगर्भकवलाः समुन्नमितदत्तैककर्णाः निमीलितलोचना आकर्णयन्त इव हरिणा लक्ष्यन्ते ।

जीमूतवाहनः—(कर्णं दत्त्वा) सखे, सम्यगुपलक्षितं भवता । तथा हि,—

स्थानप्राप्त्या दधानं प्रकटितगमकां मन्द्रतारव्यवस्थां
निर्ह्लादिन्या विपञ्च्या मिलितमलिरुतेनेव तन्त्रीस्वनेन ।
एते दन्तान्तरालस्थिततृणकवलच्छेदशब्दं नियम्य
व्याजिह्माङ्गाः कुरङ्गाः स्फुटललितपदं गीतमाकर्णयन्ति ॥१३॥

विदूषकः—भो वअस्स, को णु क्खु एसो तवोवणे गाअदि ?

भो वयस्य, को नु खल्वेष तपोवने गायति ?

जीमूतवाहनः—यथा कोमलाङ्गुलितलाभिहन्यमाना नातिस्फुटं क्वणन्ति तन्त्र्यः, काकलीप्रधानं च गीयते, तथा तर्कयामि (अङ्गुल्यग्रेणाग्रतो निर्दिशन्) अस्मिन्नायतने देवतामाराधयन्ती काचिद् दिव्ययोषिदुपवीणयतीति ।

विदूषकः—भो वअस्स, एहि, एदं देवाअदणं पेक्खह्म ।

भो वयस्य, एहि, एतद् देवतायतनं प्रेक्षावहे ।

This penance-grove is really a place fit for living. I believe we shall be quite happy while living here.

Jester—Friend, how is it that the deer here have slightly turned their necks ? They have stopped munching and the half-chewn morsels of grass are falling from their motionless mouths. They seem to be listening to something with an ear erect and attentive and eyes closed.

Jimutavahana—(*Lending an ear*) Friend, you have rightly noticed it. For surely,—

These deer, bending their necks and ceasing to crunch the grass held between their teeth, are listening to some song, the words of which are sweet and clear, and which, mingling with the sonorous tune of the guitar as if with the humming of bees, displays the

यह तपोवन वास्तव में हमारे रहने के योग्य है । मुझे विश्वास है कि यहाँ रहते हुए हमें बहुत सुख प्राप्त होगा ।

विदूषक—मित्र देखो, ये हरिण कुछ सुनते से दिखाई देते हैं, क्योंकि इन्होंने अपनी गर्दनें कुछ टेढ़ी करके मुख चलाना बन्द कर दिया है जिससे अध-चबाई घास के ग्रास नीचे गिर रहे हैं और ये आँखें बन्द करके अपने एक कान को उठाकर एक ओर लगाए हुए हैं ।

जीमूतवाहन—(कान लगाकर सुनता हुआ) मित्र, तूने ठीक पहचाना । क्योंकि,—

ये हरिण अपने अङ्गों को टेढ़ा किये, दाँतों में लिये हुए घास के कौर का चबाना बन्द करके निश्चय ही किसी स्पष्ट और मधुर शब्दों वाले गीत को सुन रहे हैं, यह गीत भौरों की गूँज के सदृश बजती हुई वीणा के स्वर से संमिलित है और इसमें यथोचित कण्ठादि स्थानों से उच्चरित होने के कारण स्वरों का उत्थान-प्रकार स्पष्ट है और उनकी मन्द्र-तार (उतार-चढ़ाव की) व्यवस्था भी ठीक है । (१३)

विदूषक—भाई, तपोवन में यह कौन गा रहा है ?

जीमूतवाहन—क्योंकि कोमल अंगुलियों के स्पर्श से तारें बहुत धीमे-धीमे बज रही हैं और गाना भी मधुर-मन्द स्वर में हो रहा है, इसलिये मेरा अनुमान है (अंगुली से सामने को निर्देश करते हुए) कि इस मन्दिर में देवता के आराधनार्थ कोई दिव्याङ्गना वीणा बजा रही है ।

विदूषक—मित्र, आओ चलें, और इस देवालय के दर्शन करें ।

---

successive modulations of grave and acute pitches with the various notes arising from their proper places. (*13*)

Jester—Friend, who could be singing in the penance-grove ?

Jimutavahana—As the strings plucked by a delicate finger do not twang very loudly and the song, too, is mainly being sung in low and sweet tones, I presume it is some celestial damsel who is singing to the accompaniment of a lute to propitiate the deity in yon—(*Pointing in front with the tip of his finger*)—temple.

Jester—Come, friend, let us visit this temple.

जीमूतवाहनः—साधूक्तम् । वन्द्याः खलु देवताः । (उपसर्पन्, सहसा स्थित्वा) वयस्य, कदाचिद् द्रष्टुमनर्हो ऽयं जनो भविष्यति । तदनेन तावत् तमालगुल्मेनान्तरितौ देवतादर्शनावसरं प्रतिपालयावः । (तथा कुरुतः)

(ततः प्रविशति भूमावुपविष्टा वीणां वादयन्ती मलयवती, चेटी च)

मलयवती—(वीणया सह गायति)—

उत्फुल्ल-कमल-केसर-पराग-गौर-द्युते, मम हि गौरि ।
अभिवाञ्छितं प्रसिध्यतु भगवति, युष्मत्प्रसादेन ॥१४॥

जीमूतवाहनः—(कर्णं दत्त्वा) वयस्य, अहो गीतम् ! अहो वाद्यम् !—

व्यक्तिर् व्यञ्जनधातुना दशविधेनाप्यत्र लब्धामुना
विस्पष्टो द्रुतमध्यलम्बितपरिच्छिन्नस्त्रिधा ऽयं लयः ।
गोपुच्छाप्रमुखाः क्रमेण यतयस्तिस्रो ऽपि संवादितास्
तत्त्वौघानुगताश्च वाद्यविधयः सम्यक् त्रयो दर्शिताः ॥१५॥

चेटी—भट्टिदारिए, चिरं क्खु वाइदं । ण क्खु दे परिस्समो अग्गहत्थाणं ?
भर्तृदारिके, चिरं खलु वादितम् । न खलु ते परिश्रमो ऽग्रहस्तयोः ?

मलयवती—हञ्जे चउरिए, भअवदीए पुरदो वादअन्तीए कुदो मम परिस्समो ?
हञ्जे चतुरिके, भगवत्याः पुरतो वादयन्त्याः कुतो मम परिश्रमः ?

Jimutavahana—A good idea. Gods must needs be worshipped. (*Advancing and then stopping suddenly*) But friend, there may be a lady whom it may be objectionable for us to see. So, let us move behind this clump of Tamala trees and wait for the opportunity of having a view of the deity. (*They do so*)

[*Enter* MALAYAVATI *seated on the ground and playing on the lute, and her* MAID]

Malayavati—(*Sings to the accompaniment of the lute*)—

Like unto a lily in bloom so fair
With filaments and pollen bright,
My heart's desire be met with yer fa'or,
O Gauri, my Goddess so white ! (*14*)

जीमूतवाहन—ठीक कहा। देवताओं की पूजा करनी ही चाहिये। (आगे बढ़ता हुआ, सहसा रुककर) पर मित्र, कहीं यह महिला ऐसी न हो जिसे देखना हमारे लिये उचित ही न हो ? अतः, हम इस तमाल के झुंड की ओट में खड़े होकर देवता के दर्शन करने के अवसर की प्रतीक्षा करें। (दोनों ओट में हो जाते हैं)

(भूमि पर बैठी वीणा बजाती मलयवती, तथा चेटी का प्रवेश)

मलयवती—(वीणा के साथ गाती है)—

विकच कमल की पुष्प-धूलि सम गौर-वर्ण अयि गौरी !
तव प्रसाद से मनः-कामना देवि, सफल हो मोरी ॥ (१४)

जीमूतवाहन—(कान लगाकर) वाह, क्या ही अद्भुत गाना और क्या ही अनूठा बजाना है !—

(वीणा) बजाने के दशों विशेषक-तत्त्व कैसे भली भाँति व्यक्त हो रहे हैं, लय में द्रुत, मध्य और विलम्बित गतियाँ कितनी स्पष्टता से अलग-अलग प्रस्तुत हो रही हैं ! गोपुच्छा आदि तीनों यतियाँ किस अद्भुत क्रम से समन्वित हो रही हैं और वादनकला के तीनों प्रकार—तत्त्व, ओघ, और अनुगत—किस कौशल से दिखाए जा रहे हैं ! (१५)

चेटी—बीबी जी, बजाते-बजाते आप को कितनी देर हो गई है ! क्या आप की उँगलियाँ थकी नहीं ?

मलयवती—भला चतुरिका, देवी के सामने बजाते हुए मुझे थकावट कैसी ?

Jimutavahana—(*Lending ear*) O friend, what a voice and what an accompaniment! For,—

Distinctness has now been attained here through the 'distinguishing' mode of playing, in all its ten forms ;
The tempo, in its three-fold division of allegro, moderato, and adagio, has been clearly marked ;
All three pauses, with the 'Cow-tail' first, have been brought out in due order ;
And the three styles of instrumental playing—tranquil, lively, and intermediate—have been appropriately shown. (15)

Maid—Princess ! You have played long enough, I say. Don't your fingers ache indeed ?

Malayavati—Chaturika, my girl, how can I feel the ache, playing before the Goddess ?

चेटी—(साधिक्षेपम्) भट्टिदारिए, णं भणामि किं एदाए णिक्करुणाए पुरदो वाइदेण ? एत्तिअं कालं कण्णआजणदुक्खरेहिं णिअमोपवासेहिं आराहअन्तीए ण दे पसादं दंसेदि ।

(साधिक्षेपम्) भर्तृदारिके, ननु भणामि किमेतस्या निष्करुणायाः पुरतो वादितेन ? इयन्तं कालं कन्यकाजनदुष्करैर्नियमोपवासैराराधयन्त्या न ते प्रसादं दर्शयति ।

विदूषकः—भो वअस्स, कण्णआ क्खु एसा, कीस ण पेक्खह्म ?

भो वयस्य, कन्यका खल्वेषा, कस्मान्न प्रेक्षावहे ?

जीमूतवाहनः—को दोषः ? निर्दोषदर्शना हि कन्यकाः । किन्तु कदाचिदस्मान् दृष्ट्वा बालभावसुलभलज्जासाध्वसान्न चिरमिह तिष्ठेत् । तदनेनैव तावल्लताजालान्तरेण पश्यावः ।

(उभौ तथा पश्यतः)

विदूषकः—(दृष्ट्वा, सविस्मयम्) भो वअस्स, पेक्ख, पेक्ख ! एसा ण केवलं वीणाए कण्णाणं एव्व सुहं उप्पादेदि, इमिणा वीणाविण्णाणाणुरूवेण रूवेण अक्खीणं पि सुहं उप्पादेदि । का उण एसा ? किं दाव देवी, आदु णाअकण्णआ, आहो विज्जाहरदारिआ, उदाहो सिद्धउलसंभवेत्ति ?

(दृष्ट्वा, सविस्मयम्) भो वयस्य, प्रेक्षस्व, प्रेक्षस्व ! एषा न केवलं वीणया कर्णयोरेव सुखमुत्पादयति, अनेन वीणाविज्ञानानुरूपेण रूपेणाक्ष्णोरपि सुखमुत्पादयति । का पुनरेषा ? किं तावत् देवी, अथवा नागकन्यका, आहोस्विद् विद्याधरदारिका, उताहो सिद्धकुलसंभवेति ?

जीमूतवाहनः—(सस्पृहमवलोकयन्) वयस्य, केयमिति नावगच्छामि । एतत् पुनरहं जाने—

Maid—(*Tauntingly*) Princess, I mean to say what is the good of playing before this Goddess who is so heartless ? What time have you been trying to please her (by macerating yourself) with vows and fasts so exacting of a young maiden (like yourself), but I don't see if she has shown any favour to you !

Jester—My friend, she is a maiden, I am sure. What objection can there be to our looking at her ?

2-18

चेटी—(ताना देती हुई) बीबी जी, मैं तो कह रही थी इस हृदय-हीन देवी के संमुख बजाने से क्या लाभ जो इतने दिन तक ऐसे व्रत उपवास आदि से, जो (आप सरीखी) कन्याओं के लिये कठोर हैं, आराधित होकर भी आपके ऊपर अनुग्रह नहीं करती ?

विदूषक—अरे मित्र, यह तो कँवारी कन्या है, इसलिये क्यों न देखें ?

जीमूतवाहन—क्या दोष है ? कन्याओं के देखने में कोई हानि नहीं। परन्तु कहीं हमें देखते ही बालपन के सहज लज्जाभाव से सहमकर यह यहाँ देर तक ठहरे ही नहीं। तो फिर इसी लताओं के झुंड की आड़ से उसे देखते हैं।

(दोनों वैसे ही झाँकते हैं)

विदूषक—(देखकर, आश्चर्य से) मित्र देखो, देखो ना ! यह अपने मधुर वीणा-वादन से केवल कानों को ही सुख नहीं पहुँचाती अपि तु वादन-कौशल के अनुरूप अपने सौन्दर्य से आँखों को भी सुखी करती है। परन्तु यह है कौन ? क्या यह देवी है या नाग बाला, विद्याधरी है या सिद्ध कुल की लड़की ?

जीमूतवाहन—(चाव से देखते हुए) भई, मुझे तो कुछ समझ नहीं आता यह है कौन ? मैं तो केवल इतना जानता हूँ कि—

Jimutavahana No harm, I should think. It is no sin to look at girls who are not yet married. But I am afraid that no sooner does she see us than she may leave the place in nervousness born of bashfulness so natural to her young age. So let us see her from behind this cluster of creepers.

[*Both see in that manner*]

Jester—(*Seeing, with amazement*) Look, my friend, look ! Not only does she ravish the ear by her skill on the lute, but she equally fetes the eye with her beauty which matches her art. I wonder who she is ? Is she a girl from heaven, or a Naga-maiden, or the daughter of a Vidyadhara or one born of a Siddha family ?

Jimutavahana—(*Looking at her with longing*) Friend, I cannot tell who she is, but this much I know that--

स्वर्गस्त्री यदि तत् कृतार्थमभवच्चक्षुःसहस्रं हरेर्,
नागी चेन्न रसातलं शशभृता शून्यं मुखेऽस्याः सति ।
जातिर्नः सकलान्यजातिजयिनी विद्याधरी चेदियं,
स्यात्सिद्धान्वयजा यदि त्रिभुवने सिद्धाः प्रसिद्धास्ततः ॥१६॥

विदूषकः—(नायकमवलोक्य, सहर्षमात्मगतम्) दिट्ठिआ चिरस्स दाव कालस्स पडिदो क्खु एसो गोअरे मम्महस्स, अहवा (आत्मानं निर्दिश्य) मम एव्व बह्मणस्स ।

(नायकमवलोक्य, सहर्षमात्मगतम्) दिष्ट्या चिरस्य तावत् कालस्य पतितः खल्वेष गोचरे मन्मथस्य, अथवा (आत्मानं निर्दिश्य) ममैव ब्राह्मणस्य ।

चेटी—(सप्रणयम्) भट्टिदारिए, णं भणामि किं एदाए णिक्करुणाए पुरदो वाइदेण ? (इति वीणामाक्षिपति)

(सप्रणयम्) भर्तृदारिके, ननु भणामि किमेतस्या निष्करुणायाः पुरतो वादितेन ? (इति वीणामाक्षिपति)

मलयवती—(सरोषम्) हञ्जे, मा मा भअवदिं गोरिं अहिक्खिव । अज्ज किदो मे भअवदीए पसादो ।

(सरोषम्) हञ्जे, मा मा भगवतीं गौरीमधिक्षिप । अद्य कृतो मे भगवत्या प्रसादः ।

चेटी—(सहर्षम्) भट्टिदारिए, कहेहि दाव कीरिसो सो पसादो ?

(सहर्षम्) भर्तृदारिके, कथय तावत् कीदृशः स प्रसादः ?

मलयवती—हञ्जे, अज्ज जाणामि सिविणए एव्वं एव्व वीणं वादअंती भअवदीए गोरीए भणिदह्मि, "वच्छे, परितुट्ठह्मि तुह एदिणा वीणाविण्णाणादिसएण इमाए बालजणदुल्लहाए असाहारणाए ममोवरि भत्तीए अ । ता विज्जाहरचक्कवट्टी अइरेण दे पाणिग्गहणं णिव्वट्टइस्सदि" त्ति ।

हञ्जे, अद्य जानामि स्वप्न एवमेव वीणां वादयन्ती भगवत्या गौर्या भणितास्मि, "वत्से, परितुष्ठास्मि तवैतेन वीणाविज्ञानातिशयेन अनया बालजनदुर्लभयाऽसाधारणया ममोपरि भक्त्या च । तद् विद्याधरचक्रवर्ती अचिरेण ते पाणिग्रहणं निर्वर्तयिष्यति" इति ।

If she be a damsel from heaven, then thrice-blest are the thousand eyes of Indra ; if she be a Naga-maiden, then it is wrong to say that Nether world has no moon, with such a face to illumine

यदि यह देव-कन्या है तो (सहस्राक्ष) इन्द्र की सहस्र आँखों के भाग्य जाग उठे। यदि नाग-कन्या है तो इसके मुख की उपस्थिति में पाताल में चन्द्रमा का अभाव कैसा ? यदि यह विद्याधरी है तो हमारी विद्याधर-जाति विश्व की सभी जातियों में सिरमौर हो गई ! और यदि यह सिद्ध-बाला है तो सिद्धों की कीर्ति तीनों लोकों में फैल गई। (१६)

विदूषक—(नायक को देखकर, सहर्ष मन ही मन) **अहो भाग्य ! बड़ी देर के पीछे यह कामदेव के वश में आया है, अथवा** (अपनी ओर निर्देश करके) **मुझ ब्राह्मण के वश में।**

चेटी—(प्रणय से) **बीबी जी, मैं तो कह रही थी, इस हृदय-हीन देवी के संमुख बजाने से क्या लाभ ?** (और वीणा छीन लेती है)

मलयवती—सखि, भगवती गौरी को तो न कोस । आज उसने मेरे ऊपर अनुग्रह कर ही दिया है।

चेटी—(सहर्ष) **कैसा अनुग्रह, बीबी जी ? बताओ तो।**

मलयवती—सखि, आज स्वप्न में इसी प्रकार वीणा बजाते हुए मुझे भगवती गौरी ने कहा, "पुत्रि, मैं तेरे इस वीणा-वादन के अद्भुत कौशल से और बाल-दुर्लभ तेरी इस अनुपम भक्ति से सन्तुष्ट हूँ, सो (मैं तुझे वर देती हूँ कि) विद्याधरों का चक्रवर्ती राजकुमार शीघ्र ही तेरा पाणि-ग्रहण करेगा।"

---

it! If she be a Vidyadhara girl, then indeed our race stands superior to all other races; and if she be born in a Siddha family, then the Siddhas have won immortal fame in all the three worlds. (16)

Jester—(*Looking at the* HERO, *joyfully aside*) Luckily, at long last, he has fallen into the snare of Kama, or rather (*Pointing to himself*) of a Brahmana, namely, myself.

Maid—(*Affectionately*) I tell you, Princess, what boots it to play before this heartless Goddess ? (*She snatches away the lute*)

Malayavati—(*Angrily*) Maid, don't blaspheme the Goddess Gauri. She has already conferred a favour on me tonight.

Maid—(*Joyfully*) Tell me, Princess, of what nature that favour is ?

Malayavati—Dear girl, this even now I clearly remember that while in my dream I was playing on the lute as I am doing now, the Goddess Gauri (appeared and) said, "My child, I am pleased with thine extraordinary skill in playing on the lute and with thine unusual devotion to me, so rare to find in a tender age. Accordingly, (I bless thee that) a Paramount Sovereign of the Vidyadharas shall take thy hand in marriage before long."

चेटी—भट्टिदारिए, जइ एव्वं, ता कीस सिविणए त्ति भणासि? णं हिअएच्छिदो एव्व देवीए वरो दिण्णो।

भर्तृदारिके, यद्येवं, तत् कस्मात् स्वप्न इति भणसि ? ननु हृदयेष्ट एव देव्या वरो दत्तः।

विदूषकः—(श्रुत्वा) भो वअस्स, अवसरो क्खु अह्माणं देवीदंसणस्स। ता एहि पविसह्म।

(श्रुत्वा) भो वयस्य, अवसरः खल्वस्माकं देवीदर्शनस्य। तदेहि प्रविशावः।

जीमूतवाहनः—न तावत् प्रविशामि।

विदूषकः—(अनिच्छन्तमिव नायकं बलादाकृष्य, उपसृत्य) होदि, सच्चं एव्व एसा भणादि। वरो एव्व एसो देवीए दिण्णो।

(अनिच्छन्तमिव नायकं बलादाकृष्य, उपसृत्य) भवति, सत्यमेवैषा भणति। वर एवैष देव्या दत्तः।

मलयवती—(ससाध्वसमुत्तिष्ठन्ती, जीमूतवाहनमुद्दिश्य) हञ्जे, को णु क्खु एसो ?

(ससाध्वसमुत्तिष्ठन्ती, जीमूतवाहनमुद्दिश्य) हञ्जे, को नु खल्वेषः ?

चेटी—(जीमूतवाहनं निरूप्य) इमाए अणण्णसरिसीए आकिदीए एसो सो भअवदीए पसादो त्ति तक्केमि।

(जीमूतवाहनं निरूप्य) अनया ऽनन्यसदृश्याकृत्या एष स भगवत्याः प्रसाद इति तर्कयामि।

(मलयवती सस्पृहं सलज्जं च जीमूतवाहनमवलोकयति)

जीमूतवाहनः—

तनुरियं तरलायतलोचने, श्वसितकम्पितपीनघनस्तनि।
श्रममलं तपसैव गता पुनः किमिति संभ्रमकारिणि, खिद्यसे॥१७॥

Maid—Princess, if that be so, then why call it a dream? The Goddess has indeed granted you the love of your heart.

Jester (*Hearing it*) Well, friend, now is the right time for us to see the Goddess. Come, let us enter.

चेटी—बीबी, यदि यही बात है तो फिर इसे स्वप्न क्यों कहती हो ? यह तो देवी ने आपको मुँह-माँगा वर दिया है ।

विदूषक—(सुनकर) आओ मित्र, अब हमारा भी देवी दर्शन का यही अवसर है। चलो अन्दर चलें।

जीमूतवाहन—मैं नहीं जाऊँगा।

विदूषक—(इच्छा न दिखाते हुए नायक को बल-पूर्वक अन्दर घसीटकर, पास जाकर) देवि ! चेटी ने सच ही कहा है। गौरी ने तुम्हें यही वर दिया है।

मलयवती—(सहमकर उठती हुई, जीमूतवाहन को लक्ष्य करके) चेटी, यह कौन है ?

चेटी—(जीमूतवाहन को आँकती हुई) इस अनुपम सुन्दर आकृति से तो मैं यही समझती हूँ कि यह वही देवी भगवती का दिया वर है ।

(मलयवती चाव और लज्जा से जीमूतवाहन को निहारती है)

जीमूतवाहन—

ये तुम्हारे चञ्चल और दीर्घ नेत्र ! यह श्वास-प्रश्वास से कम्पमान कठोर और उभरती छाती ! अजी, तुम्हारा शरीर तो पहले ही तपस्या के कष्ट से चूर है फिर भयपूर्ण घबराहट से इसे और कष्ट क्यों देती हो ? (१७)

Jimutavahana—No, I shall not go in.

Jester—(*Dragging the affectedly unwilling* HERO *by force and approaching*) Lady, the maid has spoken the truth. Here is the love of your heart, the Goddess has promised you.

Malayavati—(*Rising up in embarrassment and pointing to* JIMUTAVAHANA) Maid, who is this man ?

Maid—(*Observing* JIMUTAVAHANA *closely*) From his appearance which is indeed matchless,methinks, he is the very boon granted to you by the Goddess.

[MALAYAVATI *looks at* JIMUTAVAHANA *longingly and coyly*]

Jimutavahana—

This body of thine has already been over-strained by penance. It is indeed too much that a lady like thee, with eyes tremulous and big and breasts full and firm and heaving with every breath, should afflict it still more with nervous fear. (17)

मलयवती—(अपवार्य, कर्णे) हञ्जे, अदिसद्धसेण ण सक्कुणोमि एदस्स संमुहे ठादुं ।

(अपवार्य, कर्णे) हञ्जे, अतिसाध्वसेन न शक्नोम्येतस्य संमुखे स्थातुम् ।

(नायकं तिर्यक् सलज्जं पश्यन्ती किंचित् पराङ्मुखी तिष्ठति)

विदूषकः—भोदि, किं एत्थ तुह्माणं तवोवणे ईरिसो आआरो, जेण अदिहिजणो आअदो वाआमेत्तएण वि ण संभावणीओ ?

भवति, किमत्र युष्माकं तपोवन ईदृश आचारः, येनातिथिजन आगतो वाङ्मात्रेणापि न संभावनीयः ?

चेटी—(नायिकां दृष्ट्वात्मगतम्) अणुरज्जदि विअ एत्थ एदाए दिट्ठी । ता एव्वं दाव भणिस्सं । (प्रकाशम्) भट्टिदारिए, जुत्तं भणादि बह्मणो । उइदो क्खु दे अदिहिजणसक्कारो । ता कीस एदस्सिं महाणुभावे पडिपत्तिमूढा विअ चिट्ठसि ? अहवा चिट्ठ तुमं, अहं एव्व जहाणुरूवं करिस्सं । (नायकमुद्दिश्य) साअदं अज्जस्स । आसणपरिग्गहेण अलंकरोदु इमं पदेसं अज्जो ।

(नायिकां दृष्ट्वात्मगतम्) अनुरज्यतीवात्रैतस्या दृष्टिः । तस्मादेवं तावद् भणिष्यामि । (प्रकाशम्) भर्तृदारिके, युक्तं भणति ब्राह्मणः । उचितः खलु तेऽतिथिजनसत्कारः । तत् कस्मादेतस्मिन् महानुभावे प्रतिपत्तिमूढेव तिष्ठसि ? अथवा तिष्ठ त्वम्, अहमेव यथानुरूपं करिष्यामि । (नायकमुद्दिश्य) स्वागतमार्यस्य । आसनपरिग्रहेणालंकरोत्विमं प्रदेशमार्यः ।

विदूषकः—भो वअस्स, सोभणं एसा भणादि । उववि‍सिअ मुहुत्तअं विस्समह्म ।

भो वयस्य, शोभनमेषा भणति । उपविश्य मुहूर्तकं विश्राम्यावः ।

जीमूतवाहनः—युक्तमाह भवान् ।

(उभावुपविशतः)

मलयवती—(सलज्जम्) हद्धि परिहाससीले, मा एव्वं करेहि ! कदाइ को वि तावसो मं पेक्खे तदो मं अविणीदेत्ति संभावइस्सदि ।

(सलज्जम्) हा धिक् परिहासशीले, मैवं कुरु ! कदापि कोऽपि तापसो मां प्रेक्षेत ततो मामविनीतेति संभावयिष्यति ।

(ततः प्रविशति तापसः)

Malayavati—(*Aside, in whispers*) Maid, I fear I am too nervous to stay in his presence.

[*Looking at the* HERO *bashfully with a side-glance, she stands with her face somewhat averted*]

मलयवती—(एक ओर होकर, कान में) चेटी, मैं तो बहुत सहमी जा रही हूँ, इसलिये इसके संमुख अधिक ठहर नहीं सकती। (नायक की ओर लज्जाभरी तिरछी चितवन से देखती हुई थोड़ा मुँह फेरे खड़ी रहती है)

विदूषक—देवि, क्या तुम्हारे तपोवन का यही शिष्टाचार है कि घर आए अतिथि का वाणी-मात्र से भी स्वागत न किया जाए ?

चेटी—(नायिका को देखकर, मन ही मन) इसकी आँख तो मानो उधर ही लग रही है। इसलिये यूँ बात चलाती हूँ। (प्रकट) बीबी जी, ब्राह्मण ठीक कहता है। आपके लिये उचित ही है कि आप अभ्यागत का सत्कार करें। तो फिर आप क्यों इस प्रकार इस महानुभाव के संमुख कर्तव्य-विमूढ़ सी खड़ी हैं ? अथवा आप ठहरें, मैं ही सब ठीक किये देती हूँ। (नायक को लक्ष्य करके) आइये, महानुभाव, आपका स्वागत हो। आइये, इस आसन पर बैठकर हमारे घर की शोभा बढ़ाइये।

विदूषक—मित्र, चेटी ठीक कहती है। आओ, बैठकर क्षणभर विश्राम कर लें।

जीमूतवाहन—अच्छा भई।

(दोनों बैठ जाते हैं)

मलयवती—(लज्जा-पूर्वक) अरी चुलबुली छोकरी, तूने यह क्या किया ? कहीं कोई तपस्वी मुझे यहाँ देख ले तो समझेगा कितनी निर्लज्ज है !

(तपस्वी का प्रवेश)

Jester—Madam, is this the etiquette of your penance-grove that a guest who happens to arrive here is not greeted with even a word ?

Maid—(*Looking at the* HEROINE, *aside*) Her eye seems to be fixed amorously at him. So, I shall speak like this. (*Aloud*) Princess, what the Brahmana says is correct. Hospitality towards a guest was but expected of you. Why, I wonder, you should stand like undecided about your duty towards this honourable gentleman ? Or wait, I shall myself do what is proper. (*Addressing the* HERO) Your Honour is welcome. Pray adorn this place by taking your seat here.

Jester—My friend, she has said well. Come, let us sit and refresh ourselves a while.

Jimutavahana—You are right.

[*Both sit down*]

Malayavati—(*Bashfully*) Don't you take liberties, facetious girl. If, perchance, some hermit were to see me, he would consider me to be unmannerly and immodest.

[*Enter a* HERMIT]

तापसः—आज्ञापितो ऽस्मि कुलपतिना कौशिकेन, यथा—"वत्स शाण्डिल्य, पितुराज्ञया युवराजो मित्रावसुर्भविष्यद्विद्याधरचक्रवर्तिनं कुमारं जीमूतवाहनमिहैव मलयपर्वते क्वापि वर्तमानं भगिन्या मलयवत्या वरहेतोर् द्रष्टुमद्य गतः। तं च प्रतीक्षमाणाया मलयवत्याः कदाचिन्मध्यंदिनसवनविधिरतिक्रामेत्, तदेनामाहूयागच्छ" इति । तद् यावद् गौरीगृहं गच्छामि । (परिक्रामन्, भुवं निरूप्य) अये, कस्य पुनरियं पांसुलप्रदेशे प्रकाशितचक्रवर्तिचिह्ना पदपङ्क्तिः ? (अग्रतो जीमूतवाहनं निरूप्य) नूनमस्यैवेयं महापुरुषस्य । तथा हि,—

उष्णीषः स्फुट एष मूर्धनि विभात्यूर्णेयमन्तर् भ्रुवोश्
चक्षुस्तामरसानुकारि, हरिणा वक्षःस्थलं स्पर्धते ।
चक्राङ्कं च यथा करद्वयमिदं मन्ये तथा को ऽप्ययं
नो विद्याधरचक्रवर्तिपदवीमप्राप्य विश्राम्यति ॥१८॥

अथवा, कृतं संदेहने । सुव्यक्तमनेन जीमूतवाहनेन भवितव्यम् । (मलयवतीं निरूप्य) अये, इयमपि राजपुत्री ! (उभौ विलोक्य) चिरात् खलु युक्तकारी विधिः स्याद्, यदि युगलमिदमन्योन्यानुरूपं घटयेत् । (उपसृत्य, जीमूतवाहनमुद्दिश्य) स्वस्ति भवते ।

जीमूतवाहनः—भगवन्, जीमूतवाहनो ऽहमभिवादये । (उत्थातुमिच्छति)

Hermit—Kulapati Kausika has bid me saying, "Sandilya, my boy, at the instance of his father, Prince Mitravasu has gone to see today Prince Jimutavahana, the would-be paramount ruler of the Vidyadharas, who is putting up somewhere here on the Malaya hill, with a view to proposing the hand of Malayavati, his sister. Waiting for his return lest Malayavati should miss her midday prayer, so you may go and fetch her here." Accordingly, I shall go to the temple of Gauri. (*Walking about and looking closely at the ground*) My goodness ! whose foot-prints on the dust could be these that clearly show the marks of a sovereign king ? (*Observing* JIMUTAVAHANA *in front*) Surely, these are the steps of this noble person. For,—

There is a well-marked excrescence on his head and a lovely ring of hair between his brows. His eyes emulate a lotus and his chest vies with that of Vishnu (or a lion), while both his hands bear

तपस्वी—कुलपति कौशिक महाराज ने मुझे आज्ञा दी है कि, "बेटा शाण्डिल्य, पिता की आज्ञा से आज युवराज मित्रावसु अपनी बहिन मलयवती के वर के लिये विद्याधर वंश के होनहार चक्रवर्ती राजकुमार जीमूतवाहन को, जो मलयाचल पर यहीं कहीं आया हुआ है, देखने के लिये निकला है। कहीं भाई की प्रतीक्षा करते-करते मलयवती की दुपहर की स्नान-पूजा का समय न निकल जाए, सो तू जा और मलयवती को बुला ला।" तो अच्छा, गौरी के मन्दिर की ओर जाता हूँ। (जाता हुआ, भूमि की ओर देखकर) अरे ! ये मिट्टी में भूमि पर चक्रवर्ती-लक्षणों वाले पद-चिह्न किसके हैं ? (सामने जीमूतवाहन को देखकर) हूँ, निःसंदेह ये इसी महानुभाव के हैं। क्योंकि,—

इसके सिर पर (चक्रवर्ती का सा) उष्णीष स्पष्ट शोभा दे रहा है, भँवों के मध्य रोमावलि-चक्र विद्यमान है, नेत्र कमल के समान अरुण हैं, उरःस्थल भगवान् विष्णु (या सिंह) के उरःस्थल का प्रतिस्पर्धी (अर्थात् विशाल) है, और दोनों हथेलियों पर चक्र-चिह्न दृश्यमान हैं। कोई भी क्यों न हो, मेरा विश्वास है कि यह व्यक्ति विद्याधरों के चक्रवर्ती पद को प्राप्त किये बिना विश्राम न लेगा। (१८)

अथवा, इसमें संदेह ही क्या ? अवश्य ही यह जीमूतवाहन होगा। (मलयवती को देखकर) अरे, हमारी राजकुमारी भी यहीं बैठी है ! (दोनों की ओर देखकर) यदि कहीं विधाता इस परस्पर अनुरूप जोड़ी को मिला दे तो कहना ही पड़ेगा कि कभी तो उसे समझ आई—चाहे देर में ही सही। (निकट आकर, जीमूतवाहन को लक्ष्य करके) आपका कल्याण हो !

जीमूतवाहन—भगवन्, मैं जीमूतवाहन आपको प्रणाम करता हूँ। (उठना चाहता है)

---

the sign of wheel. From these signs, I believe, that he is a man who will not rest till he has risen to the status of a Vidyadhara sovereign. (*18*)

Or why doubt it ? He must be Jimutavahana, to be sure. (*Observing* Malayavati) Ah, our Princess is also here! (*Looking at both*) After long Fate would do the right thing were she to bring this pair together which is so well-matched. (*Approaching and addressing* Jimutavahana) Hail to Your Honour.

Jimutavahana—I, Jimutavahana, greet you, revered sir. (*Wishes to rise*)

तापसः—अलमलमभ्युत्थानेन । ननु सर्वस्याभ्यागतो गुरुरिति भवानेवास्माकं पूज्यः । तद् यथासुखं स्थीयताम् ।

जीमूतवाहनः—बाढम् ।

मलयवती—अज्ज, पणमामि ।

आर्य, प्रणमामि ।

तापसः—(मलयवतीं निर्दिश्य) भद्रे, अनुरूपभर्तृगामिनी भूयाः । राजपुत्रि, आह त्वां कुलपतिः कौशिकः, "अतिक्रामति मध्यन्दिनसवनवेला, तत् त्वरितमागम्यताम्" इति ।

मलयवती—जं गुरु आणवेदि । (आत्मगतम्)—

एक्कतो गुरुवअणं अण्णतो दइअदंसणसुहाइं ।
गमणागमणाधिरूढं अज्ज वि मं दोलएदि हिअअं ॥१९॥

यद् गुरुराज्ञापयति । (आत्मगतम्)—

एकतो गुरुवचनमन्यतो दयितदर्शनसुखानि ।
गमनागमनाधिरूढम् अद्यापि मां दोलयति हृदयम् ॥१९॥

(उत्थाय निःश्वस्य सलज्जं सानुरागं च जीमूतवाहनं पश्यन्ती तापस-सहिता निष्क्रान्ता मलयवती, चेटी च)

जीमूतवाहनः—(सोत्कण्ठं निःश्वस्य, मलयवतीं गच्छन्तीं पश्यन्)—

अनया जघनाऽऽभोग-भर-मन्थर-यानया ।
अन्यतोऽपि व्रजन्त्या मे हृदये निहितं पदम् ॥२०॥

Hermit—Don't, please, don't get up. It is rather you who ought to be honoured by us, for a guest deserves reverence from all. So, please be easy and keep sitting.

Jimutavahana—All right, sir.

Malayavati—I bow to you, sir.

Hermit—(*Addressing* MALAYAVATI) Good lady, may you be united with a husband worthy of you. Princess, preceptor Kausika has asked you to come quickly as the time for the midday prayer is passing away.

Malayavati—As the preceptor commands. (*To herself*)—

तपस्वी—ना, ना, आप आसन से उठने का कष्ट न करें। सबका पूज्य तो अतिथि ही होता है, सो इस शिष्टाचार से आप ही हमारे वन्दनीय हैं। आप सुखपूर्वक बैठे रहिये।

जीमूतवाहन—सिर-माथे।

मलयवती—भगवन्, मेरा प्रणाम स्वीकार कीजिये।

तपस्वी—(मलयवती को लक्ष्य करके) बेटी, तुझे तेरे अनुरूप ही वर प्राप्त हो। राजकुमारी, कुलपति कौशिक ने कहा है—"दुपहर के स्नान-वन्दन की वेला निकलती जा रही है, इसलिये शीघ्र चली आओ।"

मलयवती—गुरु जी की आज्ञा सिर-माथे। (मन ही मन)—

एक ओर गुरु जी की आज्ञा, दूसरी ओर प्रियतम के दर्शन का सुख—सो 'जाऊँ या न जाऊँ' इसी दुविधा में हृदय मुझे डुला रहा है। (१६)

(उठकर निःश्वास लेती हुई और लज्जा तथा अनुराग से जीमूतवाहन का देखती हुई मलयवती, तथा चेटी का तपस्वी के साथ निष्क्रमण)

जीमूतवाहन—(उत्कण्ठा पूर्वक निःश्वास लेकर, जाती हुई मलयवती को देखते हुए)—

यह सुन्दरी चाहे अपने गुरुतर जघन स्थल के भार के कारण मन्थर गति से जा दूसरी ओर रही है, पर उसके पग इधर मेरे ही हृदय पर पड़ रहे हैं। (२०)

On one side is the command of the preceptor and on the other the pleasure of the sight of the beloved. To go or not to go—on the horns of this dilemma doth my mind sway me even now. (19)

[*Rising up she sighs, and looking at* JIMUTAVAHANA *with longing and bashfulness, exit with* HERMIT *and her* MAID]

Jimutavahana— (*Sighing with a heavy heart and looking at* MALAYAVATI *as she retreats*)—

Though with the weight of her heavy hips she is moving slowly in another direction, she is, so to say, treading on my heart and making it heavy. (20)

विदूषकः—दिट्ठं जं पेक्खिदव्वं। दाणिं मज्झण्हसूरसंदावदिउणिओ विअ मे जठरग्गी धमधमाअदि। ता णिक्कमह्य, जेण अदिही भविअ मुणिजणसआसादो लद्धेहिं कंदमूलफलेहिं पि दाव पाणधारणं करिस्सं।

दृष्टं यत् प्रेक्षितव्यम्। इदानीं मध्याह्नसूर्यसंतापद्विगुणित इव मे जठराग्निर्धमधमायते। तन्निष्क्रामावः, येनातिथिर् भूत्वा मुनिजनसकाशाल्लब्धैः कन्दमूलफलैरपि तावत् प्राणधारणं करिष्यामि।

जीमूतवाहनः—(ऊर्ध्वमवलोक्य) अये, मध्यमध्यास्ते नभस्तलस्य भगवान् सहस्रदीधितिः। तथा हि,—

तापात् तत्क्षणघृष्टचन्दनरसापाण्डू कपोलौ वहन्
संसक्तैर् निजकर्णतालपवनैः संवीज्यमाननः।
संप्रत्येष विशेषसिक्तहृदयो हस्तोज्झितैः शीकरैर्
गाढायल्लकदुःसहामिव दशां धत्ते गजानां पतिः ॥२१॥

(निष्क्रान्तौ)

इति प्रथमो ऽङ्कः

Jester—We have seen what was here worth-seeing. Now the heat of the midday sun, so to say, causes the fire of my hunger to blaze with redoubled fury. Let us therefore quit, so that I at least may be able to sustain myself by becoming a guest of the hermits and getting from them an humble grub of edible roots and fruits.

Jimutavahana—(*Looking at the sky*) Oh, the sun has reached the Zenith. For,—

विदूषक—जो देखना था सो तो देख लिया। अब दुपहर की धूप की गर्मी से मेरे पेट में जठराग्नि मानो दुगुनी भड़क उठी है। तो अब चलें, जिससे मुनिजनों के यहाँ अतिथि बनकर उपलब्ध कन्द-मल-फलादि से जैसे-कैसे मैं तो (भूख से) मरने से बच जाऊँ।

जीमूतवाहन—(ऊपर की ओर देखकर) अरे, सूर्य तो आकाश मण्डल के ठीक मध्य में आ गया है। क्योंकि,—

सामने गजराज की अवस्था भी दुःसह विरहोत्कण्ठा से संतप्त प्रेमी की सी हो रही है। तीव्र सूर्यातप के कारण चन्दनवृक्षों से रगड़-रगड़कर नव-प्रसूत चन्दन रस से उसके गण्डस्थल (प्रेमी के सामान) अति पाण्डुच्छाय हो रहे हैं, और वह अपने तालपत्र के सामान कानों द्वारा संचालित वायु के थपकियाँ देते हुए झोंकों से अपने मुख पर पंखा झल रहा है, और अपनी छाती को सूँड से छोड़ी हुई फुहार से छिड़ककर विशेष रूप से शीतलता पहुँचा रहा है। (२१)

(दोनों का निष्क्रमण)

प्रथम अङ्क समाप्त

This grand elephant here is wearing the semblance of the unbearable state of a lonesome lover, inasmuch as his cheeks are very pale with the fresh sap of sandal tree against which he has been rubbing to allay his heat, inasmuch as he is fanning his face with the caressing wafts of air stirred by his palm-like ears, inasmuch as he is drenching his chest with the spray discharged from his trunk. (21)

[*Exeunt both*]

END OF THE FIRST ACT

द्वितीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति चेटी)

चेटी—आणत्तह्मि भट्टिदारिआए मलअवदीए,जहा—"हञ्जे मणोहरिए, अज्ज चिराअदि भादुओ मे अज्जमित्तावसू। ता गदुअ जाणेहि किं आअदो ण वेति"। (परिक्रामति। नेपथ्याभिमुखमवलोक्य) का उण एसा तुरिदतुरिदं इदो एव्व आअच्छदि? (निरूप्य) कहं, चउरिआ?

आज्ञप्तास्मि भर्तृदारिकया मलयवत्या, यथा—"हञ्जे मनोहरिके, अद्य चिरयति भ्राता मे आर्यमित्रावसुः। तद् गत्वा जानीहि किमागतो न वेति"। (परिक्रामति। नेपथ्याभिमुखमवलोक्य) का पुनरेषा त्वरितत्वरितमित एवागच्छति? (निरूप्य) कथं, चतुरिका?

(ततः प्रविशति चतुरिका)

मनोहरिका– (उपसृत्य) हञ्जे चउरिए, किं णिमित्तं उण तुमं एव्वं तुरिदतुरिदं आअच्छसि?

(उपसृत्य) हञ्जे चतुरिके, किन्निमित्तं पुनस्त्वमेवं त्वरितत्वरितमागच्छसि?

चतुरिका—आणत्तह्मि भट्टिदारिआए मलअवदीए—"हञ्जे चउरिए, कुसुमावचअपरिस्समणिस्सहं मे सरीरं सरदादवजणिदो विअ सन्दावो अहिअदरं बाधेदि। ता गच्छ तुमं, बालकदलीपत्तपरिक्खित्ते चन्दणलदाघरए चन्दमणिसिलादलं सज्जीकरेहि" त्ति। अणुट्ठिअं अ मए जहा आणत्तं। ता जाव गदुअ भट्टिदारिआए णिवेदेमि।

आज्ञप्तास्मि भर्तृदारिकया मलयवत्या—"हञ्जे चतुरिके, कुसुमावचयपरिश्रमनिस्सहं मे शरीरं शरदातपजनित इव सन्तापोऽधिकतरं बाधते। तद् गच्छ त्वम् बालकदलीपत्रपरिक्षिप्ते चन्दनलतागृहे चन्द्रमणिशिलातलं सज्जीकुरु" इति। अनुष्ठितं च मया यथाज्ञप्तम्। तद्यावद् गत्वा भर्तृदारिकायै निवेदयामि।

SECOND ACT

[*Enter* MAIDSERVANT]

Maid—I have been bidden by Princess Malayavati saying,

द्वितीय अङ्क

(चेटी का प्रवेश)

चेटी—मुझे स्वामिनी मलयवती का आदेश हुआ है, कि—"सखि मनोहरिका, भाई मित्रावसु को आज लौट आने में (न जाने क्यों) देर हो रही है ? तो तू जा और पता कर कि वह आ गया है या नहीं।" (जाती है। नेपथ्य की ओर देखकर) पर यह कौन है जो इतनी उतावली से इधर ही आ रही है ? (ध्यान से देखकर) अरे, चतुरिका ?

(चतुरिका का प्रवेश)

मनोहरिका—(पास जाकर) चतुरिका, क्या बात है जो तू इतनी उतावली से आ रही है ?

चतुरिका—मुझे बीबी मलयवती जी ने आदेश दिया है कि, "चतुरिका, फूल चुनते-चुनते मेरा शरीर थक गया है और ऊपर से शरदृतु की धूप के समान (प्रखर) संताप भी मुझे बहुत सता रहा है। तो तू जा और नन्हे-नन्हे केलों के पत्तों से आच्छादित चन्दनलता-मण्डप में जाकर चन्द्रमणिशिला पर मेरे लिये बिछौना प्रस्तुत कर।" मैंने आज्ञा का पालन कर दिया है। तो अब आकर बीबी जी को कह दूँ।

"Manoharika, my girl, my brother Mitravasu is late in coming. So, go and find out if he has returned or not." (*Goes. Looking toward the tiring room*) Who be this, the girl who is hurrying this way ? (*Observing closely*) Oh, Chaturika ?

[*Enter* CHATURIKA]

Manoharika—(*Approaching*) Chaturika, my dear, what makes you come in such a hurry ?

Chaturika—Princess Malayavati, has ordered me saying, "Chaturika, my girl, my body is awfully tired with the exertion of plucking flowers and the heat is tormenting me as severely as the autumn sun (after rains). So, go and get ready the moonstone bed in the sandal-bower shaded with the leaves of young plantain trees." I have done as ordered. I shall now go and inform the Princess.

मनोहरिका—जइ एव्वं, ता लहुअं णिवेदेहि, जेण से तहिं गदाए सन्दावो उवसमं गमिस्सदि ।

यद्येवं, तल्लघु निवेदय, येनास्यास्तत्र गतायाः सन्ताप उपशमं गमिष्यति ।

चतुरिका—(विहस्यात्मगतम्) ण ईरिसो से सन्दावो जो एव्वं उवसमं गमिस्सदि । अण्णं च विवित्तरमणिज्जं चन्दणलदाघरअं पेक्खन्तीए अहिअदरो भविस्सदि त्ति तक्केमि । (प्रकाशम्) ता गच्छ तुमं । अहं पि सज्जं सिलादलं त्ति भट्टिदारिआए णिवेदेमि ।

(विहस्यात्मगतम्) नेदृशो ऽस्याः संतापो य एवमुपशमं गमिष्यति । अन्यच्च विविक्तरमणीयं चन्दनलतागृहं प्रेक्षमाणाया अधिकतरो भविष्यतीति तर्कयामि । (प्रकाशम्) तद् गच्छ त्वम् । अहमपि सज्जं शिलातलमिति भर्तृदारिकायै निवेदयामि ।

(निष्क्रान्ते)

प्रवेशकः

(ततः प्रविशति सोत्कण्ठा मलयवती, चेटी च)

मलयवती—(निःश्वस्यात्मगतम्) हिअअ, तह णाम तदा तस्सि जणे लज्जाए मं परम्मुहीकरिअ दाणिं अप्पणा तहिं एव्व गदं सि त्ति अहो दे अप्पम्भरित्तणं ! (प्रकाशम्) हञ्जे चउरिए, आदेसेहि मे भअवदीए आअदणस्स मग्गं ।

(निःश्वस्यात्मगतम्) हृदय, तथा नाम तदा तस्मिञ्जने लज्जया मां पराङ्मुखीकृत्येदानीमात्मना तत्रैव गतमसीत्यहो ते आत्मम्भरित्वम् ! (प्रकाशम्) हञ्जे चतुरिके, आदिश मे भगवत्या आयतनस्य मार्गम् ।

चेटी—णं चन्दणलदाघरअं भट्टिदारिआ पत्थिदा ?

ननु चन्दनलतागृहं भर्तृदारिका प्रस्थिता ?

मलयवती—(सलज्जम्) सुट्ठु तुए सुमराविदं । ता एहि, तहिं एव्व गच्छम्ह ।

(सलज्जम्) सुष्ठु त्वया स्मारितम् । तदेहि, तत्रैव गच्छावः ।

चेटी—एदु एदु, भट्टिदारिआ । (अग्रतो गच्छति)

एत्वेतु, भर्तृदारिका । (अग्रतो गच्छति)

(मलयवत्यप्यन्यतो गच्छति)

Manoharika—If so, then be quick and inform her, so that by going there the torment of her heat may be alleviated.

Chaturika—(*Laughing, aside*) Hers is not the kind of torment that can be relieved in this way. On the contrary, I am afraid,

मनोहरिका—यदि ऐसी बात है तो जा शीघ्र जाकर निवेदन कर, जिससे वहाँ जाकर स्वामिनी का संताप शान्त हो।

चतुरिका—(हँसकर, मन ही मन) इसका संताप इस प्रकार का नहीं जो ऐसे शान्त होजाए वरन् चन्दनलतामण्डप के एकान्त और सौन्दर्य को देखकर मेरा तो विचार है कि यह और भी बढ़ जाएगा। (प्रकट) हाँ, तो तू जा। मैं भी बीबी जी को बताती हूँ कि शिला पर बिस्तरा सजा दिया है।

(दोनों का प्रस्थान)

प्रवेशक समाप्त

(प्रेमविह्वल मलयवती, तथा चेटी का प्रवेश)

मलयवती—(आह भरकर, मन ही मन) अहो हृदय, तू कितना स्वार्थी है कि तब उनके सामने मुझे लज्जाकर उनकी ओर देखने भी नहीं दिया और अब अपने-आप उन्हींके पास चला गया है ! (प्रकट) सखी, मुझे भगवती के मन्दिर का मार्ग दिखा।

चेटी—बीबी जी, आप तो चन्दनलतागृह को जाने वाली थीं ?

मलयवती—(लज्जा से) हाँ, तूने ठीक स्मरण कराया। तो चल, उधर ही चलें।

चेटी—आओ, बीबी जी। (आगे-आगे चलती है)

(मलयवती दूसरी ही ओर चल देती है)

---

it will aggravate when she looks at the lonely sandal-bower and its loveliness. (*Aloud*) Well, you go now. I, too, shall go and report to the Princess that the moonstone bed is ready.

[*Exeunt both*]

END OF INTERLUDE

[*Enter* MALAYAVATI *in love-lorn state, and the* MAID]

Malayavati—(*Sighing, to herself*) Alas, my heart ! having made me avoid that man out of modesty that day, now thou hast thyself gone thither. Ah, the selfishness of it ! (*Aloud*) Girl, show me the way to the temple of the Goddess.

Maid—But, Princess had set out for the sandal-bower, I suppose ?

Malayavati—(*Feeling abashed*) You have well reminded me. Come, then let us go thither.

Maidservant—Come, come, Princess. (*Leads the way*)

[MALAYAVATI *goes the other way*]

चेटी—(पृष्ठतो दृष्ट्वा, सोद्वेगमात्मगतम्) अहो, से सुण्णहिअअत्तणं ! कहं ! तं एव्व देवीए भवणं पत्थिदा ? (प्रकाशम्) भट्टिदारिए, णं इदो चन्दणलदाघरअं । ता इदो एहि ।

(पृष्ठतो दृष्ट्वा, सोद्वेगमात्मगतम्) अहो, अस्याः शून्यहृदयत्वम् ! कथं तदेव देव्या भवनं प्रस्थिता ? (प्रकाशम्) भर्तृदारिके, नन्वितश्चन्दनलता-गृहम् । तदित एहि ।

(मलयवती सविलक्षं सलज्जं च तथा करोति)

चेटी—भट्टिदारिए, एदं चन्दणलदाघरअं । ता पविसिअ चन्दमणिसिलादले उवविसिअ समस्ससिदु भट्टिदारिआ ।

भर्तृदारिके, एतच्चन्दनलतागृहम् । तत् प्रविश्य चन्द्रमणि-शिलातल उपविश्य समाश्वसितु भर्तृदारिका ।

(उभे उपविशतः)

मलयवती—(निःश्वस्यात्मगतम्) भअवं कुसुमाउह, जेण तुमं रूवसोहाए णिज्जिदो सि, तस्सि ण किञ्चि तुए किदं । मं उण अणवरद्धं अबलत्ति करिअ पहरन्तो कहं ण लज्जेसि ? (आत्मानं निर्वर्ण्य, मदनावस्थां नाटयन्ती, प्रकाशम्) हञ्जे, कीस उण एदं घणपल्लवणिरुद्धसूरकिरणं तादिसं एव्व चन्दणलदाघरअं ण मे अज्ज सन्दावदुक्खं अवणेदि ?

(निःश्वस्यात्मगतम्) भगवन् कुसुमायुध, येन त्वं रूपशोभया निर्जितोऽसि, तस्मिन् न किञ्चित् त्वया कृतम् । मां पुनरनपराद्धामबलेति कृत्वा प्रहरन् कथं न लज्जसे ? (आत्मानं निर्वर्ण्य, मदनावस्थां नाटयन्ती, प्रकाशम्) हञ्जे, कस्मात् पुनरेतद् घनपल्लवनिरुद्धसूर्यकिरणं तादृशमेव चन्दनलतागृहं न मेऽद्य संतापदुःखमपनयति ?

चेटी—(सस्मितम्) जाणामि अहं एत्थ कारणं । किन्तु असम्भावणीअं त्ति भट्टिदारिआ ण तं पडिवज्जदि ।

(सस्मितम्) जानाम्यहमत्र कारणम् । किन्त्वसम्भावनीयमिति भर्तृदारिका न तत् प्रतिपद्यते ।

मलयवती—(आत्मगतम्) आलक्खिदह्मि इमाए । तह वि पुच्छिस्सं दाव । (प्रकाशम्) हञ्जे, किं तव एदिणा ? कहेहि दाव, किं तं कारणं ?

(आत्मगतम्) आलक्षितास्म्यनया । तथापि प्रक्ष्यामि तावत् । (प्रकाशम्) हञ्जे, किं तवैतेन ? कथय तावत्, किं तत् कारणम् ?

Maid—(*Looking backward, to herself, in distress*) Pity, how distracted she is ! What ! she is again going to the

चेटी—(पीछे की ओर देखती हुई, मन ही मन, दुःखी होकर) अहो, यह कैसी शून्य-हृदय हो रही है ! क्या ! फिर उसी देवी के मन्दिर की ओर चल दी ? (प्रकट) बीबी जी, चन्दनलता-मण्डप तो इस ओर है । इसलिये इधर आइये ।

(मलयवती खिसियानी होकर लज्जा से वैसे ही करती है)

चेटी—बीबी जी, आ गया यह चन्दनलतामण्डप । चलें, अन्दर चलकर चन्द्र-मणिशिला पर बैठकर विश्राम करें ।

(दोनों बैठ जाती हैं)

मलयवती—(निःश्वास लेकर, मन ही मन) भगवान् कामदेव, जिससे तून सौन्दर्य में हार खाई है, उसका तो तू कुछ बिगाड़ ही नहीं सका, किन्तु मुझ निरपराध को अबला जानकर बाणों से घायल करते हुए क्या तुझे लज्जा नहीं आती ? (अपनेको निहारती हुई और काम-विह्वलता का अभिनय करती हुई, प्रकट) सखि, क्या कारण है कि वही चन्दनलतागृह घने पत्तों से सूर्य किरणों को रोके हुए भी आज मेरे ताप के वेग को दूर नहीं करता ?

चेटी—(मुस्कराकर) इसका कारण तो मैं जानती हूँ, परन्तु बीबी जी, आप मानेंगी नहीं, कहेंगी 'असंभव' !

मलयवती—(मन ही मन) यह मुझे भाँप गई है । अस्तु, फिर भी पूछ देखती हूँ । (प्रकट) तुझे इससे क्या (मैं स्वीकार करूँ या न करूँ)?—हाँ, तो बता क्या कारण समझी ?

---

temple ? (*Aloud*) But the sandal-bower is on this side, Princess. Come this way, please.

[MALAYAVATI *follows her embarrassed and abashed*]

Maid—Princess, we have come to the sandal-bower. Pray, enter it and refresh yourself by sitting on the moon-stone bed.

[*Both sit down*]

Malayavati—(*Sighing, aside*) O God of Love, him, who has outshone thee in splendour of beauty, thou hast not even touched, but, on the other hand, taking me to be vulnerable as being the weaker vessel dost not thou feel ashamed of thyself in smiting me, an innocent person ? (*Surveying herself and acting as if love-sick, aloud*) Girl, how is it that this sandal-bower, although sheltered from the sun by thick foliage as usual, does not alleviate the torment of my heat today ?

Maid—(*With a smile*) I know the cause of it, but Princess would deny it saying it was impossible.

Malayavati—(*To herself*) The wench has got it. I may, as well, ask her. (*Aloud*) What the deuce you have to do with it ? Anyway, come, be out with it.

चेटी—एसो दे हिअअच्छिदो वरो ।

एष ते हृदयेष्टो वरः ।

मलयवती—(सहर्षं ससंभ्रमं चोत्थायाग्रतो द्वित्राणि पदानि गत्वा) कहिं, कहिं सो ?

(सहर्षं ससंभ्रमं चोत्थायाग्रतो द्वित्राणि पदानि गत्वा) कुत्र, कुत्र सः ?

चेटी—(उत्थाय, सस्मितम्) भट्टिदारिए, को सो ?

(उत्थाय, सस्मितम्) भर्तृदारिके, कः सः ?

(मलयवती सलज्जमुपविश्याधोमुखी तिष्ठति)

चेटी—भट्टिदारिए, णं एदह्मि वत्तुकामा—एसो दे हिअअच्छिदो वरो देवीए दिण्णत्ति सिविणए पत्थाविदे जो तक्खणं एव्व विमुत्तकुसुमचावो विअ भअवं मअरद्धओ भट्टिदारिआए दिट्ठो, सो दे इमस्स सन्दावस्स कारणं, जेण एव्वं सहावसीदलं पि चन्दणलदाघरअं ण दे अज्ज सन्दावदुक्खं अवणेदि ।

भर्तृदारिके, नन्वेतदस्मि वक्तुकामा—एष ते हृदयेष्टो वरो देव्या दत्त इति स्वप्ने प्रस्तुते यस्तत्क्षणमेव विमुक्तकुसुमचाप इव भगवान् मकरध्वजो भर्तृदारिकया दृष्टः, स तेऽस्य सन्तापस्य कारणम् । येनैवं स्वभावशीतलमपि चन्दनलतागृहं न तेऽद्य सन्तापदुःखमपनयति ।

मलयवती—(चतुरिकाया अलकानि सज्जयन्ती) हञ्जे, चउरिआ क्खु तुमं । किं दे अवरं पच्छादीअदि ? ता कहइस्सं ।

(चतुरिकाया अलकानि सज्जयन्ती) हञ्जे, चतुरिका खलु त्वम् । किं तेऽपरं प्रच्छाद्यते ? तत् कथयिष्यामि ।

चेटी—भट्टिदारिए, णं दाणिं एव्व कहिदं इमिणा वरालावमत्तजणिदेण सम्भमेण । ता मा सन्तप्प । जइ अहं चउरिआ, तदा सो वि भट्टिदारिअं अवेक्खन्तो ण मुहुत्तअं पि अण्णहिं अहिरमिस्सदि त्ति एदं पि मए आलक्खिदं एव्व ।

भर्तृदारिके, नन्विदानीमेव कथितम् अमुना वरालापमात्रजनितेन संभ्रमेण । तन्मा संतप्यस्व । यद्यहं चतुरिका, तदा सोऽपि भर्तृदारिकामप्रेक्षमाणो न मुहूर्तमप्यन्यस्मिन्नभिरंस्यत इत्येतदपि मयाऽऽलक्षितमेव ।

Maid—This, your boon, so *sweet* to your *heart*.

Malayavati—(*Feels jubilant and rising up in excitement takes two or three steps forward*) Where, where is he ?

Maid—(*Rising, with a smile*) Princess, who do you say ?

[MALAYAVATI *bashfully sits down and keeps her looks downcast*]

चेटी—यही वह आपका मनोवाञ्छित वर।

मलयवती—(हर्ष और उतावली से उठकर दो-तीन पग आगे बढ़कर) हाँ, तो कहाँ है वह? किधर है?

चेटी—(उठकर, मुस्कराती हुई) बीबी जी, कौन? किसको पूछ रही हो?

(मलयवती लज्जा से बैठकर मुँह नीचे कर लेती है)

चेटी—बीबी जी, मैं तो यह कह रही थी कि "आपका मनोवाञ्छित वर देवी ने आपको दिया है"—जब यह स्वप्न आप देख रही थीं उसी क्षण धनुष-बाण-रहित साक्षात् भगवान् कामदेव के समान सुन्दर जिस व्यक्ति को आपने देखा था, वही आपके इस सन्ताप का कारण है। इसीसे यह सदा ठण्डा रहने वाला चन्दनलता-मण्डप भी आज आपके सन्ताप को दूर नहीं कर रहा।

मलयवती—(चतुरिका की अलकों को सुलझाती हुई) सखि, तू सचमुच चतुरिका ही है। तुझसे अब और क्या छिपाऊँ? सो कहती हूँ।

चेटी—बीबी जी, अभी-अभी इस वर की बात से उत्पन्न हुई आपकी उतावली ने सब कुछ कह तो दिया है। अब घबराओ मत। यदि मेरा नाम सचमुच चतुरिका है तो मैं यह भी ताड़ गई हूँ कि उनका मन भी आपको देखे बिना क्षणभर के लिये किसी और वस्तु से नहीं बहलता होगा।

Maid—Princess, what I meant to say was that, "The vision of the god Kama himself, lacking so to say only in his bow and arrow—which you forthwith saw when you dreamt that the Goddess had granted you the boon, so *sweet* to your *heart*—is the cause of your present affliction." That is why this sandal-bower, though naturally cool, is ineffective in mitigaing the torment of your heat today.

Malayavati—(*Trimming the tresses of* CHATURIKA) You are indeed a *clever girl*, my Chaturika. How can I conceal the rest (of the story) from you now? I shall tell you all.

Maid—Princess, you have already disclosed everything by your agitation at the mere mention of the 'boon'. So, don't you fret now. If I am indeed Chaturika (a *clever girl* as you have just said), then even this has not escaped my notice that he, too, not seeing any more of you since, would not be taking interest in anything else even for a moment.

मलयवती—(सास्रम्) हञ्जे, कुदो मे एत्तिआणि भाअधेआणि ?

(सास्रम्) हञ्जे, कुतो मे इयन्ति भागधेयानि ?

चेटी—भट्टिदारिए, मा एव्वं भण। किं महुमहणो वच्छत्थलेण लच्छि अण-व्वहन्तो णिव्वुदो होइ ?

भर्तृदारिके, मैवं भण। किं मधुमथनो वक्षःस्थलेन लक्ष्मीमनु-द्वहन् निर्वृतो भवति ?

मलयवती—किं वा सुअणो पिअं वज्जिअ अण्णं भणिदुं जाणादि ? सहि, अदो वि सन्दावो अहिअदरं मं बाहेइ, जं सो महाणुभावो वाआमेत्तएण वि अकिदपडिवत्ति अदक्खिणत्ति मं सम्भावइस्सदि। (इति रोदिति)

किं वा सुजनः प्रियं वर्जयित्वाऽन्यद् भणितुं जानाति ? सखि, अतोऽपि संतापोऽधिकतरं मां बाधते, यत् स महानुभावो वाङ्मात्रेणाप्यकृत-प्रतिपत्तिमदक्षिणेति मां संभावयिष्यति। (इति रोदिति)

चेटी—भट्टिदारिए, मा रोद। (उत्थाय चन्दनपल्लवं गृहीत्वा निष्पीड्य हृदये ददाति) णं भणामि मा रोद त्ति। अअं क्खु थणपट्टदिण्णो चन्दणपल्लवरसो इमेहिं अविरलपडन्तेहिं अस्सुबिन्दूहिं उण्हीकिदो ण दे हिअअसन्दावदुक्खं अवणेदि। (कदली-पत्रमादाय वीजयति)

भर्तृदारिके, मा रुदः। (उत्थाय चन्दनपल्लवं गृहीत्वा निष्पीड्य हृदये ददाति) ननु भणामि मा रुद इति। अयं खलु स्तनपट्टदत्तश्चन्दन-पल्लवरसोऽमीभिरविरलपतद्भिरश्रुबिन्दुभिरुष्णीकृतो न ते हृदयसन्तापदुःख-मपनयति। (कदलीपत्रमादाय वीजयति)

मलयवती—(हस्तेन निवारयन्ती) सहि, मा वीजेहि। उण्हो क्खु एसो कदली-दलमारुओ।

(हस्तेन निवारयन्ती) सखि, मा वीजय। उष्णः खल्वेष कदलीदलमारुतः।

चेटी—भट्टिदारिए, मा इमस्स दोसं करेहि—

कुणसि घणचन्दणलआपल्लवसंसग्गसीदलं पि इमं।
णीसासेहिं तुमं एव्व कदली-दल-मारुअं उण्हं ॥१॥

भर्तृदारिके, मा अस्य दोषं कुरु—

करोषि घनचन्दनलतापल्लवसंसर्गशीतलमपीमम्।
निःश्वासैस् त्वमेव कदलीदलमारुतम् उष्णम् ॥१॥

Malayavati—(*In tears*) How could I be so fortunate, my girl ?

Maid—Don't say so, Princess. Could one ever imagine Vishnu finding peace without pressing Lakshmi close to his bosom ?

मलयवती—(आँसूभरे) सखि, भला मेरे ऐसे भाग्य कहाँ ?

चेटी—बीबी जी, ऐसे मत कहो। क्या भगवान् मधुसूदन (विष्णु) लक्ष्मी को बिना छाती से लगाए चैन से रह सकते हैं ?

मलयवती—क्या सुहृद् लोग कभी प्यारी बातों के अतिरिक्त और कुछ कहना जानते हैं ? सखि, मुझे इस बात से और भी अधिक संताप हो रहा है कि वह महापुरुष, जिसका मैंने वाणीमात्र से भी स्वागत नहीं किया, मुझे फूहड़ समझेगा। (यह कहकर रोने लगती है)

चेटी—बीबी जी, रोओ मत ! (उठकर चन्दन का पत्ता तोड़कर और निचोड़कर उसकी छाती पर मलती है) मैं जो कहती हूँ, रोओ मत। यह स्तनों पर लगाया हुआ चन्दन के पत्ते का रस तुम्हारे लगातार टपकते हुए अश्रु-बिन्दुओं से गर्म होकर तुम्हारे हृदय के दाह के दुःख को नहीं दूर कर रहा। (केले का पत्ता लेकर हवा करती है)

मलयवती—(हाथ से हटाती हुई) सखि, पंखा मत करो। केले के पत्ते की यह पवन भी गर्म लगती है।

चेटी—बीबी जी, इसे दोष मत दो। (क्योंकि,)—

सघन चन्दनवृक्ष के पत्तों के संपर्क से शीतल हुई केले के पत्ते की इस पवन को स्वयं तुम्हीं अपने निःश्वासों से गर्म कर रही हो। (१)

Malayavati—What else could a friend utter but that pleases? Friend, my torment is all the more severe for another reason also that the gentleman, because I did not greet him even with a word, might have considered me uncouth. (*She weeps*)

Maid—Do not weep, Princess. (*Rising up she plucks a sandal leaf and crushing it she applies the juice to her breasts*) I say, do not weep. Otherwise, I am afraid, even this sandal juice that I am applying to your breasts, growing hot with the constant stream of your tears, won't alleviate your heart's torment. (*Taking a plantain leaf, she begins to fan her*)

Malayavati—(*Pushing her away with her hand*) Don't fan me, friend. The air of this plantain-leaf feels hot.

Maid—Princess, don't blame this. (For,)—

The air of the plantain-leaf, though cool from its contact with the dense foliage of sandal trees, you are yourself rendering hot with your sighs. (*1*)

मलयवती—सहि, अत्थि को वि इमस्स दुक्खस्स उवसमोवाओ ?
सखि, अस्ति को ऽप्यस्य दुःखस्योपशमोपायः ?

चेटी—भट्टिदारिए, अत्थि, जदि सो इह आअच्छे ।
भर्तृदारिके, अस्ति, यदि स इहागच्छेत् ।

(ततः प्रविशति जीमूतवाहनो विदूषकश्च)

जीमूतवाहनः—

व्यावृत्त्यैव सितासितेक्षणरुचा तानाश्रमे शाखिनः
कुर्वत्या विटपावसक्त-विलसत्-कृष्णाजिनौघानिव ।
यद् दृष्टो ऽस्मि तया मुनेरपि पुरस्तेनैव मय्याहते
पुष्पेषो ! भवता मुधैव किमिति क्षिप्यन्त एते शराः ॥२॥

विदूषकः—भो वअस्स, कहिं क्खु गअं दे धीरत्तणं ?
भो वयस्य, कुत्र खलु गतं ते धीरत्वम् ?

जीमूतवाहनः—वयस्य, ननु धीर एवास्मि । कुतः,—

नीताः किं न निशाः शशाङ्करुचयो नाघ्रातमिन्दीवरं
किं नोन्मीलितमालतीसुरभयः सोढाः प्रदोषानिलाः ।
झङ्कारः कमलाकरे मधुलिहां किं वा मया न श्रुतो
निर्व्याजं विधुरेष्वधीर इति मां केनाभिधत्ते भवान् ॥३॥

अथवा, न सम्यगहं ब्रीवीमि । वयस्यात्रेय,—

स्त्रीहृदयेन न सोढाः क्षिप्ताः कुसुमेषवो ऽप्यनङ्गेन ।
येनाद्यैव पुरस्तव वदामि धीर इति स कथमहम् ॥४॥

Malayavati—But, my dear, is there any remedy for mitigating the sting of this torment ?

Maid—Princess, there is, if only *he* could come here.

[*Enter* JIMUTAVAHANA *and* JESTER]

Jimutavahana—

When I have already been the victim of her chiaroscuro glances, which produced the light and shade effect on the trees of the hermitage as if glistening sables were hanging from their branches and which she cast at me in the very presence of that hermit just as she turned, why then, O Kama, art thou shooting thine arrows at me in vain ? (2)

मलयवती—सखि, क्या इस संताप को शान्त करने का कोई उपाय भी है ?

चेटी—बीबी जी, है, यदि वह यहाँ आ जाए।

(जीमूतवाहन और विदूषक का प्रवेश)

जीमूतवाहन—

हे कामदेव ! तुम क्यों व्यर्थ में अपने ये बाण मेरे पर चला रहे हो ? जब कि उस (प्रेयसी) ने घूमकर तपस्वी के सामने ही (अर्थात् उसकी आँखों में धूल झोंककर) मुझे अपनी चितवन की उस झिल-मिली (काली-चिट्टी) कान्ति से (देखकर पहले ही) घायल कर दिया है जिससे उसने आश्रम के उन वृक्षों को ऐसे (झिलमिले) बना दिया था मानों उनकी शाखाओं से चमकती हुई काली मृगछालाएँ लटक रही हों । (२)

विदूषक—मित्र, कहाँ गई आपकी धीरता ?

जीमूतवाहन—मित्र, मैं धीर ही तो हूँ । क्यों,—

क्या मैंने चाँदनी-छिटकी रातें नहीं काटीं ? क्या मैंने नीलोत्पल नहीं सूँघा ? क्या मैंने खिली हुई मालती की सुगन्ध से लदे हुए सायं-समीर को सहन नहीं किया ? क्या मैंने कमलों वाले सरोवर पर मँडराते भौंरों की गुञ्जार नहीं सुनी ? तो फिर किसलिये तुम मुझे विरहियों में वास्तविक रूप से अधीर कहते हो ? (३)

अथवा, मैंने ठीक नहीं कहा । मित्र आत्रेय,—

आज ही स्त्री के समान कातर (अथवा प्रेयसी में आसक्त) हृदय वाले जिस व्यक्ति द्वारा तेरे सामने हा शरीर-रहित (अर्थात् निःसत्त्व) कामदेव द्वारा छोड़े हुए फूलों के बाण तक नहीं सहे गए वह मेरे सरीखा (कापुरुष) भला अपने-आपको कैसे धीर कह सकता है ? (४)

Jester—Where has your self-control fled, my friend ?

Jimutavahana—Why, friend,I am quite self-controlled ! For,—

Have I not passed the moonlit nights (with equanimity) ? Haven't I smelt the blue lotuses (without being perturbed) ? Have I not suffered the evening breezes laden with the fragrance of blooming jasmine (without even breathing a sigh) ? And haven't I listened to the humming of the bees over the lotus-pond (without a whimper) ? Then how, indeed, do you call me, one of the forlorn lovers though I am, lacking in self-control ? (3)

Or maybe, I am wrong in my defence. Friend Atreya,—

With what face can 1 brag of my self-control, before you when, with the feeble heart of a woman (or with my heart set on a woman), I have succumbed even to the mild charge of the flowery arrows of the unsubstantial Kama ? (4)

विदूषकः—(आत्मगतम्) एव्वं अहीरत्तणं पडिवज्जन्तेण आचक्खिदो णेण हिअअस्य महन्तो आवेओ। ता जाव-कहिं एव्व एदं अवक्खिवामि। (प्रकाशम्) भो वअस्स, कीस तुमं अज्ज लहु एव गुरुजणं सुस्सूसिअ इह आअदो ?

(आत्मगतम्) एवमधीरत्वं प्रतिपद्यमानेनाख्यातोऽनेन हृदयस्य महानावेगः। तद् यावत्-कुत्रैवैनमपक्षिपामि। (प्रकाशम्) भो वयस्य, कस्मात् त्वमद्य लघ्वेव गुरुजनं शुश्रूषयित्वेहागतः ?

जीमूतवाहनः—वयस्य, स्थाने खल्वेष प्रश्नः। कस्य वान्यस्यैतत् कथनीयम् ? अद्य खलु स्वप्ने जानामि सैव प्रियतमा (अङ्गुल्या निर्दिशन्) अत्र चन्दनलतागृहे चन्द्रकान्तमणिशिलायामुपविष्टा प्रणयकुपिता किमपि मामुपालभमानेव रुदती मया दृष्टा। तदिच्छामि स्वप्नानुभूतदयितासमागमरम्येऽस्मिन्नेव प्रदेशे दिवसमतिवाहयितुम्। तदेहि, गच्छावः।

(परिक्रामतः)

चेटी—(कर्णं दत्त्वा, ससंभ्रमम्) भट्टिदारिए, पदसद्दो विअ सुणीअदि।

(कर्णं दत्त्वा, ससंभ्रमम्) भर्तृदारिके, पदशब्द इव श्रूयते।

मलयवती—(ससंभ्रममात्मानं पश्यन्ती) हञ्जे, मा ईदिसं आआरं पेक्खिअ को वि हिअअं मे तुलीअदु। ता उट्ठेहि, इमिणा रत्तासोअपादवेण ओवारिदाओ पेक्खह्म को एसो त्ति।

(ससंभ्रममात्मानं पश्यन्ती) हञ्जे, मा ईदृशमाकारं प्रेक्ष्य कोऽपि हृदयं मे तुलयतु। तदुत्तिष्ठ, अनेन रक्ताशोकपादपेनापवारिते प्रेक्षावहे क एष इति।

(तथा कुरुतः)

विदूषकः—भो वअस्स, एदं चन्दणलदाघरअं। ता पविसह्म।

भो वयस्य, एतच्चन्दनलतागृहम्। तत् प्रविशावः।

(नाट्येन प्रविशतः)

Jester—(*Aside*) By confessing his weakness in this manner, he has only given vent to his pent up emotion. So I shall divert his mind to something else. (*Aloud*) Friend, how is it that you have returned so quickly from the service of your parents ?

Jimutavahana—A very apt question indeed, my friend. Whom

विदूषक—(मन ही मन) इस प्रकार अपनी अधीरता को स्वीकार करते हुए इसने अपने हृदय की घोर व्यथा प्रकट कर दी है। इसलिये इस (के मन) को किसी और बात की ओर लगाता हूँ। (प्रकट) मित्र, क्या बात है कि आज आप माता-पिता की सेवा से शीघ्र ही निपटकर यहाँ आ पहुँचे हो ?

जीमूतवाहन—मित्र, तुम्हारा प्रश्न उचित ही है। तुम्हारे बिना और किस से यह बात कही जा सकती है ? आज स्वप्न में मुझे ऐसे भान हुआ कि मैंने देखा वही प्रेयसी (उँगली से संकेत करते हुए) इस चन्दनलता-गृह में चन्द्रकान्तमणि की शिला पर बैठी, प्रेम में रूठी और मानों मुझे उलाहना सा देती हुई रो रही है।

चेटी—(कान देकर, चकित-भाव से) बीबी जी, कुछ पैरों की चाप सी सुनाई दे रही है।

मलयवती—(चौंककर, अपने-आप को निहारती हुई) सखि, मुझे इस अवस्था में देखकर कोई मेरे हृदय की बात न जान ले। उठ, इस रक्ताशोक की ओट में होकर देखें यह कौन है ?

(दोनों वैसे ही करती हैं)

विदूषक—आ गया भई, चन्दनलतागृह। चलो, अन्दर चलें।

(दोनों प्रवेश का अभिनय करते हैं)

---

shise could I take into confidence (if not you) ? Last night I had a dream in which I saw that that very sweet-heart of mine was seated on the moon-stone slab here in this (*Pointing with the finger*) sandal-bower and was weeping as if chiding me for something in affectionate anger. So I wish to pass this day in this very place which has become so dear to me on account of its being the rendezvous of my sweet-heart in a dream. Then come along, let us go thither.

[*They go*]

Maid—(*Listening, with excitement*) Princess, I hear something like the sound of footsteps as it were.

Malayavati—(*Surveying herself, with agitation*) Friend, lest sombody should read my heart from my present looks, we had better get up and from behind the cover of this red Asoka see who is coming.

[*They do so*]

Jester—Here is that sandal-bower, my friend. Come, let us go in.

[*They gesticulate entering*]

जीमूतवाहनः—(प्रविश्य)—

चन्दनलतागृहमिदं सचन्द्रमणिशिलमपि प्रियं न मम ।
चन्द्राननया रहितं चन्द्रिकया मुखम् इव निशायाः ॥५॥

चेटी—(जीमूतवाहनं दृष्ट्वा) भट्टिदारिए, दिट्ठिआ वड्ढसि । सो एव्व देहिअअवल्लहो ।

(जीमूतवाहनं दृष्ट्वा) भर्तृदारिके, दिष्ट्या वर्धसे । स एव ते हृदयवल्लभः ।

मलयवती—(दृष्ट्वा, सहर्षं ससाध्वसं च) हञ्जे, इमं पेक्खिअ ण सक्कुणोमि इह अच्चासण्णे ठादुं । कदाइ एसो मं पेक्खे । ता एहि, अण्णदो गच्छह्म । (सोरुकम्पं पदद्वयं ददाति)

(दृष्ट्वा, सहर्षं ससाध्वसं च) हञ्जे, इमं प्रेक्ष्य न शक्नोमीहात्यासन्ने स्थातुम । कदाचिदेष मां पश्येत् । तदेहि, अन्यतो गच्छावः । (सोरुकम्पं पदद्वयं ददाति)

चेटी—(विहस्य) अदिकादरे ! इह ट्ठिदं पि को तुमं पेक्खदि ? णं विसुमरिदो अन्तरे रत्तासोअपादवो ? ता इह एव चिट्ठह्म ।

(विहस्य) अतिकातरे ! इह स्थितामपि कस्त्वां प्रेक्षते ? ननु विस्मृतो ऽन्तरे रक्ताशोकपादपः ? तदिहैव तिष्ठावः ।

(तथा कुरुतः)

विदूषकः—(निरूप्य) भो वअस्स, एसा सा...

(निरूप्य) भो वयस्य, एषा सा...

(जीमूतवाहनः सबाष्पं निःश्वसिति)

चेटी—भट्टिदारिए, 'एसा सा' त्ति आलावो सुणीअदि । ता अवहिदा सुणह्म ।

भर्तृदारिके, 'एषा सा' इत्यालापः श्रूयते । तदवहिते शृणुवः ।

(उभे आकर्णयतः)

विदूषकः—(हस्तेन चालयन्) भो वअस्स, णं भणामि एसा सा चन्दमणिसिलत्ति ।

(हस्तेन चालयन्) भो वयस्य, ननु भणामि एषा सा चन्द्रमणिशिलेति ।

Jimutavahana—(*Having entered*)—

This sandal-bower in spite of its moon-stone bench has no appeal for me without the presence of my moon-faced love, even as the evening (*or the aspect of the night*) *without the sheen of the moon.* (5)

Maid—(*Seeing* JIMUTAVAHANA) Congratulations, Princess ! It is he, so *sweet* to your *heart*.

जीमूतवाहन—(प्रवेश करके)—

यह चन्दनलतागृह चाहे चन्द्रमणिशिला से सुशोभित ही है, किन्तु उस चन्द्र-मुखी के बिना मुझे (तनिक भी) अच्छा नहीं लगता—मानो ऐसे हो जैसे चाँदनी से रहित सन्ध्या काल (अथवा रात्रि की चितवन) । (५)

चेटी—(जीमूतवाहन को देखकर) बीबी जी, बधाई हो ! ये तो वही हैं—आपके प्राणेश्वर ।

मलयवती—(देखकर, हर्ष तथा घबराहट से) सखी, उनको संमुख देखकर मैं उनके इतने समीप नहीं ठहर सकती। कहीं वे मुझे देख लें तो ! चलो, कहीं और चलें। (काँपती जंघाओं से दो पग चलती है)

चेटी—(हँसकर) बड़ी कातर हो, बीबी जी ! यहाँ खड़े आपको देख कौन सकता है ? क्या भूल गईं, बीच में रक्ताशोक है ? आओ, यहीं ठहरें।

(दोनों वैसे करती हैं)

विदूषक—अरे मित्र, यही है वह ..

(जीमूतवाहन आँखों में आँसू भरकर निःश्वास लेता है)

चेटी—बीबी जी, वे कह रहे हैं—'यही है वह', आओ तनिक ध्यान से सुनें

(दोनों कान लगाकर सुनती हैं)

विदूषक—(हाथ से झँझोड़कर) मैंने कहा, मित्र, यही है वह चन्द्रमणि-शिला।

Malayavati—(*Looking, with mingled joy and nervousness*) My dear, seeing him so close I feel too nervous to remain here. Perchance he sees me ! Come, let us go to some other place.

[*With trembling legs she takes two steps*]

Maid—(*With a suppressed laughter*) You, timid girl ! who can possibly see you while you are here ? You conveniently forget that there is this red Asoka tree in between. So, we shall keep staying here.

[*They do so*]

Jester—(*Oberving*) O friend, this is that very......

[JIMUTAVAHANA *sighs tearfully*]

Maid—Princess, I hear the words, 'This is that very, (I suspect they are talking about some girl). Let us listen with attention.

[*Both listen*]

Jester—(*Shaking him with the hand*) I say, my friend, this is that very moonstone bench.

जीमूतवाहनः—वयस्य, सम्यगुपलक्षितम्। (हस्तेन निर्दिशन्)—

शशिमणि-शिला सेयं यस्यां विपाण्डुरम् आननं
कर-किसलये कृत्वा वामे घन-श्वसितोद्गमा।
चिरयति मयि व्यक्ताकूता मनाक् स्फुरितैर् भ्रुवोर्
नियमित-मनो-मन्युर् दृष्टा मया रुदती प्रिया॥६॥

तदस्यामेव चन्द्रकान्तमणिशिलायामुपविशावः।

मलयवती—(विचिन्त्य) का उण एसा भविस्सदि ?

(विचिन्त्य) का पुनरेषा भविष्यति ?

चेटी—भट्टिदारिए, जह अम्मे ओवारिदसरीराओ एदं पेक्खह्म, तह तुम पि एदेण दिट्ठा भवे।

भर्तृदारिके, यथाऽऽवामपवारितशरीरे एतं प्रेक्षावहे, तथा त्वमप्येतेन दृष्टा भवेः।

मलयवती—जुज्जइ एदं। किं उण पणअकुविदं पिअजणं हिअए करिअ मन्तेदि ?

युज्जत एतत्। किं पुनः प्रणयकुपितं प्रियजनं हृदये कृत्वा मन्त्रयते ?

चेटी—मा ईदिसं आसङ्कं करेहि। पुणो वि दाव सुणह्म।

मा ईदृशीमाशङ्कां कुरु। पुनरपि तावच्छृणुवः।

विदूषक—(आत्मगतम्) अहिरमदि एसो एदाए कहाए। भोदु, एदं एव्व से वड्ढावइस्सं। (प्रकाशम्) भो वअस्स, तह परुण्णा तुए किं भणिदा ?

(आत्मगतम्) अभिरमत एष एतया कथया। भवतु, एतदेवास्य वर्धयिष्यामि। (प्रकाशम्) भो वयस्य, तथा प्ररुदिता त्वया किं भणिता ?

जीमूतवाहनः—वयस्य इदमुक्ता—

निष्यन्दत इवानेन मुखचन्द्रोदयेन ते।
एतद्बाष्पाम्बुना सिक्तं चन्द्रकान्तशिलातलम्॥७॥

Jimutavahana—Yes, friend, you have observed rightly. (*Indicating with the hand*)—

Yes, this is the moonstone bench on which I saw my sweetheart, weeping and sobbing profusely at my delay, with her wan face placed on her delicate left hand, the slight tremour of her eye-

जीमूतवाहन—हाँ, तुमने ठीक पहचाना। (हाथ से निर्देश करते हुए)—

सचमुच यही है वह चन्द्रमणिशिला जिसपर मैंने (स्वप्न में) देखा था कि मेरी प्रेयसी मेरे विलम्ब के कारण अपने विवर्ण वदन को अपने किसलय-कोमल बाएँ हाथ पर रखे लम्बी आहें भरती हुई रो रही है, किन्तु अपने हृदय के रोष को दबाए रखने पर भी उसका अन्तर्भाव उसकी भृकुटियों की हलकी फरकन से अभिव्यक्त हो रहा था। (६)

तो आओ, इसी चन्द्रमणिशिला पर बैठ जाएँ।

मलयवती—(सोचकर) कौन (प्रेयसी) होगी यह ?

चेटी—बीबी जी, जैसे हम स्वयं छिपी हुई उन्हें देख रही हैं, कहीं आपको भी उन्होंने न देख लिया हो।

मलयवती—संभव है। पर वे तो किसी प्रणय-कुपिता प्रेयसी की बात चला रहे हैं—यह क्यों ?

चेटी—ऐसी आशंका मत करो। आगे सुन तो लें।

विदूषक—(मन ही मन) यह इस कथा से प्रसन्न होता है। अस्तु, इसीको आगे चलाऊँ। (प्रकट) हाँ, तो फिर उसे रोती देखकर तुमने क्या कहा ?

जीमूतवाहन—मित्र, मैंने कहा था—

प्रिये, तेरे आँसुओं से भीगी हुई यह चन्द्रकान्तशिला ऐसे प्रतीत होती है मानो तेरे मुखचन्द्र के उदय से प्रस्रवित हो (अर्थात् पसीज) रही हो। (७)

---

brows, however, betraying the suppressed anger she was feeling within. (6)

Come, let us sit down on this very moon-stone bench.

Malayavati—(*Reflecting*) Who could possibly she be ?

Maid—Princess, just as we are looking at him from behind cover, even so he may also have noticed you.

Malayavati—Quite possible. But then why should he speak with reference to some beloved angered in love ?

Maid—Don't be entertaining such suspicions. Let us listen further.

Jester—(*Aside*) The story holds him. Well, I shall egg him on. (*Aloud*) But, my friend, what did you say to her when you saw her weeping thus ?

Jimutavahana—Friend, I said to her—

This moon-stone slab, bathed in thy tears, my darling, seems to ooze as it were at the sight of thy moon-face. (7)

मलयवती— (सरोषम्) सुदं एदं चउरिए ? अत्थि किं पि अदो वरं सोदव्वं ? (सास्रम्) एहि, गच्छह्म ।

(सरोषम्) श्रुतमेतच्चतुरिके ? अस्ति किमप्यतः परं श्रोतव्यम् ? (सास्रम्) एहि, गच्छावः ।

चेटी—(हस्तेन गृहीत्वा) भट्टिदारिए, मा एव्वं । जेण तुमं दिट्ठा, सो अण्णं उद्दिसिअ एवं भणिस्सदि त्ति ण मे हिअअं पत्तिआअदि । ता कहावसाणं दाव पडिवालह्म ।

(हस्तेन गृहीत्वा) भर्तृदारिके, मैवम् । येन त्वं दृष्टा, सो ऽन्यामुद्दिश्यैवं भणिष्यतीति न मे हृदयं प्रत्येति । तत् कथावसानं तावत् प्रतिपालयावः ।

जीमूतवाहनः—वयस्य, तामेवास्यां शिलायामालिख्य तया चित्रगतयात्मानं विनोदयेयम् । तदित एव गिरितटान्मनःशिलाशकलान्यानय ।

विदूषकः—जं भवं आणवेदि । (निष्क्रम्य, प्रविश्य) भो वअस्स, तुए एक्को वण्णो आणत्तो, मए उण इह पव्वदादो पञ्च वण्णा आणीदा । ता आलिहदु भवं ।

यद् भवानाज्ञापयति । (निष्क्रम्य, प्रविश्य) भो वयस्य, त्वयैको वर्ण आज्ञप्तः, मया पुनरिह पर्वतात्पञ्च वर्णा आनीताः । तदालिखतु भवान् ।

जीमूतवाहनः—वयस्य, साधु कृतम् । (गृहीत्वा शिलायामालिखन्, सरोमाञ्चम्) सखे, पश्य, पश्य !—

अक्लिष्ट-बिम्ब-शोभाधरस्य नयनोत्सवस्य शशिन इव ।
दयितामुखस्य सुखयति रेखा ऽपि प्रथमदृष्टेयम् ॥८॥

(आलिखति)

विदूषकः—(सकौतुकं निर्वर्ण्य) भो वअस्स, अप्पच्चक्खं वि एव्वं आलिहीअदि त्ति अच्छरिअं !

(सकौतुकं निर्वर्ण्य) भो वयस्य, अप्रत्यक्षमप्येवमालिख्यत इत्याश्चर्यम् !

Malayavati—(*Angrily*) Do you hear, Chaturika ? Is there anything more to be heard ? (*In tears*) Come, let us go.

Maid—(*Holding her by the hand*) Not so, Princess. I, for one, can't believe that one who has seen you once can ever speak like this with reference to another girl. Let us therefore wait till the end of the story.

Jimutavahana—Friend, I feel like diverting myself by making

मलयवती—(रोष से) सुना तूने, चतुरिका ? रह गया है अब इससे आगे कुछ और सुनने को ? (आँसू भरकर) चलो, चलें यहाँ से ।

चेटी—(हाथ पकड़कर) बीबी जी, नहीं। जिसने आपको (एक बार) देख लिया हो, वह किसी और को लक्ष्य करके ऐसी बातें करे—मेरा जी नहीं मानता। इसलिये ठहरो, कहानी के अन्त तक तो प्रतीक्षा कर लें।

जीमूतवाहन—अच्छा मित्र, अब इस शिला पर उसी का चित्र बनाकर उस चित्र से ही क्षण भर अपना मन बहला लूँ। तो इसी पर्वत पर से मनसिल के टुकड़े तो उठा लाओ।

विदूषक—जो आज्ञा। (जाकर और फिर लौटकर) भाई मेरे, आपने तो एक ही रंग लाने के लिये कहा था, और लो, मैं ले आया हूँ इस पहाड़ पर से पूरे पाँच। अब चित्र खेंचना आरम्भ करो।

जीमूतवाहन—वाह, मित्र, तूने बहुत अच्छा किया। (रंगों को लेकर शिला पर चित्र खेंचते हुए, रोमाञ्च-पूर्वक) मित्र, देखो, देखो ना !—

पके (अक्षत) बिम्बफल के समान (लाल) होंठों वाले और नयनाभिराम प्रेयसी के मुख की पहली (अर्थात् बाहरी) रेखा भी देखने पर ऐसे सुख देती है, जैसे मेघों से अनाच्छादित (अथवा सम्पूर्ण) मण्डल की कान्ति धारण करने वाली और आँखों को भली लगने वाली चाँद की पहली (प्रतिपदा की) टुकड़ी। (८)

(चित्र खेंचने लग जाता है)

विदूषक—(कुतूहल से देखता हुआ) मित्र, आँखों से ओझल होने पर भी ऐसा (वास्तविक) चित्र खेंच रहे हो, बड़े आश्चर्य की बात है !

---

a picture of her on this very slab. So, fetch for me some pieces of red arsenic from the mountain-side here.

Jester—By all means, as you command. (*Exit. Re-enter*) Friend, you had asked only for one kind of pastels, but look, here I have brought five colours. Now you may do the drawing.

Jimutavahana—Well done, my friend. (*Taking the pastels and making the drawing on the slab, with a thrill of excitement*) Friend, see, see !—

Even the first glimpse of the outline of the eyesome face of my beloved with lips luscious like the Bimba fruit, gives me solace, like unto the new lunar digit which shines gloriously on a cloudless sky (or is as bright as the full moon) and is delightful to the eyes. (8)

[*Resumes drawing*]

Jester—(*Looking at it with curiosity*) Friend, it is really wonderful that you could draw it so well even when the model is not there !

जीमूतवाहनः—वयस्य,—

प्रिया संनिहितैवेयं संकल्पैः स्थापिता पुरः ।
दृष्ट्वा-दृष्ट्वा लिखाम्येनां यदि तत् को ऽत्र विस्मयः ॥९॥

मलयवती—(निःश्वस्य, सास्रम्) चउरिए, जादं क्खु कहावसाणं। ता एहि, अज्जमित्तावसुं दाव पेक्खह्म ।

(निःश्वस्य, सास्रम्) चतुरिके, जातं खलु कथावसानम् । तदेहि, आर्यमित्रावसुं तावत् प्रेक्षावहे ।

चेटी—(सविषादमात्मगतम्) हं, जीविअणिरवेक्खो विअ से आलावो । (प्रकाशम्) भट्टिदारिए, गदा एव्व तहिं मणोहरिआ । अदो कदाइ भट्टिदारओ मित्तावसू इह एव्व आअच्छे ।

(सविषादमात्मगतम्) हं, जीवितनिरपेक्ष इवास्या आलापः । (प्रकाशम्) भर्तृदारिके, गतैव तत्र मनोहरिका । अतः कदाचिद् भर्तृदारको मित्रावसुरिहैवागच्छेत् ।

(ततः प्रविशति मित्रावसुः)

मित्रावसुः—आज्ञापितो ऽस्मि तातेन, यथा—"वत्स मित्रावसो, कुमारो जीमूतवाहनो ऽस्माभिरिहासन्नवासात् सुपरीक्षितः, तद् योग्यो ऽयं वरः । तस्मै वत्सा मलयवती प्रतिपाद्यताम्" इति । अहं तु स्नेहपराधीनतया ऽन्यदेव किमप्यवस्थान्तरमनुभवामि । कुतः,—

यद्विद्याधरराजवंशतिलकः प्राज्ञः सतां संमतो
रूपेणाप्रतिमः पराक्रमधनो विद्वान् विनीतो युवा ।
यच्चासूनपि संत्यजेत् करुणया सत्त्वार्थमभ्युद्यतस्
तेनास्मै ददतः स्वसारमतुला तुष्टिर्विषादश्च मे ॥१०॥

Jimutavahana—Friend,—

My fancy has already placed (*the vision of*) *my beloved before me here. If I look at it again and again and draw, what is there to wonder at?* (*9*)

Malayavati—(*Sighing, in tears*) Chaturika, the story has surely come to an end. Come, let us go and look for Mitravasu.

Maid—(*With dismay, aside*) Alack, her tone tells, she has grown sick of life. (*Aloud*) Princess, Manoharika has already

जीमूतवाहन—भोले भाई—

प्रिया पास ही तो है। मैंने जो उसे अपनी कल्पना से यहाँ अपने संमुख स्थापित किया हुआ है। उसी को देख-देखकर मैं चित्र बनाता जा रहा हूँ। इसमें आश्चर्य की कौनसी बात है? (६)

मलयवती—(निःश्वास लेकर, आँसूभरे) चतुरिका, कहानी तो समाप्त हो गई। चलो आओ, मित्रावसु को देखें।

चेटी—(विषाद-पूर्वक, मन ही मन) हाय! इसकी बातों से लगता है कि यह जीवन से निराश हो गई है। (प्रकट) बीबी जी, उधर तो पहले से ही मनोहरिका गई हुई है। इसलिये कहीं स्वामी मित्रावसु जी इधर ही न आ निकलें।

(मित्रावसु का प्रवेश)

मित्रावसु—मुझे पिता जी का आदेश हुआ है, कि—"पुत्र मित्रावसु, कुमार जीमूतवाहन को हमने निकटवास में भली भाँति परख लिया है। वह योग्य वर है। पुत्री मलयवती का उससे संबन्ध स्थिर कर लो।" परन्तु (बहिन के) स्नेहवश इस समय मेरे मन की कुछ और ही अवस्था हो रही है। क्योंकि,—

जीमूतवाहन विद्याधर राजवंश का तिलक-स्वरूप है, बुद्धिमान् है। साधु सज्जन सभी उसका मान करते हैं। उसी प्रकार वह रूप सौन्दर्य में भी अप्रतिम है, पराक्रम का धनी है, विद्वान है, विनय-शील है, यौवन के शिखर पर है। पर वह इतना करुणा-शील है कि प्राणीमात्र के लिये प्राणोत्सर्ग करते भी उसे तनिक संकोच नहीं। इसलिये ऐसे पुरुष के हाथ में अपनी बहिन का हाथ सौंपते हुए मेरा मन संतोष और विषाद दोनों भावनाओं से अत्यन्त विह्वल हो रहा है। (१०)

---

left for him. Just possible the Prince Mitravasu himself may be coming hither.

[*Enter* MITRAVASU]

Mitravasu—I have been bid by my father saying, "Mitravasu, my son, we have seen Mitravasu here at close quarters. He is a suitable match. You please go and propose the hand of Malayvati to him." I, on the other hand, out of great affection for my sister, am in a conflict of feelings. For,—

True, that Jimutavahana is the crowning glory of the Vidyadhara family, that he is young, wise and a favourite of the good, that he is unsurpassed in beauty and is a man of valour, that he is possessed of learning and culture, but because, moved by compassion, he may any moment sacrifice his life for the sake of another living being, I am awfully torn between the feelings of joy and sorrow while offering the hand of my sister to him. (10)

श्रुतं च मया, यथा—असौ जीमूतवाहनो ऽत्रैव गौर्याश्रमसंबद्धे चन्दनलतागृहे वर्तत इति। तदेतच्चन्दनलतागृहम्। यावत् प्रविशामि। (प्रविशति)

विदूषकः—(ससंभ्रममवलोक्य) भो वअस्स, इमिणा पच्छादेहि कदलीपत्तेण इमं चित्तगदं कम्म। एसो क्खु सिद्धजुअराओ मित्तावसू इह एव्व आअदो! कदाइ एसो पेक्खे।

(ससंभ्रममवलोक्य) भो वयस्य, अनेन प्रच्छादय कदलीपत्रेणेदं चित्रगतं कर्म। एष खलु सिद्धयुवराजो मित्रावसुरिहैवागतः! कदाचिदेष प्रेक्षेत।

(नायकः कदलीपत्रेण प्रच्छादयति)

मित्रावसुः—(उपसृत्य) कुमार, मित्रावसुः प्रणमति।

जीमूतवाहनः—(दृष्ट्वा) मित्रावसो, स्वागतम्। इह स्थीयताम्।

चेटी—भट्टिदारिए, आअदो क्खु एसो मित्तावसू।

भर्तृदारिके, आगतः खल्वेष मित्रावसुः।

मलयवती—हञ्जे, पिअं मे।

हञ्जे, प्रियं मे।

जीमूतवाहनः—मित्रावसो, अपि कुशली सिद्धराजो विश्वावसुः?

मित्रावसुः—कुशली तातः। तातसंदेशेनैवास्मि त्वत्सकाशमिहागतः।

जीमूतवाहनः—किमाह तत्रभवान्?

मलयवती—सुणिस्सं दाव, किं तादेण संदिट्ठं त्ति?

श्रोष्यामि तावत्, किं तातेन संदिष्टमिति?

मित्रावसुः—इदमाह तातः—"अस्ति मे दुहिता मलयवती नाम जीवितमिवास्य सर्वस्यैव सिद्धराजान्वयस्य। सा मया तुभ्यं प्रतिपद्यते, प्रतिगृह्यताम्" इति।

चेटी—(विहस्य) भट्टिदारिए, किं ण कुप्पसि दाणिं?

(विहस्य) भर्तृदारिके, किं न कुप्यसीदानीम्?

And I hear that Jimutavahana is somewhere here in the sandal-grove adjoining the temple of Gauri. Here is the sandal-grove. I shall just enter it. (*Enters*)

Jester—(*Looking, with a start*) Friend, hurry to cover the picture with this plantain leaf. Here comes Mitravasu, the Siddha Prince. Supposing he sees it?

Mitravasu—(*Approaching*) Prince, Mitravasu greets thee.

Jimutavahana—(*Seeing*) Welcome Mitravasu. Come, and take your seat here.

मने सुना भी है कि जीमूतवाहन इस समय यहीं कहीं गौरी के आश्रम से संलग्न चन्दनलतागृह में ही है। लो, यही वह चन्दनलतागृह है। इसके अन्दर जाकर देखूँ। (प्रवेश करता है)

विदूषक—(चौंककर देखते हुए) भाई, इस केले के पत्ते से इस चित्र को ढँक दो। वे सामने सिद्ध-युवराज मित्रावसु यहीं आ पहुँचे हैं! कहीं वे देख न लें।

(जीमूतवाहन कदलीपत्र से चित्र को ढँक देता है)

मित्रावसु—(पास आकर) राजकुमार, मित्रावसु का प्रणाम स्वीकार कीजिये।

जीमूतवाहन—(देखकर) आओ, मित्रामसु, जी आए। आओ, बैठो।

चेटी—बीबी जी, लो मित्रावसु भी आ गए।

मलयवती—हाँ, बहुत अच्छा हुआ—अब जान में जान आई।

जीमूतवाहन—भाई मित्रावसु, सिद्धराज श्रीविश्वावसु कुशल से तो हैं?

मित्रावसु—पिता जी कुशल मङ्गल से हैं। उन्हीं का संदेश लेकर मैं आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ।

जीमूतवाहन—क्या आज्ञा है उनकी?

मलयवती—सुनूँ तो, पिता जी ने क्या संदेश दिया है?

मित्रावसु—पिता जी ने कहा है—"मेरी एक पुत्री है जिसका नाम है मलयवती, मानों सारे सिद्ध राजवंश की वह प्राण-सर्वस्व है। मैं उसे आपको देना चाहता हूँ। कृपया स्वीकार कीजिये।"

चेटी—(हँसकर) बीबी जी, अब क्यों नहीं कुपित होतीं?

Maid—Princess, Mitravasu has actually arrived here.

Malayavati—Good, I am glad.

Jimutavahana—Mitravasu, how fares His Majesty, the Siddha King, Visvavasu?

Mitravasu—Father is in good health. And it is with his message that I have come to you.

Jimutavahana—What are the orders of His Majesty?

Malayavati—I would like to hear what father has to convey.

Mitravasu—Father says, "I have a daughter named Malayavati who is the life-spring as it were of the whole Siddha community. I beg to offer her hand to you. You oblige me by accepting her."

Maid—(*With a mild laugh*) Princess, why don't you get angry now?

मलयवती—(सस्पृहं सलज्जं चाधोमुखी स्थित्वा) हञ्जे, मा तुस्स ! किं विसुमरिदं दे एदस्स अण्णहिअअत्तणं ?

(सस्पृहं सलज्जं चाधोमुखी स्थित्वा) हञ्जे, मा तुष्य ! किं विस्मृतं त एतस्यान्यहृदयत्वम् ?

जीमूतवाहनः—(अपवार्य) वयस्य, सङ्कटे पतिताः स्मः ।

विदूषक—(अपवार्य) भो, जाणामि भवदो ण तं वज्जिअ अण्णहिं चित्तं अहिरमदि त्ति । तह वि जं किञ्चि भणिअ विसज्जीअदु एसो ।

(अपवार्य) भो, जानामि भवतो न तां वर्जयित्वा ऽन्यत्र चित्तमभिरमत इति । तथा ऽपि यत्किंचिद् भणित्वा विसृज्यतामेषः ।

मलयवती—(सरोषमात्मगतम्) हदास, को वा एदं ण जाणादि ?

(सरोषमात्मगतम्) हताश, को वैतन्न जानाति ?

जीमूतवाहनः—मित्रावसो, क इव नेच्छेद्भवद्भिः सह श्लाघ्यमिमं संबन्धम् ? किन्तु न शक्यते चित्तमन्यतः प्रवृत्तमन्यतो निवर्तयितुम् । अतो नाहमेनां प्रतिग्रहीतुमुत्सहे ।

(मलयवती मूर्च्छां नाटयति)

चेटी—समस्ससिदु, समस्ससिदु, भट्टिदारिआ !

समाश्वसितु, समाश्वसितु, भर्तृदारिका !

विदूषकः—भो, पराहीणो क्खु एसो । ता किं एदेण भणन्तेण ? गुरुअणं से गदुअ अब्भत्थेहि ।

भोः, पराधीनः खल्वेषः । तत् किमेतेन भणता ? गुरुजनमस्य गत्वा ऽभ्यर्थयस्व ।

मित्रावसुः—(आत्मगतम्) साधूक्तम् । नायं गुरुवचनमतिक्रामति । एष गुरुजनो ऽप्यस्मिन्नेव गौर्याश्रमे प्रतिवसति । तद्यावद् गत्वा ऽस्य पित्रोर्मलयवतीं प्रतिग्राहयामि ।

(मलयवती समाश्वसिति)

Malayavati—(*Stands looking to the ground with eager expectations and bashfulness* Don't be over jubilant, my girl ! You forget that his heart is set on someone else ?

Jimutavahana—(*Aside*) I am put in a dilemma, my friend.

Jester—(*Aside*) I know, you are interested in none else save her. But dispose him of with some evasive answer.

Malayavati—(*Angrily, aside*) Confound thee, wretch, who doesn't know this ?

Jimutavahana—Mitravasu. who would not welcome such a coveted relationship with you ? But I am sorry to say that

मलयवती—(चाव और लज्जा से नीचे मुँह किये) सखि, तू क्यों इतनी प्रसन्न हो रही है ? क्या भूल गई कि उनका मन तो किसी और पर मुग्ध है ?

जीमूतवाहन—(एक ओर मुँह फेरकर) मित्र, मैं तो अच्छे झंझट में फँस गया !

विदूषक—(एक ओर मुँह फेरकर) मैं जानता हूँ कि उसे छोड़कर आपका मन और कहीं नहीं रमता। तो भी, कुछ न कुछ उत्तर देकर इसे टाल तो दो।

मलयवती—(रोष के साथ, मन ही मन) अरे दुष्ट, यह बात कौन नहीं जानता ?

जीमूतवाहन—मित्रावसु भाई, कौन होगा जो आपके साथ यह प्रशंसनीय संबन्ध स्थापित न करना चाहेगा ? किन्तु, एकसे लगे चित्त को हटाकर दूसरेसे लगाना असंभव है, इसलिये मैं आपकी बहिन को स्वीकार करने में असमर्थ हूँ।

(मलयवती मूर्च्छा का अभिनय करती है)

चेटी—धैर्य धरो, बीबी जी, धैर्य धरो !

विदूषक—भाई, इस बात में ये स्वाधीन नहीं हैं। तो इनसे कहने से क्या लाभ ? इनके बड़ों के आगे जाकर प्रार्थना करो।

मित्रावसु—(मन ही मन) इसने बात तो ठीक कही है। गुरुजनों का वचन जीमूतवाहन नहीं टाल सकता। वे गुरुजन भी आजकल यहीं गौरी आश्रम में ठहरे हुए हैं। तो मैं जाकर इसके माता-पिता द्वारा मलयवती को स्वीकार करवाता हूँ।

(मलयवती सुध में आ जाती है)

---

a heart set on one cannot be diverted to another. You will excuse me, therefore, if I do not venture to accept her hand.

[MALAYAVATI *acts as if swooning*]

Maid—Hold yourself, Princess, just hold yourself.

Jester—My dear sir, he has no free will in this matter. So, what is the good of requesting him ? You had better go to his elders and request them.

Mitravasu—(*Aside*) He is right in saying this. This man will not dare go counter to the commitments of his parents. Luckily, his parents too are putting up here in the vicinity of this Gauri temple. So I shall go and get the proposal about Malayavati accepted through his parents.

[MALAYAVATI *comes to herself*]

मित्रावसुः—(प्रकाशम्) एवं निवेदितात्मनो ऽस्मान् प्रत्याचक्षाणः कुमार एव बहुतरं जानाति।

मलयवती—(सरोषम्) कहं पच्चक्खाणलहुओ मित्तावसू पुणो वि मन्तेदि ?

(सरोषम्) कथं प्रत्याख्यानलघुर्मित्रावसुः पुनरपि मन्त्रयते ?

(निष्क्रान्तो मित्रावसुः)

मलयवती—(सास्रमात्मानं पश्यन्ती) किं मम एदिणा दोब्भग्गकलङ्कमलिणेण अच्चन्तदुक्खभाइणा अज्ज वि सरीरहदएण ? जाव इह एव्व रत्तासोअपादवे इमाए अदिमुत्तलदाए उब्बन्धिअ अत्ताणं वावादइस्सं। ता एव्वं दाव। (प्रकाशं, सविलक्षस्मितम्) हञ्जे, पेक्ख दाव मित्तावसू दूरं गदो ण वेत्ति, जेण अहं इदो गमिस्सं।

(सास्रमात्मानं पश्यन्ती) किं ममैतेन दौर्भाग्यकलङ्कमलिनेनात्यन्तदुःखभागिना ऽद्यापि शरीरहतकेन ? यावदिहैव रक्ताशोकपादपे ऽनयातिमुक्तलतयोद्बध्यात्मानं व्यापादयिष्यामि। तदेवं तावत्। (प्रकाशं, सविलक्षस्मितम्) हञ्जे, प्रेक्षस्व तावन्मित्रावसुर्दूरं गतो न वेति, येनाहमपीतो गमिष्यामि।

चेटी—जं भट्टिदारिआ आणवेदि। (कतिचित् पदानि गत्वा) अण्णादिसं से हिअअं पेक्खामि, ता ण दाव गमिस्सं। इह एव ओवारिदा पेक्खामि किं एसा पडिवज्जदि त्ति।

यद् भर्तृदारिकाऽऽज्ञापयति। (कतिचित् पदानि गत्वा) अन्यादृशमस्या हृदयं प्रेक्षे, तन्न तावद्गमिष्यामि। इहैवापवारिता प्रेक्षे किमेषा प्रतिपद्यत इति।

मलयवती—(उत्थाय, दिशो विलोक्य, पाशं गृहीत्वा, सास्रम्) भअवदि गोरि, इह तुए ण किदो पसादो। ता अण्णस्सिं पि दाव जम्मे जह ण ईदिसी दुक्खभाइणी होमि, तह करेहि। (कण्ठे पाशमर्पयति)

(उत्थाय, दिशो विलोक्य, पाशं गृहीत्वा, सास्रम्) भगवति गौरि, इह त्वया न कृतः प्रसादः। तदन्यस्मिन्नपि तावज्जन्मनि यथा नेदृशी दुःखभागिनी भवामि, तथा कुरु। (कण्ठे पाशमर्पयति)

Mitravasu—(*Aloud*) The Prince alone knows best why he has declined to accept our offer.

Malayavati—(*Indignantly*) Why, I wonder, should Mitravasu go on pressing his suit when he has been slighted by a refusal ?

मित्रावसु—(प्रकट) इस प्रकार की हुई हमारी प्रार्थना को ठुकराने में कुमार स्वयं सयाने हैं।

मलयवती—(रोष से) समझ नहीं आता, अस्वीकृति द्वारा तिरस्कृत होकर भी मित्रावसु अभी तक क्यों बात चलाए जा रहा है ?

(मित्रावसु का निष्क्रमण)

मलयवती—(आँसूभरे, अपने-आपपर दृष्टि डालती हुई) मुझे अब इस दुर्भाग्य-रूपी कलंक से मलिन, अत्यन्त दुःख भरे, निगोड़े जीवन से क्या प्रयोजन ? अब तो मैं यहीं रक्ताशोक पर इस अतिमुक्तलता की फाँसी लगाकर अपने जीवन से छुटकारा पाऊँगी। तो यही मेरा निश्चय हुआ। (प्रकट, अस्वाभाविक मुस्कराहट से) सखि, जा देख तो मित्रावसु दूर निकल गया कि नहीं, जिससे मैं भी इस स्थान से जाऊँ।

चेटी—जो बीबी जी की आज्ञा। (कुछ एक पग जाकर) लगता है इसके मन पर कुछ और ही बीत रही है, इसलिये मैं जाऊँगी नहीं। यहीं से ओट में होकर देखती हूँ यह क्या करती है।

मलयवती—(उठकर, इधर-उधर देखती हुई, फंदा हाथ में लेकर, आँसूभरे) भगवति गौरि, इस जीवन में तो तूने अनुग्रह नहीं किया। अतः इतना तो कर देना कि दूसरे जन्म में मुझे इतने दुःख-कष्ट न हों। (गले में फंदा डाल लेती है)

Malayavati—(*Surveying herself, in tears*) What shall I do now with this wretched body of mine except to suffer it with the disgrace and torment of frustration? I shall, therefore, kill myself on the spot by hanging from this red Asoka with the noose of the Atimukta creeper. So this is settled. (*Aloud, with an uncanny smile*) Girl, just see if Mitravasu has gone out of sight or not, so that I may also leave this place.

Maid—As the Princess wishes. (*Advancing a few steps*) I suspect that her mind is a little unhinged. I shall not therefore go. Hidden from view I shall watch from here what she intends to do.

Malayavati—(*Rising up, looking in all directions, and taking the noose, in tears*) Gauri, my Goddess, thou hast not shown me any favour in this life. Pray, ordain that in my next life I have not to suffer similar anguish over again. (*Puts the noose round her neck*)

चेटी—(दृष्ट्वा, ससंभ्रमम्) परित्ताअह ! परित्ताअह ! एसा भट्टिदारिआ उब्बन्धिअ अत्ताणं वावादेदि ।

(दृष्ट्वा, ससंभ्रमम्) परित्रायध्वम् ! परित्रायध्वम् ! एषा भर्तृदारिकोद्बध्यात्मानं व्यापादयति ।

जीमूतवाहनः—(ससंभ्रममुपेत्य) क्वासौ, क्वासौ ?

चेटी—इअं असोअपादवे ।

इयमशोकपादपे ।

जीमूतवाहनः—(दृष्ट्वा, सहर्षम्) कथं, सैवेयमस्मन्मनोरथभूमिः ? (नायिका पाणौ गृहीत्वा लतापाशमाक्षिपन्)—

न खलु न खलु मुग्धे ! साहसं कार्यमेवं
व्यपनय करमेतं पल्लवाभं लतायाः ।
कुसुममपि विचेतुं यो न मन्ये समर्थः
कलयति स कथं ते पाशमुद्बन्धनाय ॥११॥

मलयवती—(ससाध्वसम्) हद्धि ! को ण क्खु एसो ? (नायकं निरूप्य, सरोषं हस्तमाक्षेप्तुमिच्छति) मुञ्च, मुञ्च मे अग्गहत्थं । को तुमं णिवारेदुं ? मरणे वि किं तुमं एव्व अब्भत्थणीओ ?

(ससाध्वसम्) हा धिक् ! को नु खल्वेषः ? (नायकं निरूप्य, सरोषं हस्तमाक्षेप्तुमिच्छति) मुञ्च, मुञ्च मे ऽग्रहस्तम् । कस्त्वं निवारयितुम् ? मरणे ऽपि किं त्वमेवाभ्यर्थनीयः ?

जीमूतवाहनः—नाहं मुञ्चामि—

कण्ठे हारलतायोग्ये येन पाशस्तवार्पितः ।
गृहीतः सापराधो ऽयं स कथं मुच्यते करः ॥१२॥

विदूषकः—भोदि, किं पुण से मरणववसाअस्स कारणं ?

भवति, किं पुनरस्या मरणव्यवसायस्य कारणम् ?

Maid—(*Seeing, in alarm*) Help ! Help ! Princess is committing suicide by hanging.

Jimutavahana—(*Approaching hastily*) Where is she, where is she ?

Maid—There, beneath the Asoka tree.

चेटी—(देखकर, घबराहट से) बचाओ रे, बचाओ! राजकुमारी फाँसी लगाकर अपने-आपको मारने लगी है।

जीमूतवाहन—(घबराहट से झटपट पास जाकर) कहाँ है, कहाँ है ?

चेटी—वह देखो अशोक वृक्ष के नीचे।

जीमूतवाहन—(देखकर, हर्ष से) अरे, यह तो वही है—मेरी स्वप्न प्रेयसी। (मलयवती का हाथ पकड़कर लतापाश को छीनते हुए)—

अरी ना समझ, मत कर, ऐसा दुःसाहस मत कर! अपने किसलय-कोमल हाथ को इस लता से हटा ले। जो कोमल हाथ फूल तक चुनने में कष्ट अनुभव करता है मैं नहीं समझता वह फाँसी की गाँठ कैसे लगा सकता है? (११)

मलयवती—(सहमकर) हाय रे, यह कौन आ गया ? (जीमूतवाहन को देखकर, रोष से अपना हाथ छुड़ाना चाहती है) छोड़ो, मेरे हाथ को छोड़ दो। तुम कौन हो मुझे रोकने वाले ? मरने के लिये भी क्या पहले तुम्हारी अनुमति लेनी होगी ?

जीमूतवाहन—छोड़ने का तो मैं भी नहीं। (क्योंकि,)—

वह हाथ, जिसने तेरे मुक्ताहार के योग्य गले में फाँसी लगाई है, अपराध करता हुआ पकड़ा जाने पर छूट क्योंकर सकता है? (१२)

विदूषक—परन्तु बहिन, आखिर इसकी आत्म-हत्या का कारण क्या है ?

Jimutavahana—(*Seeing, with joy*) Oh, it is she, the girl of my dreams ! (*Seizing* MALAYAVATI *by the hand and snatching away the noose*)—

Don't, don't thou do such a rash deed, my sweet girl ! Take away thy delicate hand from the creeper—the hand, which I think could ill bear the strain of plucking even a flower, how can it have the strength for fastening a halter ? (11)

Malayavati—(*Timidly*) Woe me, who could be this man ? (*Seeing* JIMUTAVAHANA, *tries to release her hand in resentment*) Let go my hand, man, let go. Who are you to prevent me ? Even for dying shall I have to get your permission first ?

Jimutavohana—No, I will not let go (For,)—

How can I let go the guilty hand which has been caught in the act of putting a noose round thy neck worthy of wearing a pearl necklace ? (12)

Jester—Madam, what could be the cause of her attempt at suicide ?

चेटी—(साकूतम्) णं एसो एव्व दे पिअवअस्सो ।

(साकूतम्) नन्वेष एव ते प्रियवयस्यः ।

जीमूतवाहनः—(सानुशयम्) कथमहमेवास्या मरणकारणम् ? न खल्ववगच्छामि ।

विदूषकः—भोदि, कहं विअ ?

भवति, कथमिव ?

चेटी—जा सा पिअवअस्सेण दे का वि हिअअवल्लहा आलिहिदा, ताए पक्खवादिणा एदेण पडिवादअंतस्स वि मित्तावसुणो णाहं पडिच्छिदेत्ति सुणिअ जादणिव्वेदाए इमाए एव्वं ववसिदं ।

या सा प्रियवयस्येन ते कापि हृदयवल्लभा आलिखिता, तस्यां पक्षपातिनैतेन प्रतिपादयतोऽपि मित्रावसोर्नाहं प्रतीष्टेति श्रुत्वा जातनिर्वेदयाऽनयैवं व्यवसितम् ।

जीमूतवाहनः—(सहर्षमात्मगतम्) कथम् ! इयमेवासौ विश्वावसोर् दुहिता मलयवती? अथवा, रत्नाकरादृते कुतश्चन्द्रलेखाप्रसूतिः? कष्टं ! मनाग्वञ्चितोऽस्मि ।

विदूषकः—भोदि, जइ एव्वं, अणवरद्धो दाणिं पिअवअस्सो । अहव, जइ ण पत्तिआअदि, सअं एव्व गदुअ सिलादलं पेक्खदु भोदी ।

भवति, यद्येवम्, अनपराद्ध इदानीं प्रियवयस्यः । अथवा, यदि न प्रत्येति, स्वयमेव गत्वा शिलातलं प्रेक्षतां भवती ।

मलयवती—(सहर्षं सलज्जं च जीमूतवाहनं पश्यन्ती हस्तमाक्षेप्तुमिच्छति) मुञ्च, मुञ्च मे अग्गहत्थं ।

(सहर्षं सलज्जं च जीमूतवाहनं पश्यन्ती हस्तामाक्षेप्तुमिच्छति) मुञ्च, मुञ्च मेऽग्रहस्तम् ।

जीमूतवाहनः—(सस्मितम्) न तावन्मुञ्चामि यावन्मया हृदयवल्लभां शिलायामालिखितां न पश्यसि ।

(सर्वे परिक्रामन्ति)

विदूषकः—(कदलीपत्रमपनीय) एसा से हिअअवल्लहा !

(कदलीपत्रमपनीय) एषाऽस्य हृदयवल्लभा !

Maid—(*Significantly*) Why, who else but this, your friend here ?

Jimutavahana—(*Regretfully*) How have I been the cause of her attempt to kill herself ? I don't understand.

Jester—Lady, tell me how is that ?

चेटी—(साभिप्राय-भाव से) क्यों—यही तो, यह आपका प्यारा मित्र।

जीमूतवाहन—(अनुताप से) क्यों, मैं ही इसके मरणोद्योग का कारण कैसे ? मेरी तो समझ में नहीं आता।

विदूषक—हाँ बहिन, सो कैसे ?

चेटी—बात यह है कि आपके प्रिय मित्र ने अपनी जिस हृदयेश्वरी का चित्र खेंचा है उसके प्रति अनन्य प्रेम के कारण मित्रावसु के प्रस्ताव करने पर भी मुझे अस्वीकार कर दिया—इतना सुनते ही इसका जी बैठ गया और इसने यह अनर्थ कर डाला।

जीमूतवाहन—(हर्ष से, मन ही मन) अरे ! यही है वह विश्वावसु की पुत्री मलयवती ? अथवा, चन्द्रमा की कला का उद्गम समुद्र के अतिरिक्त और हो ही कहाँ से सकता है ? अहो ! मैं कुछ धोखे में रहा।

विदूषक—बहिन, यदि यही बात है, तब तो मेरे मित्र का इसमें कोई दोष नहीं। अथवा, यदि तुम्हें मेरी बात पर विश्वास न हो, तो स्वयं जाकर शिलातल को देख लो।

मलयवती—(हर्ष और लज्जा से जीमूतवाहन को निहारती हुई, हाथ छुड़ाना चाहती है) छोड़ दो, मेरा हाथ छोड़ दो।

जीमूतवाहन—(मुस्कराते हुए) मैं तब तक नहीं छोड़ने का जब तक तुम जाकर मणिशिला पर चित्रित मेरी हृदयेश्वरी को नहीं देख लेतीं।

(सभी उस ओर जाते हैं)

विदूषक—(कदलीपत्र को हटाकर) यह है इनकी प्राणेश्वरी !

Maid—It is like this. Hearing that she is not acceptable to your friend who rejected the proposal of Mitravasu in favour of the one, his sweet-heart, whose figure he has drawn here—she, consequently, losing all interest in life, did this.

Jimutavahana—(*Joyfully, aside*) What ! Is she then Malayavati, the daughter of Visvavasu ? Or, from where else could the crescent moon spring, if not from the ocean ? Ah me ! a slight misundertanding on my part led to all this.

Jester—Madam, if that be so, my friend stands exonerated. Should you still entertain a doubt, you may go and see the slab for yourself.

Malayavati—(*Looking at* JIMUTAVAHANA *with an expression of mingled joy and bashfulness, tries to wrest her hand from his grasp*) Leave my hand, I say, leave my hand.

Jimutavahana—(*Smiling*) I shall not leave it until you have seen my sweet-heart sketched on the slab.

[*All go thither*]

Jester—(*Removing the plantain leaf*) This is his sweet-heart !

मलयवती—(निरूप्य, अपवार्य, सस्मितम्) चउरिए, अहं विअ आलिहिदा !
(निरूप्य, अपवार्य, सस्मितम्) चतुरिके, अहमिवालिखिता !

चेटी—(चत्राकृतिं मलयवतीं च निर्वर्ण्य) भट्टिदारिए, किं भणासि अहं विअ आलिहिदत्ति ? ईरिसं से सारिक्खं, जेण ण आणीअदि किं दाव इह मणिसिलादले भट्टिदारिआए पडिबिम्बं संकन्दं, आदु तुवं आलिहिदत्ति।
(चित्राकृतिं मलयवतीं च निर्वर्ण्य) भर्तृदारिके, किं भणसि अहमिवालिखितेति ? ईदृशमस्य सादृश्यं, येन न ज्ञायते किं तावदिह मणिशिलातले भर्तृदारिकायाः प्रतिबिम्बं संक्रान्तम्, उत त्वमालिखितेति।

मलयवती—(विहस्य) दुज्जणीकिदह्मि इमिणा इदं चित्तं दंसअन्तेण।
(विहस्य) दुर्जनीकृताऽस्म्यमुनेदं चित्रं दर्शयता।

विदूषकः—भो ! णिव्वुत्तो दाणिं गांधव्वो विवाहो। मुञ्च दाणिं से अग्गहत्थं। एसा का वि तुरिअतुरिअं आअच्छदि।
भोः ! निर्वृत्त इदानीं गान्धर्वो विवाहः। मुञ्चेदानीमस्या अग्रहस्तम्। एषा कापि त्वरितत्वरितमागच्छति।

(जीमूतवाहनो मुञ्चति)
(प्रविश्य)

चेटी—(सहर्षं सहसोपसृत्य) भट्टिदारिए, दिट्ठिआ वड्ढसि ! पडिच्छिदा तुवं जीमूदवाहणस्स गुरूहिं।
(सहर्षं सहसोपसृत्य) भर्तृदारिके, दिष्ट्या वर्धसे ! प्रतीष्टा त्वं जीमूतवाहनस्य गुरुभिः।

विदूषकः—(नृत्यन्) संपुण्णो मणोरहो पिअवअस्सस्स। अहवा, अत्तहोदीए। अहव, ण एदाणं, (भोजनमभिनयन्) मम एव्व बह्मणस्स।
(नृत्यन्) संपूर्णो मनोरथः प्रियवयस्यस्य। अथवा, अत्रभवत्याः। अथवा, नैतयोः, (भोजनमभिनयन्) ममैव ब्राह्मणस्य।

चेटी—(मलयवतीमुद्दिश्य) आणत्तह्मि जुवराअमित्तावसुणा, जह—"अज्ज एव्व मलअवदीए विवाहो, ता लहु एदं गेह्णिअ आअच्छ" त्ति। ता एहि, गच्छह्म।
(मलयवतीमुद्दिश्य) आज्ञाप्ताऽस्मि युवराजमित्रावसुना, यथा—"अद्यैव मलयवत्या विवाहः, तल्लघ्वेनां गृहीत्वाऽऽगच्छ" इति। तदेहि, गच्छावः।

Malayavati—(*Observing, aside, smiling*) Chaturika, it looks as if I have been painted here !

Maid—(*Looking alternately at the picture and then at* Malayavati) Madam, do you say "as if I have been

मलयवती—(ध्यान से देखती हुई, एक ओर होकर, मुस्कराती हुई) अरी चतुरिका, जानो मेरा ही चित्र खिंचा हुआ है !

चेटी—(चित्र और मलयवनी दोनों की तुलना करती हुई) बीबी जी, आपने क्या कहा "जानो मेरा ही चित्र है" ? दोनों में इतनी समानता है कि जान नहीं पड़ता मणिशिला पर वस्तुतः आपका प्रतिबिम्ब पड़ रहा है अथवा आपका चित्र खिंचा हुआ है ।

मलयवती—(हँसकर) यह चित्र दिखाकर इन्होंने मुझे ही दोषी बना दिया ।

विदूषक—भाई, अब तुम्हारा गन्धर्व-विवाह हो चुका । अब तो छोड़ो इसका हाथ । यह कोई इधर को ही बड़ी शीघ्रता से चली आ रही है ।

(जीमूतवाहन हाथ छोड़ देता है)

(प्रवेश)

(दूसरी) चेटी—(हर्ष से, झट से पास आकर) बीबी जी, बधाई हो । जीमूतवाहन के गुरुजनों ने आपको (वधू बनाना) स्वीकार कर लिया है ।

विदूषक—(नाचते हुए) मनोरथ पूर्ण हो गया, मेरे प्यारे मित्र का । अथवा, देवी मलयवती का । अथवा, इन दोनों का ही नहीं, (भोजन का अभिनय करते हुए) केवलमात्र मुझ ब्राह्मण का ।

चेटी—(मलयवती को लक्ष्य करके) युवराज मित्रावसु ने मुझे आज्ञा दी है कि, "आज ही मलयमती का विवाहोत्सव है, इसलिये जाकर उसे तुरन्त लिवा ला ।" तो आओ, चलें ।

---

painted ?" The likeness is so striking as one could hardly tell if it was Princess' own reflection in the moon-stone or her picture !

Malayavati—(*With a laugh*) By showing the picture he has made me look guilty.

Jester—Friend, the seal has now been put on your love-marriage. Leave her hand, for some other girl is coming hither in hot haste.

[JIMUTAVAHANA *lets it go*]

[*Enter the other* MAID]

Maid—(*Approaching hurriedly, in the excitement of joy*) Princess, congratulations ! You have been accepted by the parents of Jimutavahana (as their daughter-in-law).

Jester—(*Dancing*) So it is fulfilled—the wish of my dear friend. No, that of her ladyship. Or no, not of either, but (*Acting as if eating*) of me alone, a Brahmana.

Maid—(*Addressing* MALAYAVATI) Prince Mitravasu has ordered me saying, "As the marriage ceremony of Malayavati shall be performed today, go and bring her here quickly." Come, let us go now.

विदूषकः—गदा तुवं दासीए धीदे, एदं गह्लिअ ! पिअवअस्सेण उण इह एव्व अच्चिदव्वं ?

गता त्वं दास्याःपुत्रि, एतां गृहीत्वा ! प्रियवयस्येन पुनरत्रै-वासितव्यम् ?

चेटी—हदास, मा तुवर । तुह्माणं पि ह्लावणअं आअदं एव्व ।

हताश, मा त्वरस्व । युष्माकमपि स्नापनकमागतमेव ।

(मलयवती सानुरागं सलज्जं जीमूतवाहनं पश्यन्ती सपरिवारा निष्क्रान्ता)

(नेपथ्ये वैतालकः पठति)

वृष्ट्या पिष्टातकस्य द्युतिम् इह मलये मेरु-तुल्यां दधानः
सद्यः-सिन्दूर-दूरीकृत-दिवस-समारम्भ-सन्ध्यातप-श्रीः ।
उद्गीतैर् अङ्गनानां चलचरणरणन्नुपुरह्लादहृद्यैर्
उद्वाह-स्नान-वेलां कथयति भवतः सिद्धये सिद्ध-लोकः ॥१३॥

विदूषकः—(आकर्ण्य) भो वअस्स, आअदं ह्लावणअं ।

(आकर्ण्य) भो वयस्स, आगतं स्नापनकम् ।

जीमूतवाहनः—(सहर्षम्) सखे, यद्येवं, किमिदानीमिह स्थीयते ? तदागच्छ । तातं नमस्कृत्य स्नानभूमिमेव गच्छावः ।

अन्योन्य-दर्शनकृतः समान-रूपानुराग-कुल-वयसाम् ।
केषांचिद् एव मन्ये समागमो भवति पुण्यवताम् ॥१४॥

(निष्क्रान्तौ)

इति द्वितीयो ऽङ्कः

Jester—You are going away taking her along with you, hussy! And my friend shall have to remain here—alone ?

Maid—Don't be impatient, felleh. You will just have everything ready for your bath.

[*Exit* Malayavati *with retinue, looking at* Jimutavahana *fondly and bashfully*]

[*Behind scenes a bard recites*]

Lending to Malaya hill the golden sheen of Meru with showers of yellow sandal powder, and putting to shame the purple glow of the rising as well as the setting sun with the freshly strewn vermilion, this colony of the Siddhas is proclaiming for your welfare the time of your nuptial ablutions by means of the songs of

विदूषक—अरी चुड़ैल, तू तो इसे साथ लेकर ही चल दी ! मेरा मित्र अब यहाँ बैठा-बैठा बगलें झाँकेगा क्या ?

चेटी—हताश, उतावला न हो । लो, तुम्हारे लिये भी नहाने-धोने का सामान आ गया है ।

(मलयवती का अनुराग तथा लज्जाभाव से जीभूतवाहन को देखते हुए सपरिवार निष्क्रमण)

(नेपथ्य में भाट गाता है)

पिष्ट चन्दन धूलि (पीले गुलाल) की वर्षा से मलयाचल को सुमेरु-पर्वत की सुनहली छटा प्रदान करता हुआ, और तत्क्षण छिड़के सिन्दूर द्वारा प्रातःकालिक और सायंकालिक सन्ध्या की लालिमा को मात करता हुआ यह सिद्ध लोक, (नाचती हुई) नारियों के चञ्चल चरणों की पायलों की झंकार से मिश्रित हृदय-हारी गीतों से आपकी मनोरथ सिद्धि के लिये आपके विवाह-स्नान की मङ्गल-वेला की घोषणा कर रहा है । (१३)

(नेपथ्य में वैतालिक गाता है)

विदूषक—(सुनकर) लो भाई, आ गया स्नान का साधन-संभार ।

जीभूतवाहन—(हर्ष से) यही बात है, तो फिर यहाँ ठहरने से क्या लाभ ? चलो, पिता जी को प्रणाम करके स्नान-शाला की ओर ही चलें ।—

रूप, अनुराग, कुल तथा वयस में समान जिन प्रेमियों की आँखें चार हो जाती हैं, उनमें से, मेरा विचार है, बहुत थोड़े ही ऐसे भाग्यशाली निकलते हैं जिनका संबन्ध इस प्रकार फलीभूत हो जाता है । (१४)

(दोनों का निष्क्रमण)

द्वितीय अङ्क समाप्त

---

dancing women which are ravishing on account of being mingled with the chime of their anklets. (13)

Jester—(*Listening*) Here come the bathing requisites, my friend.

Jimutavahana—(*With joy*) If so, my friend, why tarry here? Come, let us go and after making obeisance to father, repair to the bath-room.—

Among lovers, matching each other in beauty, mutual attachment, family status and age, who fall in love at first sight, very few, I believe, are so lucky as to be united in wedlock. (14)

[*Exeunt both*]

END OF THE SECOND ACT

तृतीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति मत्त उज्ज्वलवेषश्चषकहस्तो विटश्चेटश्च)

विटः—

णिच्चं जो पिबइ सुरं जणस्स पिअसङ्गमं च जो कुणइ ।
मह दे दो अवि देवा बलदेवो कामदेवो अ ॥१॥

सफलं क्खु मम सेहरअस्स जीविअं !—

वच्छत्थलम्मि दइआ दिण्णुप्पलवासिआ मुहे मइरा ।
सीसम्मि अ सेहरओ णिच्चं विअ सण्ठिआ जस्स ॥२॥

(परिस्खलन्) अरे ! को मं चालेइ ? (सहासम्) अवस्सं णोमालिआ मं परिहसदि ।

नित्यं यः पिबति सुरां जनस्य प्रियसङ्गमं च यः करोति ।
मम तौ द्वावपि देवौ बलदेवः कामदेवश्च ॥१॥

सफलं खलु मम शेखरकस्य जीवितम् !—

वक्षःस्थले दयिता दत्तोत्पलवासिता मुखे मदिरा ।
शीर्षे च शेखरको नित्यमिव संस्थिता यस्य ॥२॥

(परिस्खलन्) अरे ! को मां चालयति ? (सहासम्) अवश्यं नवमालिका मां परिहसति ।

चेटः—भट्टक, ण दाव आअदा णोमालिआ ।

भट्टक, न तावदागता नवमालिका ।

THIRD ACT

[*Enter* VITA, *tipsy but neatly dressed, with peg in hnad, and* SERVANT]

Vita—

The one who drinks day and night and the other who

तृतीय अङ्क

(उज्ज्वल वस्त्र पहने और हाथ में प्याला लिये मत्त विट, और चेट का प्रवेश)

विट—मेरे तो दो ही देवता हैं, एक बलदेव और दूसरा कामदेव—एक तो दिनरात सुरापान में लीन रहता है और दूसरा प्रेमियों का मेल करा देता है। (१)

मुझ शेखरक का जीवन सचमुच सफल है !—

जिसके कि आलिंगन में प्रेयसी, मुख में कमल की सुगन्धि से सुरभित मदिरा, और सिर पर मुकुट—ये तीनों ही सदा अपने-अपने स्थान पर विराजमान रहते हैं। (२)

(लड़खड़ाता हुआ) अरे ! कौन मुझे धकेल रहा है ? (ठहाका मारते हुए) हो न हो, यह नवमालिका ही मेरे साथ ठठोली कर रही है।

चेट—शाह जी, नवमालिका तो अभी आई ही नहीं।

---

unites people with their sweet-hearts—only these two, namely, Baladeva and Kamadeva respectively, are my gods. (*1*)

What a happy life is of me, Sekharaka !—

Of whom the three are close associates ever,—on his bosom, a mistress, in his mouth, a pull of lotus-scented liquor; and on his head, a wreath of flowers ! (*1*)

(*Staggering*) Who is pushing me, eh ? (*With a guffaw*) I am sure, it is Navamalika who is pulling my leg.

Servant—Master, Navamalika has not yet come.

विटः—(सरोषम्) पढमप्पदोस एव्व मलअवदीविवाहमङ्गलं णिव्वुत्तं। ता कीस दाणिं पभादे वि ण आअच्छदि ? (सहर्षम्) अहव, इमस्सिं मलअवदीए विवाहमङ्गलुस्सवे सव्वो एव्व णिअप्पणइणीजणसणाहो सिद्धविज्जाहरलोओ कुसुमाअरुज्जाणे आवाणसोक्खं अणुहोदि। ता तहिं एव्व णोमालिआ मं उदिक्खन्ती चिट्ठइ। ता तहिं एव्व गमिस्सं। कीदिसो णोमालिआए विणा सेहरओ ? (स्खलन् परिक्रामति)

(सरोषम्) प्रथमप्रदोष एव मलयवतीविवाहमङ्गलं निर्वृत्तम्। तत् कस्मादिदानीं प्रभाते ऽपि नागच्छति ? (सहर्षम्) अथवा, अमुष्मिन् मलयवत्या विवाहमङ्गलोत्सवे सर्व एव निजप्रणयिनीजनसनाथः सिद्धविद्याधरलोकः कुसुमाकरोद्यान आपानसौख्यमनुभवति। तत् तस्मिन्नेव नवमालिका मामुदीक्षमाणा तिष्ठति। तत् तत्रैव गमिष्यामि। कीदृशो नवमालिकया विना शेखरकः ? (स्खलन् परिक्रामति)

चेटः—एदं उज्जाणं। पविसदु भट्टओ।

एतदुद्यानं। प्रविशतु भट्टकः।

(उभौ प्रविशतः)

(ततः प्रविशति स्कन्धन्यस्तवस्त्रयुगलो विदूषकः)

विदूषकः—सुदं मए पिअवअस्सो कुसुमाअरुज्जाणं गमिस्सदि त्ति। ता जाव तहिं एव्व गमिस्सं। (परिक्रम्य) एदं उज्जाणं, जाव पविसामि। (प्रविश्य, भ्रमरसंपातं नाटयन्) कीस उण एदे दुट्ठमहुअरा मं एव्व अभिद्दवन्ति ? (आत्मानमाघ्राय) भोदु, जाणिदं मए! जं मलअवदीए बन्धुजणेण जामादुअस्स पिअवअस्सो त्ति सबहुमाणं वण्णएहिं विलित्तोह्मि। सन्ताणकुसुमसेहरं अ सीसे पिणद्धं। एसो अच्चादरो मे अणत्थीभूदो। किं दाणिं एत्थ करिस्सं ? अहव, एदेण एव मलअवदीए सआसादो लद्धेण रत्तंसुअजुअलेण इत्थिआ विअ लंबं-लंबं परिहिअ उत्तरीअकिदावगुण्ठणो गमिस्सं। पेक्खामि दाव दासीएपुत्ता दुट्ठमहुअरा किं करिस्सन्ति त्ति। (तथा करोति)

श्रुतं मया प्रियवयस्यः कुसुमाकरोद्यानं गमिष्यतीति। तद्यावत्तत्रैव गमिष्यामि। (परिक्रम्य) एतदुद्यानं, यावत्प्रविशामि। (प्रविश्य, भ्रमरसंपातं नाटयन्) कस्मात्पुनरेते दुष्टमधुकरा मामेवाभिद्रवन्ति ? (आत्मानमाघ्राय) भवतु, ज्ञातं मया। यन्मलयवत्या बन्धुजनेन जामातुः प्रियवयस्य इति सबहुमानं वर्णकैर्विलिप्तो ऽस्मि। सन्तानकुसुमशेखरश्च शीर्षे पिनद्धः। एषो ऽत्यादरो मे ऽनर्थीभूतः। किमिदानीमत्र करिष्यामि ? अथवा, एतेनैव मलयवत्याः सकाशाल्लब्धेन रक्तांशुकयुगलेन स्त्रीव लम्बं-लम्बं परिधाय उत्तरीयकृतावगुण्ठनो गमिष्यामि प्रेक्षे तावद्दास्याःपुत्रा दुष्टमधुकराः किं करिष्यन्तीति। (तथा करोति)

Vita—(*Angrily*) The marriage ceremony of Malayavati was over early in the first shades of the night. Now that the day has dawned why has she not come ? (*With a flash of joy*) Oh, I see, the whole populace of Siddhas and Vidhyadharas are enjoying themselves carousing in the Kusumakara garden, each with his sweetheart, on this auspicious occasion of Malayavati's

विट—(क्रोध से) मलयवती का विवाह-मंगल तो रात की पहली घड़ी में ही संप्पन्न हो गया था। अब सूर्योदय हो जाने पर भी वह क्यों नहीं आई ? (हर्ष से) अथवा, मलयवती के इस शुभ विवाहोत्सब पर सभी के सभी सिद्ध और विद्याधार लोग अपनी-अपनी संगिनियों के साथ कुसुमाकर उद्यान में मदिरापान का आनन्द लूट रहे होंगे। मेरा विचार है, नवमालिका भी वहीं मेरी प्रतीक्षा कर रही होगी। तो उधर ही चलूँ। नवमालिका के विना शेखरक कैसा (अर्थात् चम्देली के हार के बिना सिर की क्या शोभा) ? (लड़खड़ाता हुआ चलता है)

चेट—उद्यान आ गया, शाह जी। चलो, अन्दर चलें।

(दोनों प्रवेश करते हैं)

(कन्धे पर जोड़ा डाले विदूषक का प्रवेश)

विदूषक—मैंने सुना था मेरा प्रिय वयस्य कुसुमाकर उद्यान की ओर ही जाएगा। तो चलूँ, मैं भी उधर चलूँ। (जाता है) यह रहा उद्यान। अब इसके अन्दर जाता हूँ। (प्रवेश करके, भ्रमरों के आक्रमण का अभिनय करते हुए) क्या बात है, ये निगोड़े भौंरे मुझपर ही क्यों टूट पड़े हैं ? (अपने-आपको सूँघकर) हाँ, अब पता चला। मलयवती की सखी-सहेलियों ने जँवाई का प्रिय मित्र समझकर बड़े आदरभाव से मुझे सुगन्धित वर्णकों से पोत दिया है और सिर पर सन्तान-कुसुमों का सेहरा भी बाँध दिया है। यह अधिक संम्मान ही अब मेरे लिये आपत्ति बन गया है। अब करूँ तो क्या करूँ ? अच्छा, इसी लाल जोड़े को, जो मलयवती ने मुझे भेंट किया है, स्त्री की भांति चारों ओर लटकता हुआ लपेटकर और ऊपर से घूँघट निकाल कर चलता हूँ। तब देखूँ, ये साले भौंरे मेरा क्या बिगाड़ लेंगे। (वैसे करता है)

---

wedding. My Navamalika too, must be waiting there for me. So let me go there, for what is Sekharaka without Navamalika (a tree without a creeper, a head without a fresh wreath, a garland without jasmine, or a groom without the bride) ? (*Walks with unsteady gait*)

Servant—Here is the garden. Let my master enter.

[*Both enter*]

[*Enter* JESTER *with a pair of shawls placed on shoulder*]

Jester—I hear that my friend would be going to the Kusumakara garden. So let me also go there. (*Walking about*) Here is the garden. Let me go in. (*Entering, acting as if attacked by bees*) Why are these wicked bees rushing at me ? (*Smelling his body*) Oh, I see. As the dear friend of their son-in-law, I have been anointed with great respect by Malayavati's relations with coloured and scented unguents, and a wreath of Santanaka flowers has been placed on my head. Their excessive regard has turned into a curse for me at this moment. What shall I do now ? Or, let me wrap myself like a woman with this pair of shawls, which I have received as a gift from Malayavati, in such a manner so that it hangs lossely about me, and go with my face veiled with the upper part of it. Then I shall see what harm these whoresons, the accursed bees, can do to me. (*Does so*)

विटः—(निरूप्य, सहर्षम्) अरे चेडअ, (अङ्गुल्या निर्दिश्य, सहासम्) एसा क्खु णोमालिआ अहं चिरस्स आअदो त्ति कुविदा अवगुण्ठणं करिअ अण्णदो गच्छदि । ता कण्ठे गह्लिअ पसादेमि णं ।

(निरूप्य, सहर्षम्) अरे चेट, (अङ्गुल्या निर्दिश्य, सहासम्) एषा खलु नवमालिका अहं चिरस्यागत इति कुपिता ऽवगुण्ठनं कृत्वा ऽन्यतो गच्छति । तत् कण्ठे गृहीत्वा प्रसादयाम्येनाम् ।

(सहसोपसृत्य, कण्ठे गृहीत्वा, मुखेन ताम्बूलं दातुमिच्छति)

विदूषकः—(मद्यगन्धं सूचयन्, नासिकां गृहीत्वा, परावृत्तमुखः) अहं एक्काणं महुअराणं मुहादो कहं वि परिब्भट्टो अण्णस्स दुट्टमहुअरस्स मुहे पडिदो ह्मि ।

(मद्यगन्धं सूचयन्, नासिकां गृहीत्वा, परावृत्तमुखः) अहमेकेषां मधुकराणां मुखात् कथमपि परिभ्रष्टो ऽन्यस्य दुष्ट मधुकरस्य मुखे पतितो ऽस्मि ।

विटः—कहं कोवेण परम्मुहीभूदा ? (विदूषकस्य चरणावात्मनः शिरसि कुर्वन्) पसीद, णोमालिए, पसीद ।

कथं कोपेन पराङ्मुखीभूता ? (विदूषकस्य चरणावात्मनः शिरसि कुर्वन्) प्रसीद, नवमालिके, प्रसीद ।

(ततः प्रविशति चेटी)

चेटी—आणत्तह्मि भट्टिदारिआए मादाए—"हञ्जे णोमालिए, कुसुमाअरुज्जाणं गच्छिअ उज्जाणपालिअं पल्लविअं भणाहि—अज्ज सविसेसं तमालवीहिअं सज्जीकरेहि । मलअवदीसहिदेण जामादुएण एत्थ आअन्तव्वं" त्ति । आणत्ता अ मए पल्लविआ । जाव रअणीविरहुक्कण्ठिअं पिअवल्लहं सेहरअं अण्णेसामि । (दृष्ट्वा) एसो सेहरओ । (सरोषम्) कहं ? अण्णं कं पि इत्थिअं पसादेदि !

आज्ञप्ता ऽस्मि भर्तृदारिकाया मात्रा—"हञ्जे नवमालिके, कुसुमाकरोद्यानं गत्वोद्यानपालिकां पल्लविकां भण—अद्य सविशेषं तमालवीथिकां सज्जीकुरु । मलयवतीसहितेन जामात्रा ऽत्रागन्तव्यम्" इति । आज्ञाप्ता च मया पल्लविका । यावद् रजनीविरहोत्कण्ठितं प्रियवल्लभं शेखरकमन्विच्छामि । (दृष्ट्वा) एष शेखरकः । (सरोषम्) कथम् ? अन्यां कामपि स्त्रियं प्रसादयति !

Vita—(*Observing, with delight*) Look, boy, there goes Navamalika (*Pointing with the finger, and laughing*) just the other way, veiling her face in anger at my coming late. I shall, therefore, throw my arms around her neck and conciliate her.

विट—(देखकर) अरे छोकरे, मैं देर से पहुँचा हूँ इसीलिये वह देखो (उँगली से निर्देश करके, ठहाका मारकर) नवमालिका रोष से घूँघट निकालकर दूसरी ही ओर चली जा रही है। कोई बात नहीं, मैं गले से लगाकर इसे मनाता हूँ।

(सहसा पास जाकर, आलिङ्गन करके, अपने मुँह से पान देने लगता है)

विदूषक—(मदिरा की गन्ध सूचित करता हुआ, नाक बन्द करके, मुँह फेर-कर) उधर से जैसे-कैसे एक प्रकार के मधुपों के चुंगल से छुटकर इधर दूसरे मधुपान करने वाले (गुंडे) के हाथ आ फँसा हूँ!

विट—क्या बात है, क्रोध से मुँह ही फेर लिया? (विदूषक के चरणों को पकड़कर अपने सिर पर रखते हुए) क्षमा करो, नवमालिका, क्षमा करो।

(चेटी का प्रवेश)

चेटी—मुझे बीबी की माता जी ने कहा है—"नवमालिका, कुसुमाकर उद्यान में जाकर पल्लविका मालिन से कहो कि आज तमालों की अन्तर्वीथी को विशेष रूप से सजाए। मलयवती के साथ जँवाई ने आज उधर ही टहलने जाना है।" मैंने पल्लविका को आदेश पहुँचा दिया है। अब जाकर रातभर के विरह से विह्वल अपने प्रिय साजन शेखरक को ढूँढती हूँ। (देखकर) लो, शेखरक तो यह रहा। (क्रोध से) हैं? यह तो किसी दूसरी ही स्त्री को मना रहा है!

[*Suddenly approaching, throwing arms around the neck, tries to offer a betel-leaf with lips*]

Jester—(*Indicating smell of liquor, stopping his nose and turning away his face*) Having escaped with great difficulty from the clutches of one sort of stingers, I have fallen into the clutches of a yet worse stinker!

Vita—Why, my love, why—turning thy face away in anger? (*Supplicates by placing* JESTER's *feet on his head*) Forgive me, Navamalika, forgive me.

[*Enter* MAIDSERVANT]

Maid—I have been ordered by the mother of the Princess, saying, "Maid Navamalika, go to the Kusumakara garden and tell the keeper Pallavika to decorate the Tamala avenue exquisitely well to-day, for my son-in-law will go there with Malayavati." I have conveyed the orders to Pallavika. Now, I shall go and seek Sekharaka, my darling, who must be feeling disconsolate for having had to pass the night withont me. (*Seeing*) Here is Sekharaka. (*Angrily*) What? he is conciliating another lady-love!

विटः—

हरिहरपिदामहाणं पि गव्विदो जो ण जाणइ णमिदुं ।
सो सेहरओ चलणेसु तुज्झ णोमालिए ! पडइ ॥३॥

हरिहरपितामहानामपि गर्वितो यो न जानाति नन्तुम् ।
स शेखरकश्चरणयोस्तव नवमालिके ! पतति ॥३॥

विदूषकः—दासीएपुत्त, मत्तपालअ ! कुदो एत्थ णोमालिआ ?

दास्याःपुत्र, मत्तपालक ! कुतो ऽत्र नवमालिका ?

चेटी—(निरूप्य, सस्मितम्) कहं अहं ति करिअ मदपरवसेण सेहरएण अज्जो अत्तेओ पसादीअदि ? जाव अलीअकोवं करिअ दुवे वि एदे परिहसिस्सं ।

(निरूप्य, सस्मितम्) कथमहमिति कृत्वा मदपरवशेन शेखरकेण आर्य आत्रेयः प्रसाद्यते ? यावदलीककोपं कृत्वा द्वावप्येतौ परिहसिष्यामि ।

चेटः—(शेखरकं हस्तेन चालयन्) भट्टक, मुञ्च, मुञ्च एदं । ण होइ एसा णोमा लिआ । एसा क्खु णोमालिआ लोशलत्तेहिं णअणेहिं पेक्खन्ती आअदा ।

(शेखरकं हस्तेन चालयन्) भट्टक, मुञ्च, मुञ्चैनम् । न भवत्येषा नवमालिका । एषा खलु नवमालिका रोषरक्ताभ्यां नयनाभ्यां पश्यन्त्यागता ।

चेटी—(उपसृत्य) सेअरअ, का ण क्खु एसा पसादीअदि ?

(उपसृत्य) शेखरक, का नु खल्वेषा प्रसाद्यते !

विदूषकः—(अवगुण्ठनमपनीय) अहं मन्दभाआए पुत्तो !

(अवगुण्ठनमपनीय) अहं मन्दभाग्यायाः पुत्रः !

विटः—(विदूषकं निरूप्य) अरे कपिलमक्कडअ, तुवं पि मं सेहरअं परिहससि ! अरे चेडअ, गह्ल इमं, जाव णोमालिअं पसादेमि ।

(विदूषकं निरूप्य) अरे कपिलमर्कटक, त्वमपि मां शेखरकं परिहससि ! अरे चेट, गृहाणेमम्, यावन्नवमालिकां प्रसादयामि ।

चेटः—जं भट्टओ आणवेदि ।

यद्भट्टक आज्ञापयति ।

विटः—(विदूषकं विमुच्य, चेटचाः पादयोः पतन्) पसीद, णोमालिए, पसीद ।

(विदूषकं विमुच्य, चेटचाः पादयोः पतन्) प्रसीद, नवमालिके, प्रसीद ।

Vita—

That same Sekharaka who, out of pride, knows not to humble himself before even Brahma, Vishnu and Mahesa, is now falling at thy feet, my dear Navamalika! (3)

विट—

जो शेखरक इतना स्वाभिमानी है कि वह—क्या ब्रह्मा, क्या विष्णु और क्या महेश, किसीके भी आगे झुकना नहीं जानता—वही, हे नवमालिका, तेरे चरणों में अपना सिर दे रहा है ! (३)

विदूषक—भड़ुए पियक्कड़ ! यहाँ नवमालिका कहाँ ?

चेटी—(देखकर, मुस्कराती हुई) ओहो, यह तो मदिरा की झोंक में शेखरक जी भाई आत्रेय को नवमालिका समझकर उसकी आराधना कर रहे हैं। अस्तु, मैं भी झूठ-मूठ क्रोध (का अभिनय) करती हुई इन दोनों को ही बनाती हूँ।

चेट—(शेखरक को हाथ से झँझोड़कर) अजी शाह जी, छोड़ो इसे। यह नवमालिका नहीं है। नवमालिका तो क्रोध से आँखें लाल किये घूरती हुई यह आ रही है।

चेटी—(पास आकर) शेखरक, यह किसको मना रहे हो ?

विदूषक—(घूँघट उतारकर) मुझे,—अभागी माँ के बेटे को !

विट—(विदूषक को देखकर) वाह रे लाल बन्दर, तुझे भी मेरी—शेखरक की, हँसी उड़ाने का साहस ! अरे छोकरे, पकड़ ले इसे, इधर जब तक मैं नवमालिका को मनाता हूँ।

चेट—जो शाह जी की आज्ञा।

विट—(विदूषक को छोड़, चेटी के चरणों में गिरता हुआ) नवमालिका, मुझे क्षमा कर दो।

Jester—You whoreson, you dog of a drunkard! where is Navamalika here?

Maid—(*Observing, with a smile*) What a fun! here is Sekharaka. fuddled with drink, propitiating brother Atreya mistaking him for me. Now, I shall feign anger and make a fool of them both.

Servant—(*Shaking* SEKHARAKA *with his hand*) Master, leave him, leave him. This is not Navamalika. There comes she looking at you with eyes red with anger.

Maid—(*Approaching*) Sekharaka, who is this gal with whom you are spooning?

Jester—(*Putting off the veil*) It's me, the son of an unfortunate mother!

Vita—(*Seeing the* JESTER) O, you red monkey, you dare jest with me, Sekharaka! Boy, hold him fast till I have appeased Navamalika.

Servant—As my master commands.

Vita—(*Leaving off the* JESTER, *falling at* MAID'S *feet*) Forgive me, Navamalika, forgive me.

विदूषकः—एसो मे अपक्कमिदुं अवसरो। (पलायितुमीहते)

एष मे अपक्रमितुमवसरः। (पलायितुमीहते)

चेटः—(विदूषकं यज्ञोपवीते गृह्णाति। यज्ञोपवीतं त्रुट्यति) कहिं कहिं कपिलमक्कडअ, पलाअशि ?

(विदूषकं यज्ञोपवीते गृह्णाति। यज्ञोपवीतं त्रुट्यति) कुत्र कुत्र कपिलमर्कटक, पलायसे ?

(तदुत्तरीयेण गले बद्ध्वाकर्षति)

विदूषकः—होदि णोमालिए, पसीद। मोआवेहि मं।

भवति नवमालिके, प्रसीद। मोचय माम्।

चेटी—(विहस्य) जदि भूमिए सीसं णिवेसिअ पादेसु मे पडसि !

(विहस्य) यदि भूम्यां शीर्षं निवेश्य पादयोर्मे पतसि !

विदूषकः—(सरोषम्) कहं राअमित्तं भविअ दासीएधीदे, पादेसु दे पडिस्सं ?

(सरोषम्) कथं राजमित्रं भूत्वा दास्याःपुत्रि, पादयोस्ते पतिष्यामि ?

चेटी—(अङ्गुल्या तर्जयन्ती, सस्मितम्) दाणिं तुमं पाडइस्सं। सेहरअ, उट्ठेहि, उट्ठेहि। पसण्णा क्खु अहं। (कण्ठे गृह्णाति) एसो जामादुअस्स पिअवअस्सो तुए खलीकिदो। एदं सुणिअ कदाइ भट्टारओ मित्तावसू कुप्पे। ता आदरेण सम्माणेहि णं।

(अङ्गुल्या तर्जयन्ती, सस्मितम्) इदानीं त्वां पातयिष्यामि। शेखरक, उत्तिष्ठोत्तिष्ठ। प्रसन्ना खल्वहम्। (कण्ठे गृह्णाति) एष जामातुः प्रियवयस्यस्त्वया खलीकृतः। एतच्छ्रुत्वा कदाचिद्भट्टारको मित्रावसुः कुप्येत्। तदादरेण संमानयैनम्।

विटः—जं णोमालिआ आणवेदि। (विदूषकं कण्ठे गृहीत्वा) अज्ज, तुमं पिअसम्बन्धिअ त्ति करिअ अवहसिदो। (घूर्णयन्) किं सच्चं एव्व सेहरओ मत्तो ? किदो परिहासो। (उत्तरीयं वर्तुलीकृत्यासनं ददाति) इह उवविसदु संबन्धिओ।

यन्नवमालिकाज्ञापयति। (विदूषकं कण्ठे गृहीत्वा) आर्य, त्वं प्रियसंबन्धिक इति कृत्वा ऽपहसितः। (घूर्णयन्) किं सत्यमेव शेखरको मत्तः ? कृतः परिहासः। (उत्तरीयं वर्तुलीकृत्यासनं ददाति) इहोपविशतु संबन्धिकः।

Jester—It's time I should slip away. (*Tries to run away*)

Servant—(*Seizes the* Jester *by his sacred thread, the thread snaps*) Whitherto, my red monkey, whitherto art thou fleeing ? (*Tightening his scarf round his neck, drags him*)

Jester—Sister Navamalika, have mercy on me and get me released.

विदूषक—अब अवसर है मेरे भाग निकलने का। (भागने की करता है)

चेट—(विदूषक को यज्ञोपवीत से पकड़ लेता है। यज्ञोपवीत टूट जाता है) किधर भागने लगा है, रे लाल बन्दर ?

(उसी के दुपट्टे से उसका गला फाँसकर खेंचता है)

विदूषक—बहिन नवमालिका, तुम ही कृपा करो, मेरी जान छुड़ाओ।

चेटी—(हँसती हुई) हाँ, बस यदि तुम भूमि पर सिर रखकर मेरे चरणों पर गिरो तब !

विदूषक—(रोष से) हुँ, मैं राजा का प्रिय वयस्य होकर तुझ चुड़ैल के चरणों में माथा टेकूँ ?

चेटी—(अंगुली से धमकाती हुई, मुस्कराकर) अभी टिकवाकर छोड़ूँगी। उठ शेखरक, उठ। मैं तेरे से प्रसन्न हो गई। (गले लगाती है) तूने हमारे जँवाई के लँगोटिये का अपमान किया हैं। कहीं यह बात स्वामी मित्रावसु ने सुन ली तो वे तुझपर क्रुद्ध होंगे। अब अनुनय-विनय से, किसी प्रकार इन्हें मना लो।

विट—जो नवमालिका जी की आज्ञा। (विदूषक को गले से लगाते हुए) भाई, आप हमारे सम्बन्धी हैं, इसलिये ठठोली की थी। (मद से झूमता हुआ) अरे, क्या सचमुच शेखरक नशे में है ? अरे छोड़ो, हो लिया ठट्ठा। (दुपट्टे को लपेटकर उसका आसन बनाकर देता है) समधी जी, इस पर बैठिये।

Maid—(*Laughing*) Yes, I will, only if you place your head on the ground and fall at my feet !

Jester—(*Angrily*) I, a friend of the Prince, and should fall at the feet of a hussy like thee ?

Maid—(*Threatening with her finger and smiling*). Presently I shall make you fall. Sekharaka, come, get up. I am reconciled with you. (*Throws arms round his neck*) It is the dear friend of the Prince, our son-in-law's, you have maltreated. Should Mitravasu, our master, hear of it, and get angry, then ? You should therefore make up with him by paying proper respects to him.

Vita—As my Navamalika commands. (*Throwing arms round the neck of the* JESTER) Sir, I made fun of you because I knew that you belonged to our dear in-laws. (*Reeling*) Do you think that Sekharaka is really drunk ? No more jesting now. (*Makes a coil of his scarf and offers it as a seat*) Let our dear relative take his seat here.

विदूषकः—दिट्ठिआ अवअतो विअ से मदवेओ। (उपविशति)

दिष्टया ऽपगत इवास्य मदवेगः। (उपविशति)

विटः—णोमालिए, उपविस तुमं एदस्स पस्सदो, जेण दुवे वि तुह्मे समं सम्माणेमि।

नवमालिके, उपविश त्वमस्य पार्श्वतः, येन द्वावपि युवां समं संमानयामि।

(चेटी विहस्योपविशति)

विटः—चेडअ, सुपूरिदं क्खु एदं चसअं करेहि अच्छसुराए।

चेटक, सुपूरितं खल्वेतच्चषकं कुर्वच्छसुरया।

(चेटः चषकमुन्नयन् पूरणं नाट्येन करोति)

विटः—(स्वशिरःशेखरात् पुष्पाणि गृहीत्वा, चषके विन्यस्य, जानुभ्यां पतित्वा, नवमालिकाया उपनयन्) णोमालिए, पिबिअ चोक्खिअ देहि एदं एदस्स।

(स्वशिरःशेखरात् पुष्पाणि गृहीत्वा, चषके विन्यस्य, जानुभ्यां पतित्वा, नवमालिकाया उपनयन्) नवमालिके, पीत्वा चोक्षित्वा देह्येतदेतस्मै।

चेटी—(सस्मितम्) जं सेहरओ आणवेदि। (तथा करोति)

(सस्मितम्) यच्छेखरक आज्ञापयति। (तथा करोति)

विटः—(विदूषकस्य चषकमुपनयन्) एदं णोमालिआमुहसंसग्गवड्ढिअरसं सेहरआदो अण्णेण केण वि अणास्सादिअपुव्वं। ता पिब एदं। किं दे अदो वरं संमाणं करेमि?

(विदूषकस्य चषकमुपनयन्) एतन्नवकालिकामुखसंसर्गवर्धितरसं शेखरकादन्येन केनाप्यनास्वादितपूर्वम्। तत् पिबैतत्। किं ते ऽतः परं संमानं करोमि।

विदूषकः—(सविलक्षस्मितं कृत्वा) सेहरअ, बम्हणो क्खु अहं।

(सविलक्षस्मितं कृत्वा) शेखरक, ब्राह्मणः खल्वहम्।

विटः—जइ तुमं बम्हणो, कहिं दे बम्हसुत्तं?

यदि त्वं ब्राह्मणः, क्व ते ब्रह्मसूत्रम्?

विदूषकः—तं क्खु इमिणा चेडेण आअट्टिअमाणं छिण्णं।

तत् खल्वमुना चेटेनाकृष्यमाणं छिन्नम्।

Jester—Luckily, the effect of liquor on him has somewhat subsided. (*Takes his seat*)

Vita—Navamalika, you come and sit down beside him, so that I may propitiate you both together,

विदूषक—सौभाग्य से अब इसका मद उतर-सा गया है। (बैठ जाता है)

विट—नवमालिका, आ ना, तू भी इसके पास बैठ जा, जिससे मैं तुम दोनों को एकसाथ सत्कार-पूर्वक मना सकूँ।

(चेटी हँसती हुई बैठ जाती है)

विट—छोकरे, इस प्याले को बढ़िया मदिरा से भर लाओ।

(चेट प्याला ऊँचा करके उसे भरने का अभिनय करता है)

विट—(अपने सेहरे से फूल लेकर, प्याले में डालकर, घुटनों पर गिरकर, नवमालिका को प्रस्तुत करते हुए) लो, नवमालिका, इसे पीकर सुच्चा करके इसको दे दो।

चेटी—(मुस्कराती हुई) जो शेखरक जी की आज्ञा। (वैसे ही करती है)

विट—(विदूषक को प्याला उपस्थित करते हुए) लो पियो महाराज, नवमालिका के होठों से छुए इस प्याले में निराला ही रस है जिसे आज तक शेखरक के अतिरिक्त किसी और ने नहीं चखा। इससे बढ़कर मैं आपका और क्या संम्मान कर सकता हूँ?

विदूषक—(खिसियानी मुस्कराहट से) शेखरक, मैं तो ब्राह्मण हूँ।

विट—ब्राह्मण हैं, तो आपका ब्रह्म-सूत्र कहाँ है?

विदूषक—वह तो इस छोकरे ने खेंचकर तोड़ दिया।

[MAID *sits down with a laugh*]

Vita—Boy, fill this peg to the brim with crystal wine.

[SERVANT *raises the peg, acts as if filling it*]

Vita—(*Taking flowers from the wreath on his head, dropping them into the peg and kneeling down, offers it to* NAVAMALIKA) Navamalika, make it purer by tasting it (*i.e.* with the touch of your lips) and offer it to him.

Maid—(*Smiling*) Just as my Sekharaka says. (*Does so*)

Vita—(*Offering the peg to the* JESTER) Here is a drink, all the sweeter by virtue of its touch with Navamalika's lips, and which none else but Sekharaka has ever tasted before. Just have a sip of it. What greater honour than this could I do to you?

Jester—(*With an embarrassed smile*) Remember, Sekharaka, I am a Brahmin.

Vita—If you are a Brahmin, where is then your holy thread?

Jester—But that had snapped when the servant pulled at it.

चेटी—(विहस्य) जइ एव्वं, वेदक्खराणि पि कदिइ उदाहर ।

(विहस्य) यद्येवं, वेदाक्षराण्यपि कतिचिदुदाहर ।

विदूषकः—भोदि, सीहुगन्धेण मे वेदक्खराणि णट्ठाणि । अहव, किं मम भोदिए समं विवादेण ? एसो बम्हणो पादेसु दे पडइ । (पादयोः पतितुमिच्छति)

भवति, सीधुगन्धेन मम वेदाक्षराणि नष्टानि । अथवा, किं मम भवत्या समं विवादेन ? एष ब्राह्मणः पादयोस्ते पतति । (पादयोः पतितुमिच्छति)

चेटी—(विहस्य, हस्ताभ्यां निवार्य) अज्ज, मा मा एव्वं करेहि । सेहरअ, सच्चं बम्हणो क्खु एसो । (विदूषकस्य पादयोः पतति) अज्ज, तुए ण कुविदव्वं । सम्बन्धिआणुरूवो परिहासो किदो । सेहरअ, तुमं पि इमं पसादेहि ।

(विहस्य, हस्ताभ्यां निवार्य) आर्य, मा मैवं कुरु । शेखरक, सत्यं ब्राह्मणः खल्वेषः । (विदूषकस्य पादयोः पतति) आर्य, त्वया न कोपितव्यम् । संबन्धिकानुरूपः परिहासः कृतः । शेखरक, त्वमपीमं प्रसादय ।

विटः—अहं पि इमं पसादेमि । (विदूषकस्य पादयोर्निपत्य) मरिसेदु, मरिसेदु अज्जो, जं मए मदपरवसेण अवरद्धं, जेण अहं णोमालिआए सह आपाणअं गमिस्सं ।

अहमपीमं प्रसादयामि । (विदूषकस्य पादयोर्निपत्य) मर्षयतु, मर्षयत्वार्यः, यन्मया मदपरवशेनापराद्धं, येनाहं नवमालिकया सहापानकं गमिष्यामि ।

विदूषकः—मरिसिदं मए । गच्छ । जाव अहं पि वअस्सं पेक्खामि ।

मर्षितं मया । गच्छ । यावदहमपि वयस्यं प्रेक्षे ।

विटः—अज्ज, तह ।

आर्य, तथा । (निष्क्रान्तो नवमालिकया विटश्चेटश्च)

विदूषकः—अदिक्कन्दो क्खु बम्हणस्स अआलमिच्चू । ता अहं पि मत्तवालअजणसंसग्गदूसिदो इह दिग्घिआअं ह्लाइस्सं । (तथा करोति । पुरोऽवलोक्य) एसो क्खु पिअवअस्सो रूविणीं विअ वरलच्छि मलअवदिं ओलम्बिअ इदो एव्व आअच्छदि । ता इह एव्व चिट्ठिस्सं । (स्थितः)

अतिक्रान्तः खलु ब्राह्मणस्याकालमृत्युः । तदहमपि मत्तबालकजनसंसर्गदूषित इह दीर्घिकायां स्नास्यामि ।(तथा करोति । पुरोऽवलोक्य) एष खलु प्रियवयस्यो रूपिणीमिव वरलक्ष्मीं मलयवतीमवलम्ब्येत एवागच्छति । तदिहैव स्थास्यामि । (स्थितः)

(ततः प्रविशति जीमूतवाहनो मलयवत्या, विभवतश्च परिवारः)

Maid—(*Laughing*) If so, then please repeat at least some Vedic words.

Jester—Madam, even my Vedic words have been spirited away by the smell of the spirit. Or, what is the good of wrangling with you ? Here, this Brahmin falls at your feet. (*Is about to fall at her feet*)

चेटी—(हँसकर) अच्छा, ऐसी बात है तो फिर कुछ वेद-वाक्य ही उच्चारण कर दीजिये।

विदूषक—देवि, मेरे वेद-वाक्य तो इस मदिरा की गन्ध से ही उड़ गए। अथवा, आपसे वितण्डा करने से क्या लाभ? लीजिये यह ब्राह्मण आपके पैरों पड़ता है। (चरणों में गिरने लगता है)

चेटी—(हँसकर, हाथों से रोकती हुई) महाराज, आप ऐसा मत करें। शेखरक, ये सचमुच ब्राह्मण हैं। (विदूषक के चरणों पर गिरती है) भाई, रुष्ट न होना। समधियों के अनुरूप ही परिहास किया है। आओ शेखरक, तुम भी इनसे क्षमा माँगो।

विट—हाँ, मैं भी इनसे क्षमा माँगता हूँ (विदूषक के चरणों पर गिरकर) महाराज, मदिरा के आवेग में मुझसे जो कुछ भूल-चूक हो गई हो, उसे आप क्षमा कर दें तो मैं नवमालिका के साथ मदिरा-मण्डली को जाने वाला बनूँ।

विदूषक—मैंने क्षमाकर दिया। जाओ। तब तक मैं भी अपने मित्र को ढूँढूँ।

विट—अच्छा, महाराज, ठीक है।

(नवमालिका के साथ विट, और चेट का निष्क्रमण)

विदूषक—अकाल मृत्यु तो ब्राह्मण के सिर से टल गई। अब मैं भी इन शराबी छोकरों के संपर्क से अपवित्र होने से इस सरोवर में स्नान कर लूँ। (स्नान करता है, सामने देखकर) लो, मेरा प्रिय वयस्य भी साक्षात् सौन्दर्य की मूर्ति (नई दुलहन) मलयवती को साथ लेकर इधर ही चला आ रहा है। सो, मैं यहीं ठहरूँ। (वहीं ठहरता है)

(मलयवती के साथ जीमूतवाहन तथा पदानुसार परिजनों का प्रवेश)

Maid—(*Laughing and preventing with both hands*) No sir, don't, don't do this. Sekharaka, in sooth, he is a Brahmin. (*Falls at* JESTER's *feet*) You won't be cross, sir, I hope. For, the joke was quite natural as should have suited the relations-in-law. Sekharaka, you should also propitiate him.

Vita—Yes, I will. (*Falling at* JESTER's *feet*) Pray, sir, excuse me for my misbehaviour under the influence of liquor, so that I may be able to accompany Navamalika to the drinking party with an easy conscience.

Jester—You are forgiven. Now you can go, and I too shall look for my friend.

Vita—Thank you, sir.

[*Exeunt* VITA *with* NAVAMALIKA, *and the* SERVANT]

Jester—Thank God, the Brahmin has been spared an untimely death. Now, I shall take a bath in this lake and wash the taint of my contact with tipsy striplings. (*Does so. Looking in front*) Good me, here comes my friend in this very direction, holding the hand of Malayavati as if she were Grace of Nuptials incarnate. So, I had rather stay here. (*Remains where he is*)

[*Enter* JIMUTAVAHANA *with* MALAYAVATI *and, cortege in order of rank*]

जीमूतवाहनः—

दृष्टा दृष्टिमधो ददाति कुरुते नालापमाभाषिता
शय्यायां परिवृत्य तिष्ठति बलादालिङ्गिता वेपते।
निर्यान्तीषु सखीषु वासभवनान्निर्गन्तुमेवेहते
जाता वामतयैव मे ऽद्य सुतरां प्रीत्यै नवोढा प्रिया॥ ४॥

(मलयवतीमवलोक्य) प्रिये मलयवति!—

हुंकारं ददता मया प्रतिवचो यन्मौनमासेवितं
यद्दावानलदीप्तिभिस्तनुरियं चन्द्रातपैस्तापिता।
ध्यातं यच्च बहून्यनन्यमनसा नक्तंदिनानि प्रिये
तस्यैतत्तपसः फलं मुखमिदं पश्यामि यत्ते ऽधुना॥ ५॥

मलयवती—(अपवार्य) हञ्जे, ण केवलं दंसणीओ, पिअं पि भणिदुं जाणादि।

(अपवार्य) हञ्जे, न केवलं दर्शनीयः, प्रियमपि भणितुं जानाति।

चेटी—(विहस्य) अइ पडिपक्खवादिणि, सच्चं एव्व एदं। किं एत्थ पिअवअणं?

(विहस्य) अयि प्रतिपक्षवादिनि, सत्यमेवतत्। किमत्र प्रियवचनम्?

जीमूतवाहनः—चतुरिके, आदेशय कुसुमाकरोद्यानस्य मार्गम्।

चेटी—एदु एदु भट्टिदारओ।

एत्वेतु भर्तृदारकः।

जीमूतवाहनः—(परिक्रामन्, मलयवतीं निर्दिश्य) स्वैरं-स्वैरम् आगच्छतु भवती।—

Jimutavahana—

When I look at her, she bends her gaze down. When I address her, she only keeps silent. On the bed she sits with her face turned to the other side. When forcibly embraced she trembles. And when her friends leave our bed-room, she too wants to go with them. This new bride of mine has grown all the dearer to me these days by her very contrariness. (4)

(*Looking at* MALAYAVATI) Malayavati, darling!—

That I have been observing silence by replying to all questions with a mere 'hum', that I have been exposing my body to the

जीमूतवाहन—

देखो, तो आँखें नीचे कर लेती है। बुलाओ, तो कोई उत्तर नहीं देती। बिछौने पर मुँह फेर कर बैठ जाती है। बलात् आलिङ्गन करने पर काँपने लगती है। जब उसकी सखियाँ (उसे छोड़कर) सुहाग-गृह से बाहर निकलने लगती हैं तब स्वयं भी उनके साथ जाना चाहती है। किन्तु इस समय अपनी इन विपरीत चेष्टाओं से ही मेरी नई दुलहन मुझे और भी प्यारी लगती है। (४)

(मलयवती को ओर देखकर) प्यारी मलयवती !—

प्रत्येक बात के उत्तर में जो मैं आज तक केवल "हुँ" कहकर मौन रहता रहा, और दावाग्नि के समान असह्य चाँद की चाँदनी में अपनी देह को तपाता रहा और इतनी देर रात-दिन अनन्य-भाव से तेरे ध्यान में लीन रहा—यह सब उसी तपस्या का फल है कि, हे सुमुखि, आज मुझे तेरा यह मुखड़ा देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। (५)

मलयवती—(एक ओर) अरी, केवल देखने में ही सुन्दर हों—सो नहीं, ये तो मीठी-मीठी बातें कहना भी जानते हैं।

चेटी—(हँसकर) अरी, सदा उलटी बात (अर्थात् "ना-ना") करने वाली यह सब सच ही तो है। इसमें चाटु की कौन सी बात है ?

जीमूतवाहन—चतुरिका, हमें कुसुमाकर उद्यान की ओर ले चलो।

चेटी—आइये महाराज।

जीमूतवाहन—(जाते हुए, मलयवती की ओर निर्देश करके) आओ, बेखटके चली आओ, मलया।

---

torment of the moonlight blazing like forest-fire, and that many a day and night I have been passing in contemplation of none else but thee—It is the fruit of all this hard penance, my love, that I have been able to see this, thy face at last ! (5)

Malayavati—(*Aside*) My girl, not only is he handsome, but knows the use of unction too.

Maid—(*Laughing*) O, my captious lady, it is the simple truth. What unction is there in it ?

Jimutavahana—Chaturika, show us the way to Kusumakara garden.

Maid—Come, come, my lord.

Jimutavahana—(*Going, addressing* MALAYAVATI) Take care, my dear, come ye easy. For,—

खेदाय स्तनभार एव किमु ते मध्यस्य हारो ऽपरस्
ताम्यत्यूरुयुगं नितम्बभरतः काञ्च्या ऽनया किं पुनः ।
शक्तिः पादयुगस्य नोरुयुगलं वोढुं कुतो नूपुरे
स्वाङ्गैरेव विभूषितासि वहसि क्लेशाय किं मण्डनम् ॥ ६ ॥

चेटी—एदं कुसुमाअरुज्जाणं । पविसदु भट्टिदारओ ।
एतत् कुसुमाकरोद्यानम् । प्रविशतु भर्तृदारकः ।

(सर्वे प्रविशन्ति)

जीमूतवाहनः—(प्रविश्य) अहो, कुसुमाकरोद्यानस्य श्रीः ! इह हि,—

निष्यन्दश्चन्दनानां शिशिरयति लतामण्डपे कुट्टिमान्तान्
आराद्धारागृहाणां ध्वनिमनु कुरुते ताण्डवं नीलकण्ठः ।
यन्त्रोन्मुक्तश्च वेगाच्चलति विटपिनां पूरयन्नालवालान्
आपातोत्पीड-हेला-हृत-कुसुम-रजः-पिञ्जरो ऽयं जलौघः ॥७॥

अपि च,—

अमी गीतारम्भैर् मुखरितलतामण्डपभुवः
परागैः पुष्पाणां प्रकटपटवासव्यतिकराः ।
पिबन्तः पर्याप्तं सह सहचरीभिर्मधुरसं
समन्तादापानोत्सवमनुभवन्तीह मधुपाः ॥ ८ ॥

विदूषकः—(उपसृत्य) जेदु जेदु भवं । सोत्थि भोदीए ।
(उपसृत्य) जयतु जयतु भवान् । स्वस्ति भवत्यै ।

The weight of thy swelling breasts was enough for thy slender waist to bear, then why this superfluous necklace? Thy thighs are already sagging under thy massive hips, why need this girdle? Thy feet can hardly carry thy plump thighs, how could they these additional anklets? Thy limbs are themselves more than ornaments for thee, then why bear an extra burden of trinkets to irk thyself? (6)

Maid—We have arrived at the Kusumakara garden. Let my lord enter it.

[*All enter*]

Jimutavahana—(*Entering*) Oh, the loveliness of the Kusumakara garden! For here,—

तेरी पतली कमर को थकाने के लिये वक्षःस्थल का भार ही पर्याप्त था, उसपर यह हार और लादने की क्या आवश्यकता थी? जंघाएँ नितम्ब भार से ही झुकती जा रही हैं, उसपर यह तड़ागी क्यों? चरणों में तो जंघाओं के बोझ को भी सहन करने की शक्ति नहीं, तिसपर ये नूपुर? तेरे अङ्गों का सौन्दर्य ही तुझे आभूषित कर रहा है, तो फिर यह गहनों का वृथा-भार क्यों उठा रखा है? (६)

चेटी—लीजिये महाराज, उद्यान आ गया। चलिये, अन्दर चलिये।

(सभी अन्दर जाते हैं)

जीमूतवाहन—(प्रवेश करके) **कुसुमाकर उद्यान की शोभा भी क्या न्यारी है! देखो ना—**

चन्दन वृक्षों का टपकता हुआ रस लता-मण्डप की पक्की भूमि के छोरों को ठण्डा कर रहा है। ऊँचाई से गिरते हुए झरनों की (गंभीर) ध्वनि की ताल पर (उसे घन-गर्जन समझते हुए) मोर नाच रहा है। रहट से निकली हुई जल-धारा अपने प्रवाह के वेग से सुगमता के साथ बहाकर ले जाए हुए पुष्प-पराग से पीतवर्ण होती हुई और वृक्षों के थावलों को भरती हुई किस तेज़ी से बह रही है! (७)

अपि च—

अपनी गीतमय गुञ्जारों से सारे लता-मण्डप को गुञ्जायमान करते हुए, और पुष्प-धूलि से ही मानों अपने शरीर में सुगन्धित अङ्ग-राग लगाए अपनी सहचरियों (भ्रमरियों) के साथ चारों ओर जहाँ-तहाँ मधुपान का भरपूर रस लूटते हुए ये भँवरे यहाँ मानों मदिरा-पानोत्सव मना रहे हैं (जैसे मानों मदिरा पीने वाले अपनी प्रियतमाओं को संग लिये शरीर में पुष्पों की सुगन्धि लगाए, गीत गा-गाकर मदिरा पीने का आनन्द लूट रहे हों)। (८)

विदूषक—(पास जाकर) **जय हो, महाराज, की जय हो। देवी जी का कल्याण हो!**

The dripping sap of the sandal trees looks the fringes of the floor of the bower. Yonder, the peacock is seen dancing to the tune of the murmuring waterfalls, and the volume of water, released by the wheel and made yellowish by the pollen of flowers swept by the rush of its current, flows rapidly, filling on its way the basins of the trees. (7)

And here—

The bees, making the bowers resonant with their humming songs, wafting a blend of perfumes from the pollen of flowers, and drinking to their fill the honey-mead in company of their mates, seem to be enjoying a regular carouse all around. (8)

Jester—(*Approaching*) Hail, hail to your honour. My well-wishes to you, madam.

जीमूतवाहनः—वयस्य, चिरादागतो ऽसि !

विदूषकः—भो वअस्स, लहु एव्व आअदो। किन्दु इअन्तं कालं विवाहमङ्गलुस्सवमिलिदसिद्धविज्जाहरापाणदंसणकोदूहलेण परिब्भमन्तो ण लक्खिदो। ता पिअवअस्सो वि दाव एदं पेक्खदु।

भो वयस्य, लघ्वेवागतः। किन्तु इयन्तं कालं विवाहमङ्गलोत्सवमिलितसिद्धविद्याधरापानदर्शनकौतूहलेन परिभ्रमन् न लक्षितः। तत् प्रियवयस्यो ऽपि तावदेतत् प्रेक्षताम्।

जीमूतवाहनः—यथाह भवान्। (सहर्षं परितः पश्यन्) पश्य, पश्य !—

दिग्धाङ्गा हरिचन्दनेन दधतः सन्तानकानां स्रजो
माणिक्याभरणप्रभाव्यतिकरैश् चित्रीकृताच्छांशुकाः।
सार्धं सिद्धगणैर् मधूनि दयितापीतावशिष्टान्यमी
मिश्रीभूय पिबन्ति चन्दनतरुच्छायासु विद्याधराः ॥९॥

तदेहि, वयमपि तमालवीथिकां गच्छामः।

(सर्वे परिक्रामन्ति)

विदूषकः—एसा क्खु तमालवीहिआ। एदं चन्दणलदामण्डवं। एदं च सरदादवपरिखेदिअं विअ तत्तहोदीए वदणं लक्खीअदि। ता इह फडिअसिलादले उवविसदु।

एषा खलु तमालवीथिका। एतच्चन्दनलतामण्डपम्। एतच्च शरदातपपरिखेदितमिव तत्रभवत्या वदनं लक्ष्यते। तदिह स्फटिकशिलातले उपविशतु।

जीमूतवाहनः—वयस्य, सम्यगुपलक्षितम्।—

एतन्मुखं प्रियायाः शशिनं जित्वा कपोलयोः कान्त्या।
तापाभिताम्रम् अधुना कमलं ध्रुवम् ईहते जेतुम् ॥१०॥

(मलयवतीं हस्ते गृहीत्वा) प्रिये, इहोपविशामः।

(सर्वे उपविशन्ति)

Jimutavahana—You have been late in coming, my friend.

Jester—No, my friend, I came quite early. But you could not find me here because I was busy strolling round, out of curiosity, to see the drinking bouts of Siddhas and Vidyadharas assembled on the auspicious occasion of your wedding. My friend may also come and have a look at them.

Jimutavahana—As you like it. (*Looking all arouud, joyfully*) Look, Look !—

जीमूतवाहन—बड़े विलम्ब से पहुँचे हो, मित्र !

विदूषक—भाई, मैं तो शीघ्र ही आ गया था, किन्तु इतनी देर इस विवाह के शुभ उत्सव पर सिद्धों और विद्याधरों को मिलकर मदिरा पीते और रंग-रलियाँ मनाते देखने के कुतूहल से घूमता रहा, इसीलिये आपने मुझे नहीं देखा। आइये, आप भी चलकर मौज-मेला देखिये।

जीमूतवाहन—जैसे तुम्हारी इच्छा। (हर्ष से इधर-उधर देखते हुए) अरे!—

शरीर पर चन्दन का लेप किये, सन्तान-पुष्पों के हार पहने, मणिमय आभूषणों की झिलमिल से भड़कीले वस्त्र धारण किये हुए ये विद्याधर लोग सिद्ध-गणों के साथ मिलकर चन्दन-लता-कुञ्जों की छाया में अपन प्रेयसियों की मुँह-लगी मदिरा पी रहे हैं। (९)

चलो, हम भी तमाल-वीथी की ओर चलें।

(सब जाते हैं)

विदूषक—यह आ गई तमाल-वीथी और यह रहा चन्दन-लता-मण्डप। भाभी जी, शरद् ऋतु की धूप से तुम्हारा मुख कुछ कुम्हलाया सा दीखता है। इसलिये आप इस स्फटिक-शिला पर बैठ जाएँ।

जीमूतवाहन—मित्र, तूने ठीक पहचाना। सचमुच—

अपने कपोलों की (स्वाभाविक) कान्ति से चन्द्रमा को परास्त करके अब प्रेयसी का मुख धूप से लाल होकर कमल (की शोभा) को भी जीत लेना चाहता है। (१०)

(मलयवती का हाथ पकड़कर) आओ, प्रिये, यहाँ बैठें।

(सब बैठ जाते हैं)

The Vidyadharas, with their limbs anointed with sandal-paste, are wearing wreaths of Santanaka flowers and their spotless dresses are iridescent with the flashes of their jewelry. Mixing freely with the Siddhas they are drinking under the shade of sandal trees the wines first tasted by their beloveds. (9)

Come, let us also go to the Tamala avanue.

[*All go*]

Jester—Here is the Tamala avenue. There is the sandal-bower. But I see that the face of her ladyship is a little faded with the heat of the autumn sun. She may sit down (to rest) on this crystal bench.

Jimutavahana—Friend, you have observed rightly. For,—

The face of my darling, outshining the moon by the fairness of its cheeks, now glowing red with oppressive heat, I am sure, is out to put the red lotus to shame. (10)

(*Holding* MALAYAVATI *by the hand*) Let us sit here, my dear.

[*All sit down*]

जीमूतवाहनः—(मुखमुन्नमय्य, पश्यन्) प्रिये, वृथैव त्वमस्माभिः कुसुमाकरोद्यानदर्शनकुतूहलिभिः परिखेदिता। कुतः,—

एतत् ते भ्रूलतोल्लासि पाटलाधरपल्लवम्।
मुखं नन्दनमुद्यानमतो ऽन्यत् केवलं वनम् ॥११॥

चेटी—(सस्मितं, विदूषकं निर्दिश्य) सुदं तुए कहं वण्णिदेत्ति ?

(सस्मितं, विदूषिकं निर्दिश्य) श्रुतं त्वया कथं वर्णितेति ?

विदूषकः—(सस्मितम्) चउरिए, मा एव्वं गव्वं उव्वह। अह्माणं पि मज्झे दंसणीओ जणो अत्थि एव्व। केवलं मच्छरेण को वि ण वण्णेदि।

(सस्मितम्) चतुरिके, मैवं गर्वमुद्वह। अस्माकमपि मध्ये दर्शनीयो जनो ऽस्त्येव। केवलं मत्सरेण को ऽपि न वर्णयति।

चेटी—(सस्मितम्) अज्ज, अहं दे वण्णेमि।

(सस्मितम्) आर्य, अहं ते वर्णयामि।

विदूषकः—(सहर्षम्) जीविदह्मि। करेदु होदी पसादं, जेण एसो उण ण भणादि ईदिसो तादिसो मक्कडाआरत्ति।

(सहर्षम्) जीवितो ऽस्मि। करोतु भवती प्रसादं, येनैष पुनर्न भणति ईदृशस्तादृशो मर्कटाकार इति।

चेटी—अज्ज तुवं मए विवाहजागरेण णिज्जाअमाणो णिमीलिअच्छो सोहन्तो दिट्ठो। ता एवं एव्व चिट्ठ।

अद्य त्वं मया विवाहजागरेण निन्द्रायमाणो निमीलिताक्षः शोभमानो दृष्टः। तदेवमेव तिष्ठ।

(विदूषकस्तथा करोति)

चेटी—(आत्मगतम्) जाव णीलीसाराणुआरिणा तमालपल्लवरसेण मुहं से कालीकरिस्सं। (उत्थाय, पल्लवग्रहणं कृत्वा निष्पीडनं च नाटयति)

(आत्मगतम्) यावन्नीलीरसानुकारिणा तमालपल्लवरसेन मुखमस्य कालीकरिष्यामि। (उत्थाय, पल्लवग्रहणं कृत्वा निष्पीडनं च नाटयति)

Jimutavahana—(*Raising* MALAYAVATI's *face and looking at it*) Darling, in vain we have troubled thee with our curiosity to see the Kusumakara garden. For, I think—

Thy face, with eye-brows tremulous like the creepers and petal-red lips vying with the Patala flower, is a real garden, the very Nandana (Eden) on earth, while every garden other than this is a mere forest. (*11*)

जीमूतवाहन--(मलयवती की ठोड़ी ऊपर उठाकर, देखते हुए) प्रिये, व्यर्थ ही हमने कुसुमाकर उद्यान के दर्शन-कुतूहल द्वारा तुझे कष्ट पहुँचाया, क्योंकि—

भ्रुकुटी रूपी लताओं से सुशोभित, रक्त अधरों से पल्लवित यह तेरा (आनन्द देने वाला) मुखड़ा ही बस एकमात्र (स्वर्ग का) नन्दन उद्यान है, इसके अतिरिक्त और सब (उद्यान) तो निरे जंगल हैं। (११)

चेटी--(मुस्कराकर, विदूषक को लक्ष्य करके) सुना, (बीबी जी का) कैसा (मनोहर) वर्णन किया गया है ?

विदूषक--(मुस्कराते हुए) हाँ चतुरिका, तो इसमें तेरे गर्व करने की कौन सी बात है ? सुन्दर व्यक्ति तो हमारे में भी हैं, केवल डाह से कोई उनका वर्णन (प्रशंसा) नहीं करता।

चेटी--(मुस्करा कर) अजी, मैं तुम्हारा वर्णन (=प्रशंसा-रंगना) करती हूँ।

विदूषक--(फूला न समाता हुआ) मैं धन्य हूँ ! हाँ, इतनी कृपा तो करो ही--जिससे यह फिर कभी मुझे "ऐसा-वैसा बन्दर जैसा" न कह सके।

चेटी--अच्छा ! आज मैंने तुझे विवाहोत्सव के रतजगे के कारण ऊँघते देखा था--आँखें मुंदी हुई और ऐसा सुन्दर ! उसी प्रकार एक वार फिर बैठकर दिखाओ तो।

(विदूषक वैसे ही बैठ जाता है)

चेटी—(मन ही मन) अब अवसर है, घुले हुए नील के समान तमाल-पत्रों के रस से इसका मुँह काला करती हूँ। (उठकर पत्ते तोड़कर उन्हें निचोड़ने का अभिनय करती है)

Maid—(*Smiling, addressing the* Jester) Do you hear how she has been depicted ?

Jester—(*Smiling*) Don't ye feel elated on that account, Chaturika. Handsome persons are not wanting amongst us, too. But it is through envy that nobody comes forward to depict them so well.

Maid--(*Smiling*) Why, I shall put you in true colours, sir.

Jester—(*Joyfully*) You make me alive! Please, please, madam, do this favour to me, so that this man may not say again, "You are like this, you are like that, you have a monkey's face, and so on."

Maid—Sir, I saw you this morning with your eyes closed, drowsing after the wedding vigil—how beautiful you looked t en! May you again sit in that pose now.

[Jester *does so*]

Maid—(*Aside*) Now I shall blacken his face with the juice of Tamala leaves which resembles the blue indigo solution. (*Rising up, plucking leaves, acts as if crushing them*)

(जीमूतवाहनो मलयवती च विदूषकस्य मुखं पश्यतः)

जीमूतवाहनः—वयस्य, धन्यः खल्वसि, यदस्मासु तिष्ठत्सु त्वमेवं वर्ण्यसे।

(चेटी तमालपल्लवस्थ रसे विदूषकस्य मुखं नाट्येन कालीकरोति)

(मलयवती सस्मितं विदूषकं दृष्ट्वा जीमूतवाहनं पश्यति)

जीमूतवाहनः—

स्मितपुष्पोद्गमो ऽयं ते दृश्यते ऽधरपल्लवे।
फलं तु जातं मुग्धाक्षि पश्यतश् चक्षुषोर्मम॥१२॥

विदूषकः—भोदि, किं दे किदं ?

भवति, किं ते कृतम् ?

चेटी—णं वण्णिदो सि।

ननु वर्णितो ऽसि।

विदूषकः—(हस्तेन मुखं परामृज्य, हस्तं दृष्ट्वा, सरोषं दण्डकाष्ठमुद्यम्य, ससंरम्भम्) दासीए धीदे, राअउलं क्खु एदं। किं दे करिस्सं ? (जीमूतवाहनमुद्दिश्य) भो, तुह्माणं पुरदो एव्व अहं दासीए धीदाए खलीकिदो ह्मि। किं मम इह ट्ठिदेण ? अण्णदो गमिस्सं। (निष्क्रान्तः)

(हस्तेन मुखं परामृज्य, हस्तं दृष्ट्वा, सरोषं दण्डकाष्ठमुद्यम्य, ससंरम्भम्) दास्याःपुत्रि, राजकुलं खल्वेतत्। किं ते करिष्यामि ? (जीमूतवाहनमुद्दिश्य) भो, युष्माकं पुरत एवाहं दास्याःपुत्र्या खलीकृतो ऽस्मि। किं ममेह स्थितेन ? अन्यत्र गमिष्यामि। (निष्क्रान्तः)

चेटी—कुविदो क्खु मम अज्जो अत्तेओ। जाव गदुअ पसादेमि

कुपितः खलु मम आर्य आत्रेयः। यावद् गत्वा प्रसादयामि।

मलयवती—हञ्जे चउरिए, कहं मं एआइणिं उज्झिअ गच्छसि ?

हञ्जे चतुरिके, कथं मामेकाकिनीमुज्झित्वा गच्छसि ?

चेटी—(जीमूतवाहनमुद्दिश्य, सस्मितम्) एवं एव्व चिरं एआइणी होहि।

(जीमूतवाहनमुद्दिश्य, सस्मितम्) एवमेव चिरमेकाकिनी भव।

(निष्क्रान्ता)

[JIMUTAVAHANA *and* MALAYAVATI *meanwhile keep looking at* JESTER'S *face*]

Jimutavahana—You are a lucky dog, my friend that you are going to be depicted in true colours before our very eyes.

[MAID *acts as if blackening* JESTER'S *face with Tamala juice*]

[MALAYAVATI *smilingly looks at* JESTER, *and then at* JIMUTAVAHANA]

Jimutavahana—

The efflorescence of a smile, O my fair-eyed darling, is bursting on thy leaf-like lips there, while its fruit, as I look at it, has appeared on my eyes here. (12)

(जीमूतवाहन और मलयवती विदूषक के मुँह की ओर देखते हैं)

जीमूतवाहन—वाह मित्र, कैसा भाग्यवान् है तू, जो हमारे बैठे-बैठे तेरे सौन्दर्य में चार चाँद लगने लगे !

(चेटी तमालपत्रों के रस से विदूषक का मुख पोतती है)

(मलयवती मुस्कराती हुई, विदूषक को देखकर, जीमूतवाहन की ओर ताकती है)

जीमूतवाहन—

मुग्धाक्षि, मुस्कराहट के फूल तो तेरे अधर-किसलयों पर खिल उठे हैं, पर फल तुझे निहारती इन मेरी आँखों को मिल गया है ! (१२)

विदूषक—क्यों जी, तुमने यह क्या किया ?

चेटी—तुझे वर्णित (रञ्जित) ही तो किया है ।

विदूषक—(हाथ से मुँह पोंछकर, हाथ को देखकर, क्रोध से डण्डा उठाकर, हड़बड़ाता हुआ) चुड़ैल कहीं की, राजकुल में बैठे हैं ! पर तेरा करूँ क्या ? (जीमूतवाहन को लक्ष्य करके) देखा आपने, आपके संमुख इस चुड़ैल ने मुझे उल्लू बनाया है ! अब मेरा यहाँ ठहरने का क्या काम ? और कहीं जाता हूँ । (निकल जाता है)

चेटी—अरे, आत्रेय भैय्या तो मुझसे रूठ ही गए ! मैं जाकर उन्हें मना लाती हूँ ।

मलयवती—अरी चतुरिका, तू मुझे अकेली छोड़े जा रही है ?

चेटी—(जीमूतवाहन की ओर संकेत करके, मुस्कराती हुई) ऐसी अकेली तो तू सदा ही बनी रहे ! (चली जाती है)

Jester—Madam, what have you done ?

Maid—Only painted you in bright colours, sir.

Jester—(*Wiping face with hand, looking at hand, angrily taking up stick, in a rage*) O hussy, we are with the royal family here ! How shall I punish you ? (*Turning to* JIMUTAVAHANA) Look here, sir ! I have been made a fool of in your very presence by this misbegotten maid. What is the good of my staying here ? I had better go somewhere else.

Maid—Revered Atreya has indeed grown angry with me. So I shall go and pacify him.

Malayavati—Ha, Chaturika, my girl ! you go away leaving me alone ?

Maid—(*Pointing to* JIMUTAVAHANA, *smiling*) I wish you were alone like this for ever. (*Exit*)

जीमूतवाहनः—

दिनकर-करामृष्टं बिभ्रद् द्युतिं परिपाटलां
दशन - किरणैर् उत्सर्पद्भिः स्फुटीकृत - केसरम् ।
अयि, मुखम् इदं मुग्धे, सत्यं समं कमलेन ते
मधु मधुकरः किन्त्वेतस्मिन् पिबन् न विभाव्यते ॥१३॥

(मलयवती विहस्य मुखमुन्नमयति)

(जीमूतवाहनो दिनकरेति तदेव पठति)

(प्रविश्य)

चेटी—(सहसोपसृत्य) एसो क्खु सिद्धजुअराओ मित्तावसू केण वि कज्जन्तरेण कुमारं पेक्खिदुं आअदो ।

(सहसोपसृत्य) एष खलु सिद्धयुवराजो मित्रावसुः केनापि कार्यान्तरेण कुमारं प्रेक्षितुमागतः ।

जीमूतवाहनः—प्रिये, गच्छ त्वमात्मनो गृहम् । अहमपि मित्रावसुं दृष्ट्वा त्वरिततरमागत एव ।

(चेटीसहिता निष्क्रान्ता मलयवती । ततः प्रविशति मित्रावसुः)

मित्रावसुः—

अनिहत्य तं समर्थः कथमिव जीमूतवाहनस्याहम् ।
कथयिष्यामि तव हृतं राज्यं रिपुणेति निर्लज्जः ॥१४॥

तथाप्यनिवेद्यायुक्तरूपं गमनमिति निवेद्य गच्छामि । (उपसर्पति)

जीमूतवाहनः—मित्रावसो, इह आस्यताम् ।

(मित्रावसुरुपविशति)

जीमूतवाहनः—ससंरम्भ इव लक्ष्यसे ?

Jimutavahana—

This face of thine, my darling, grown red with the rays of the sun and displaying filaments of light radiating from the teeth, is truly like a lotus. But one misses the bee sucking the honey from it. (13)

[MALAYAVATI *laughs and raises up her face*]

[JIMUTAVAHANA *repeats the same stanza*—"This face of thine, etc."]

[*Enter*]

जीमूतवाहन—

मुग्धे, यह तेरा मुखड़ा तो सचमुच ही कमल के समान है। क्योंकि सूर्य की किरणों के स्पर्श से यह लालिमा को धारण किये हुए है, और इसमें से उठती हुई दाँतों की चमकीली किरणें स्पष्ट केसर के समान हैं। किन्तु इसपर मधुरस पान करता हुआ भौंरा दिखाई नहीं देता! (१३)

(मलयवती हँसती हुई मुँह को ऊपर उठाती है)

(जीमूतवाहन फिर वही दुहराता है—'मुग्धे, यह तेरा मुखड़ा...')

(चेटी का प्रवेश)

चेटी—(झटपट पास आकर) **महाराज, सिद्ध युवराज मित्रावसु किसी कार्यवश आपके दर्शन करने आए हैं।**

जीमूतवाहन—**प्रिये, तुम अपने घर चलो। मैं मित्रावसु से मिलकर शीघ्र ही आ रहा हूँ।**

मित्रावसु—

शक्ति-शाली होता हुआ भी मैं उस शत्रु को मारे बिना निर्लज्ज बनकर जीमूतवाहन से कैसे कह दूँ कि तेरा राज्य शत्रु ने छीन लिया है? (१४)

और बताए बिना चले जाना भी ठीक नहीं, इसलिये अब बताकर ही जाऊँगा। (पास जाता है)

जीमूतवाहत—**आओ, भाई मित्रावसु, आओ बैठो।**

(मित्रावसु बैठ जाता है)

जीमूतवाहन—**कुछ घबराए से लगते हो?**

Maid—(*Approaching suddenly*) Here is Mitravasu, the Siddha Prince, come to see the Prince on some business.

Jimutavahana—Darling, better go home. I shall be back just now after seeing Mitravasu.

[*Exit* MALAYAVATI *with* MAID. *Enter* MITRAVASU]

Mitravasu—

How dare I convey brazen-facedly the news to Jimutavahana that his kingdom has been annexed by the foe, without having first vanquished the latter with all the forces at my command. (*14*)

Nevertheless, it is not proper to go on the expedition withont informing him. So I shall first inform him and then go.

Jimutavahana—Come, Mitravasu, take your seat here.

[*Mitravasu sits down*]

Jimutavahana—You look some what agitated ?

मित्रावसुः—कः खलु मतङ्गहतके संरम्भः ?

जीमूतवाहनः—किं कृतं मतङ्गेन ?

मित्रावसुः—स्वनाशाय युष्मदीयं किल राज्यमाक्रान्तम् ।

जीमूतवाहनः—(सहर्षमात्मगतम्) अपि नाम सत्यमेतत् स्यात् !

मित्रावसुः—तदुच्छित्तये मामाज्ञापयतु कुमारः । किं बहुना,—

संसर्पद्भिः समन्तात् कृतसकलवियन्मार्गयानैर्विमानैः
कुर्वाणाः प्रावृषीव स्थगितरविरुचः श्यामतां वासरस्य ।
एते याताश्च सद्यस्तव वचनमितः प्राप्य युद्धाय सिद्धाः
सिद्धं चोद्वृत्तशत्रुक्षयभयविनमद्राजकं ते स्वराज्यम् ॥१५॥

अथवा, किं बलौघैः ?

एकाकिनाऽपि हि मया रभसावकृष्ट-
निस्त्रिंश - दीधिति - सटा - भर - भासुरेण ।
आरान्निपत्य हरिणेव मतङ्गजेन्द्रम्
आजौ मतङ्ग-हतकं हतमेव विद्धि ॥१६॥

जीमूतवाहनः—(कर्णौ पिधाय, आत्मगतम्) हहह, दारुणमभिहितम् ! अथवा, एवं तावत् । (प्रकाशं, सस्मितम्) मित्रावसो, कियदेतत् ? बहुतरमतोऽपि बाहुशालिनि त्वयि संभाव्यते । किन्तु,—

स्वशरीरमपि परार्थे यः खलु दद्यामयाचितः कृपया ।
राज्यस्य कृते स कथं प्राणिवधक्रौर्यमनुमन्ये ॥१७॥

Mitravasu—How can a wretch like Matanga be the cause of agitation ?

Jimutavahana—What has Matanga done ?

Mitravasu—Only invited his own ruin by invading your territory.

Jimutavahana—(*Joyfully, aside*) How I wish it were true !

Mitravasu—I am only awaiting orders from the Prince for putting him to route. What more shall I say but that,—

Sooner than they have got orders from you, the Siddha armies, covering the whole field of the sky with their air fleet rushing from all sides, and turning the daylight into a loury gloom as it were by screening the sun from view, shall set out for battle and clear your territory of the headstrong foe who has terrorized your vassal chiefs by his depradations. (15)

मित्रावसु—दुष्ट मतङ्ग से भला क्या घबराना ?

जीमूतवाहन—क्यों, मतङ्ग ने क्या किया है ?

मित्रावसु—केवल आपके राज्य पर आक्रमण करके अपनी मौत बुलाई है।

जीमूतवाहन—(सहर्ष, मन ही मन) क्या ही अच्छा हो यदि यह सच हो !

मित्रावसु—उसीके विनाश के लिये आप मुझे अनुमति-भर दे दें। बहुत क्या कहूँ—

आप की आज्ञा हुई नहीं कि बस, ये सिद्ध वीर विमानों में (बैठकर) सारे आकाश मार्ग में चारों ओर उड़ते हुए और सूर्य की किरणों को रोककर दिन को वर्षाकाल की भाँति अन्धकारमय बनाते हुए तत्क्षण युद्ध के लिये प्रयाण कर देंगे और तेरे राज्य को—जहाँ उद्धत शत्रु की मार-धाड़ और आतंक ने अन्यान्य रजवाड़ों को वशी-भूत किया हुआ है—पुनः हस्तगत कर लेंगे। (१५)

अथवा, सैन्य-समूह की भी क्या आवश्यकता है ?—

मैं अकेला ही पर्याप्त हूँ। आप समझ लें कि मतङ्ग मरा कि मरा, जब मैं युद्ध भूमि में अपनी चमचमाती तलवार को तेज़ी से निकालकर निकट से ही उसपर ऐसे टूट पड़ूँगा जैसे कोई कटार सी चमकती हुई सटाओं वाला सिंह किसी मत्त-मतङ्ग पर टूट पड़ता है। (१६)

जीमूतवाहन—(कान मूँदकर, मन ही मन) हाय, हाय, कैसी क्रूर बात कह दी इसने ! अस्तु, ऐसे कहता हूँ। (प्रकट, मुस्कराता हुआ) मित्रावसु, यह तो बात ही क्या है ! आपके बाहुबल से तो इससे कहीं अधिक शौर्य की बातें संभव हैं। किन्तु,—

मैं जो बिना माँगे ही दया से अपने शरीर को परोपकार के हित अर्पित करने के लिये सदा उद्यत रहता हूँ, भला कैसे एक राज्य के लिये प्राणि-वध के इस घोर कर्म की अनुमति दे दूँ ? (१७)

Or, why say large armies ?—

You may take the wretched Matanga as dead, for I alone will be the death of him, when drawing my bright sword I shall make a dash and fall upon him in the battle-field and engage with him in a close combat, like a lion, with his mane glistening like a flashing sword, springing upon a wild elephant. (16)

Jimutavahana—(*Stopping his ears, aside*) What a cruel idea ! Or, I shall say this. (*Aloud*) Mitravasu, it is but a trifle (for a man like you). Far bigger exploits could be expected of you who are so powerful. But,—

How can such a one as I, who am always ready to sacrifice my life out of compassion for the sake of others even without waiting for the asking, give my approval to a carnage for the sake of a kingdom ? (17)

अपि च, क्लेशान् विहाय शत्रुबुद्धिरेव मे नान्यत्र । यदि ते ऽस्मत्प्रियं कर्तुमीहा, तदनुकम्प्यतामसौ क्लेशदासीकृतस्तपस्वी ।

मित्रावसुः—(सामर्षं सहासं च) कथं नानुकम्प्यते? यादृशो ऽसावस्माकमुपकारी कृपणश्च !

जीमूतवाहनः—(आत्मगतम्) प्रत्यग्रकोपाक्षिप्तचेतास्तावदसौ न शक्यते निवर्तयितुम् । तदेवं तावत् । (प्रकाशम्) मित्रावसो, उत्तिष्ठ । अभ्यन्तरमेव प्रविशावः । तत्र च त्वां बोधयिष्यामि । संप्रति परिणतमहः । तथाहि,—

निद्रामुद्रावबन्धव्यतिकरम् अनिशं पद्मकोशादपास्यन्
आशा - पूरैक - कर्म - प्रवण - निज-कर-प्रीणिताशेष - विश्वः ।
दृष्टः सिद्धैः प्रसक्तस्तुतिमुखरमुखैरस्तमप्येष गच्छन्
एकः श्लाघ्यो विवस्वान् परहितकरणायैव यस्य प्रयासः ॥१८॥

(निष्क्रान्तौ)

तृतीयो ऽङ्कः

Besides, I harbour no animosity against anyone but carnal passions. But if you are really anxious to do a good turn to me, then you should rather pity that poor fellow who is a slave to his passions.

Mitravasu—(*With indignation and a sneer*) Why not pity him ? as if he has been our great benefactor and deserves our sympathy !

Jimutavahana—(*Aside*) It is difficult to check him at this moment when his mind is in a fresh transport of rage. Anyway, let me try like this. (*Aloud*) Get up, Mitravasu, let us go in. There I shall give you my advice, for the day has come to a close. See,—

और मैं तो विषय-वासनाओं के अतिरिक्त किसीको भी अपना शत्रु नहीं समझता। यदि सचमुच तुम मुझे प्रसन्न करना चाहते हो तो उस बेचारे विषयों के दास (मतङ्ग) पर अनुकम्पा करो।

मित्रावसु—(क्रोध से, व्यंग्यपूर्वक हँसते हुए) अनुकम्पा क्यों न करूँ ? उसीने जो हमारे ऊपर बड़ा उपकार किया है ? वह बेचारा !

जीमूतवाहन—(मन ही मन) अभिनव क्रोध से इसका मन क्षुब्ध है, इसलिये अभी इसे रोकना असम्भव है। अस्तु, ऐसे सही। (प्रकट) उठो मित्रावसु, अन्दर चलें, वहीं चलकर तुम्हें समझाऊँगा। अब तो दिन भी ढल चुका है। क्योंकि,—

केवल सूर्य (देवता) ही एक ऐसा परोपकारी है, जिसकी अस्त वेला में भी सिद्ध-जन टकटकी लगाए मुक्त कण्ठ से स्तुति करने में लीन हैं। कहाँ तक प्रशंसा की जाए—इसकी प्रत्येक चेष्टा-क्रिया दूसरों की भलाई के लिये होती है। दिनभर दिग्दिगन्तर को (प्रकाश से) पूरित करने के एक मात्र कर्तव्य में रत अपनी किरणों से, मानों आशा पूरी करने में निरन्तर लगे हुए अपने हाथों से, सारी सृष्टि को आह्लादित करता है और कमलों के मुँदे कोषों (=मुरझाए मुखड़ों) से संकोच-रूपी निद्रा को सदैव दूर करता है। (१८)

(दोनों का निष्क्रमण)

तृतीय अङ्क समाप्त

Ever engaged in removing the wilting look from the face of the closed lotuses, ever delightnig the whole world by flooding the quarters with his rays as if solely engaged in fulfilling men's desires, and ever looked at (with reverence) by the Siddhas with loud songs of praise—the sun, even while it is setting, is the one laudable exemplar of all whose efforts are directed towards the good of others. (*18*)

[*Exeunt both*]

END OF THE THIRD ACT

चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशति गृहीतवस्त्रयुगलः काञ्चुकीयः, प्रतीहारश्च)

काञ्चुकीयः—

अन्तःपुराणां विहितव्यवस्थः पदे पदेऽहं स्खलितानि रक्षन् ।
जरातुरः संप्रति दण्डनीत्या सर्वं नृपस्यानुकरोमि वृत्तम् ॥१॥

प्रतीहारः—आर्य, क्व नु खलु भवान् प्रस्थितः ?

काञ्चुकीयः—आदिष्टोऽस्मि देव्या मित्रावसोर्जनन्या, यथा—"कञ्चुकिन्, त्वया दशरात्रं यावन्मलयवत्या जामातुश्च रक्तवासांसि नेतव्यानीति"। कुत्र प्रथमं गच्छामि ? राजसुता च श्वशुरकुले वर्तते। जीमूतवाहनोऽपि युवराजेन मित्रावसुना सह समुद्रवेलां द्रष्टुमद्य गत इति मया श्रुतम्। तन्न जाने किं मलयवत्याः समीपं गच्छाम्युताहो जामातुरिति।

प्रतीहारः—आर्य, वरं राजपुत्र्याः समीपगमनम्। तत्र हि कदाचिदियत्या वेलया जामाता प्रत्यागतो भविष्यति।

काञ्चुकीयः—सुनन्द, साधूक्तम्। भवता पुनः क्व गम्यते ?

प्रतीहारः—अहमपि महाराजविश्वावसुना समादिष्टः, यथा—"सुनन्द, गच्छ, मित्रावसुं ब्रूहि—अस्मिन् दिवसे प्रतिपदुत्सवे मलयवत्या जामातुश्चैतदुत्सवानुरूपं किञ्चिदागत्य निरूपयेति"। तद् गच्छतु राजपुत्र्याः सकाशमार्यः। अहमपि मित्रावसोराह्वानाय गच्छामि।

(निष्क्रान्तौ)

विष्कम्भकः

FOURTH ACT

[*Enter* CHAMBERLAIN *carrying a pair of wedding-shawls, and* PORTER]

Chamberlain—

Maintaining the order of the harem, guarding against stumbling at every step by the guidance of a staff, I, who am now enfeebled by age, imitate the whole conduct of a king, who maintains the order of his towns within and guards them against slips continually by the administration of justice. (*1*)

Porter—Whither have you set out, sir ?

Chamberlain—I have been ordered by Queen, the mother of Mitravasu, saying, "Chamberlain, for ten days daily you should take red clothes to Malayavati and my son-in-law." Now, whither should I go first ? The Princess is in her father-in-law's house, while Jimutavahana, I hear, has today gone to see the tide on the sea-shore in company with the Crown Prince

चतुर्थ अङ्क

(विवाह का जोड़ा लिये कञ्चुकी, और प्रतीहार का प्रवेश)

कञ्चुकी—

इस बुढ़ापे में मेरा आचरण सर्वथा एक राजा का-सा है। राजा के हाथ में पुर के आभ्यन्तर शासन की व्यवस्था होती है तो मेरे हाथ में अन्तःपुर की। राजा यदि दण्ड-नीति द्वारा प्रजा की अपराध-वृत्ति को रोकता है तो मैं डण्डे के सहारे अपने-आपको ठोकरों से बचाता हूँ। (१)

प्रतीहार—किधर चल दिये, महाराज ?

कञ्चुकी—मित्रावसु की माता रानी जी ने मुझे आदेश दिया है कि—"कञ्चुकी, दस दिन लगातार तुम्हें मलयवती और जँवाई को लाल-जोड़े पहुँचाने होंगे।" पहले किधर जाऊँ ? राजकुमारी तो सुसराल में है और सुना है कि आज जीमूतवाहन भी युवराज मित्रावसु के साथ समुद्र में ज्वार देखने गए हैं। इसलिये समझ नहीं आता (पहले) मलयवती की ओर जाऊँ कि जँवाई की ओर ?

प्रतीहार—भाई, पहले राजकुमारी के पास जाना ही ठीक है। इतनी देर हो गई है, संभव है जँवाई भी वहीं लौट आए हों।

कञ्चुकी—सुनन्द, भाई तुमने ठीक कहा है। पर तुम स्वयं किधर जा रहे हो ?

प्रतीहार—मुझे भी तो महाराज विश्वावसु ने आज्ञा दी है—"सुनन्द, जाकर मित्रावसु से बोलो कि आकर इस प्रतिप्रदा (अमावस्या) के उत्सव पर मलयवती और जीमूतवाहन को क्या उपहार दिया जाए इसका निश्चय कर जाएँ।" अच्छा भाई, तुम तो जाओ राजकुमारी के पास और मैं चलता हूँ मित्रावसु को बुलाने।

(दोनों का निष्क्रमण)

विष्कम्भक समाप्त

Mitravasu. So I am at a loss to decide whether I should go to Malayavati or to the son-in-law.

Porter—Sir, you had better go to the Princess. Maybe, by this time the son-in-law has returned there.

Chamberlain—Sunanda, a good suggestion. But where have you to go?

Porter—I too have been commanded by His Majesty Visvavasu saying, "Sunanda, go and tell Mitravasu that he should come home and select something suitable to the occasion of the new-moon festival tonight for presenting to Malayavati and the son-in-law." Well then, you go to the Princess and I leave for calling Mitravasu home.

[*Exeunt both*]

END OF INTERLUDE

(ततः प्रविशति जीमूतवाहनो मित्रावसुश्च)

जीमूतवाहनः—

शय्या शाद्वलमासनं शुचिशिला सद्म द्रुमाणामधः
शीतं निर्झरवारि पानमशनं कन्दाः सहाया मृगाः ।
इत्यप्रार्थितलभ्यसर्वविभवे दोषो ऽयम् एको वने
दुष्प्रापार्थिनि यत्परार्थघटनावन्ध्यैर् वृथा स्थीयते ॥२॥

मित्रावसुः—(ऊर्ध्वमवलोक्य) कुमार, त्वर्यतां, त्वर्यताम् । समयो ऽयं चलितुमम्बुराशेः ।

जीमूतवाहनः—(आकर्ण्य) सम्यगुपलक्षितम् ।—

उद्गर्जज्-जल-कुञ्जरेन्द्र-रभसाऽऽस्फालाऽनुबद्धोद्धतः
सर्वाः पर्वतकन्दरोदरभुवः कुर्वन् प्रतिध्वानिनीः ।
उच्चैरुच्चरति ध्वनिः श्रुतिपथोन्माथी यथा ऽयं तथा
प्रायःप्रेङ्खदसंख्यशङ्खवलया वेलेयम् आगच्छति ॥३॥

मित्रावसुः—कुमार, नन्वागतैव । पश्य,—

कवलितलवङ्गपल्लवकरिमकरोद्गारसुरभिणा पयसा ।
एषा समुद्रवेला रत्नद्युतिरञ्जिता भाति ॥४॥

तदेह्यस्माज्जलप्रसरणमार्गादपक्रम्यानेनैव गिरिसानुसमीपमार्गेण परिक्रमावः ।

जीमूतवाहनः—मित्रावसो, पश्य ! शरत्समयपाण्डुभिः पयोदपटलैः प्रावृताः प्रालेयाचलशिखरश्रियमुद्वहन्त्यचलसानवः ।

[*Enter* JIMUTAVAHANA *and* MITRAVASU]

Jimutavahana—

Turf for a bedding, smooth slab for a bench, foot of the greenwood trees for a house, cool spring-water for a drink, roots and tubers for food, deer for companions,—all these amenities of life we get in the forest quite unsought for, yet there is one drawback that here, the place being beyond the reach of the beggar-folk, one has to pass a useless life, devoid of all opportunity of being helpful to others. (2)

Mitravasu—(*Looking upwards*) Prince, make haste, make haste. It is time for the tide to rush in.

Jimutavahana—(*Listening*) Yes, you have rightly observed the signs.—

Surely, the tide is coming tossing on its crest a shoal of count-

(जीमूतवाहन और मित्रावसु का प्रवेश)

जीमूतवाहन—

हरी-भरी घास का बिछौना है। शुभ्र शिलाओं के आसन। वृक्षों की छाया तले बसेरा। झरनों का ठण्डा जल पीने के लिये है तो खाने को कन्द-मूल-फल। हरिण (आदि पशु-पक्षी) हमारे साथी। यहाँ जंगल में तो बिना माँगे ही सब वैभव-संपत्ति उपस्थित है। कमी है तो केवल इतनी कि यहाँ याचकों की पहुँच नहीं, सो परोपकार के बिना यहाँ जीवन यों ही निष्फल बिताना पड़ता है। (२)

मित्रावसु—(ऊपर की ओर देखकर) **भाई, जल्दी करो, जल्दी करो। समुद्र में ज्वार आने वाली है।**

जीमूतवाहन—(सुनते हुए) **सचमुच, आपने ठीक पहचाना।—**

ज्वार तो आ ही पहुँची। वह देखो, असंख्य शङ्ख-शुक्तियाँ लहरों पर उछल-उछलकर गिर रही हैं। गरजते जल-कुञ्जरों की चिंघाड़ के साथ मिल जाने के कारण और भी अधिक भयावह समुद्र-ध्वनि पर्वतों की कन्दराओं-गुफाओं में प्रतिध्वनित हो रही है। गड़गड़ इतनी प्रचण्ड है कि कानों को फाड़े देती है। (३)

मित्रावसु—**अरे, यह तो आ ही गई! वह देखो,—**

जल-कुञ्जरों और मगरमच्छों द्वारा खाए हुए लौंग के पत्तों की डकारों से सुगन्धित जल को लिये यह समुद्र की उत्ताल तरंग मानो रत्नों की ज्योति से चमकती हुई शोभा दे रही है। (४)

इसलिये आओ, बाढ़ के मार्ग से हटकर हम इसी पहाड़ी की चोटी के पास वाले मार्ग पर टहलें।

जीमूतवाहन—**वह देखो, मित्रावसु, शरद् ऋतु के शुभ्र मेघ-दल से ढँकी हुई पर्वत की चोटियाँ मानों हिमालय-शिखरों की शोभा धारण किये हैं।**

---

less shells and conches, for we hear the rising noise that deafens the ears and make the vaults of all mountain caves and hills around echo with its terrible din which is aggravated by the loud roar of the squealing hippos. (3)

Mitravasu—Prince, it has already come up. For see,—

This tide of the sea, with its water rendered aromatic (*and golden*) *by the cud of sharks and hippos chewing the clove-leaves, looks as if sparkling with the lustre of gems.* (4)

Let us, therefore, get out of the range of the tide and walk on the path which runs along the hill-top.

Jimutavahana—Mitravasu, look, the summits of this mountain, heaped as they are with white masses of autumnal clouds, are wearing the splendour of the snow-clad peaks of Himalaya.

मित्रावसुः—कुमार, नैवामी मलयसानवः। नागानामस्थिसङ्घाताः खल्वेते।

जीमूतवाहनः—(सोद्वेगम्) कष्टं ! किन्निमित्तं पुनरमी सङ्घातमृत्यवो जाताः ?

मित्रावसुः—कुमार, नैवामी सङ्घातमृत्यवः।

जीमूतवाहनः—मित्रावसो, किमन्यत् ?

मित्रावसुः—श्रूयताम्। पुरा किल स्वपक्षपवनापास्तसागरजलस्तरसा रसातलादुद्धृत्य भुजङ्गमाननुदिनमाहारयति स्म वैनतेयः।

जीमूतवाहनः—(सोद्वेगम्) कष्टम् ! अतिदुष्करं करोति। ततस्ततः ?

मित्रावसुः—ततः सकलनागलोकविनाशशङ्किना नागराजेन गरुत्मानभिहितः...

जीमूतवाहनः—(सादरम्) "किं मां भक्षयेति ?"

मित्रावसुः—नहि नहि।

जीमूतवाहनः—किमन्यत् ?

मित्रावसुः—इदमुक्तं—त्वदभिसंपातत्रासात् सहस्रशः स्रवन्ति भुजङ्गाङ्गनानां गर्भाः, शिशवश्च पञ्चत्वमुपयान्ति। एवं च सन्ततिसमुच्छेदादस्माकं तवैव स्वार्थहानिर्भवेद्, यदर्थमभिपतति भवान् पातालम्। तदेकैकं भुजङ्गमानामनुदिवसं समुद्रतटस्थितस्याहमेव प्रेषयिष्यामीति। प्रतिपन्नं च तत् पक्षिराजेन।

इत्येकशः प्रतिदिनं विहितव्यवस्था
यान् भक्षयत्यहिपतीन् पतगाधिराजः।
यास्यन्ति यान्ति च गताश्च दिनैर्विवृद्धिं
तेषाममी तुहिनशैलरुचो ऽस्थिकूटाः ॥५॥

Mitravasu—They are not the summits of Malaya, Prince. They are the dumps of Naga skeletons.

Jimutavahana—(*In distress*) Woe me ! but what was the cause that led to the perpetration of such holocausts ?

Mitravasu—Prince, they were not wholesale massacres.

Jimutavahana—Then what else were they, Mitravasu ?

Mitravasu—Listen. Farmerly Garuda used to eat Nagas everyday as his food by splashing off the water of the ocean with the storm raised by the flapping of his wings and forcibly dragging them out from their home below the earth.

Jimutavahana—(*In distress*) Oh, how cruel ! What then ?

Mitsavasu—Then the Naga king fearing the total extinction of the Naga race approached Garuda with the request...

Jimutavahana—(*With a look of appreciation*) What—"Pray, eat me ?"

मित्रावसु—कुमार, यह मलयाचल के शिखर तो नहीं। ये तो नागों की हड्डियों के ढेर हैं।

जीमूतवाहन—(सहमकर) हा ! पर एक ही साथ इनकी सामूहिक मृत्यु कैसे हुई ?

मित्रावसु—नहीं कुमार, सामूहिक मृत्यु तो कोई नहीं हुई।

जीमूतवाहन—तो फिर और क्या हुआ ?

मित्रावसु—सुनिये। पहले कभी गरुड़ अपने पंखों की गति से समुद्र के जल को बलात् परे उछालकर पाताल से नागों को बाहर घसीटकर प्रतिदिन खा जाया करता था।

जीमूतवाहन—(उद्विग्न भाव से) अहो, कितनी क्रूरता करता था ! और फिर ?

मित्रावसु—इसपर सारे नाग-लोक के विनाश की आशंका से नागराज ने गरुड़ से निवेदन किया...

जीमूतवाहन—(सराहना पूर्वक) यही कि—"मुझे खा ले ?"

मित्रावसु—नहीं, नहीं,

जीमूतवाहन—नहीं ? तो और क्या ?

मित्रावसु—उसने कहा—"आपके भय से सहस्रों नाग-नारियों के गर्भ गिर जाते हैं। नाग-शिशु मर जाते हैं। इस प्रकार हमारे कुल-नाश से, जिस स्वार्थ-पूर्त्ति के लिये आप पाताल पर आक्रमण करते हैं, उसीकी क्षति होती है। इसलिये मैं स्वयं ही प्रतिदिन एक-एक नाग समुद्र-तट पर बैठे आपके पास (भोजनार्थ) भेज दिया करूँगा। और गरुड़ ने भी इस बात को मान लिया।—

इस प्रकार प्रबन्ध हो जाने पर गरुड़ प्रतिदिन एक-एक करके जिन नागों को खाता था, ये उन्हीं की हड्डियों के ढेर हैं जो हिम से ढँके पर्वतों के समान दिखाई देते हैं और जो (भूत, वर्तमान और भविष्यत् काल में) दिनों-दिन बढ़ते गए, बढ़ते जाते हैं और बढ़ते जाएँगे। (५)

Mitravasu—No, not that.

Jimutavahana—Then what else ?

Mitravasu—He said, "In dread of thy swoop thousands of Naga women miscarry and the new-born, they die. If it goes on like this, the total extinction of our race will only harm your own interest for which you come down upon the Nether world. Accordingly, I propose to send one Naga everyday to you for food, while you remain sitting on the beach." And Garuda, the king of birds, agreed to the proposal. (So,)—

They are the heaps of skeletons of those Nagas whom, according to this agreement, the king of birds (Garuda) eats for his food everyday, one by one. They have been and will be accumulating all the time—past, present, and future, and appear like the snowy peaks of Himalaya. (5)

जीमूतवाहनः—कष्टं ! रक्षिताः किलैवं नागराजेन पन्नगाः ?—

जिह्वासहस्रद्वितयस्य मध्ये नैकापि सा तस्य किमस्ति जिह्वा ।
एकाहिरक्षार्थमहिद्विषो ऽद्य दत्तो मयात्मेति यया ब्रवीति ॥६॥

आश्चर्यमाश्चर्यम् !—

सर्वाशुचिनिधानस्य कृतघ्नस्य विनाशिनः ।
शरीरकस्यापि कृते मूढाः पापानि कुर्वते ॥७॥

कष्टम् ! अनवसानेयं विपत्तिर्नागानाम् । (आत्मगतम्) अपि नाम शक्नुयामहं स्वशरीरदानादेकस्यापि फणभृतः परिरक्षां कर्तुम् !

(ततः प्रविशति प्रतीहारः)

प्रतीहारः—आरूढो ऽस्मि गिरिशिखरम् । (विलोक्य) अये, मित्रावसुर्जामातुः समीपे वर्तते । यावदुपसर्पामि । (उपसृप्य, प्रणम्य) विजयेतां कुमारौ ।

मित्रावसुः—सुनन्द, किन्निमित्तमिहागमनम् ?

प्रतीहारः—(कर्णे) एवम् ।

मित्रावसुः—कुमार, तातो मामाह्वयते ।

जीमूतवाहनः—गम्यताम् ।

मित्रावसुः—कुमारेणापि बहुप्रत्यवाये ऽस्मिन् प्रदेशे कुतूहलान्न चिरं स्थातव्यम् ।

(निष्क्रान्तो मित्रावसुः प्रतीहारश्च)

जीमूतवाहनः—यावदहमपि गिरिशिखरादवतीर्य समुद्रतटमवलोकयामि । (परिक्रामति)

(नेपथ्ये)

Jimutavahana—Alas ! this was the way how the Naga king saved the lives of the Nagas ?—

Among the two thousand tongues of Sesha-naga was there not one sporting enough with which he could say to the foe of the Nagas (i.e. Garuda), "For the sake of saving this one Naga to-day I offer myself instead" ? (6)

What a pity !—

The fools, we, commit sins on sins for the sake of this accursed body which is a repository of all that is filthy, and which is thankless and mortal ! (7)

Alas, what an unending calamity has befallen the Nagas ! (*To himself*) How I wish I could save the life of even one single Naga by offering my own body in lieu of his !

[*Enter* PORTER]

Porter—I have ascended the top of the hill. (*Looking around*) Ah, there stands Mitravasu, there, beside the son-in-

जीमूतवाहन—अहो ! तो इस प्रकार नागराज ने नागों की रक्षा की ?—

क्या शेषनाग की दो हज़ार फूटी जीभों में से एक भी ऐसी न निकली जिससे वह कह देता कि, 'मैं आज एक नाग की रक्षा के लिये नागारि (गरुड़) के सामने अपने-आपको समर्पित करता हूँ ?' (६)

कितना आश्चर्य है !—

सब गन्दगियों की घर, किये को भुला देने वाली, इसी निगोड़ी नश्वर देह के लिये भी मूर्ख लोग (इतने) पाप करते हैं ! (७)

हाय ! नागों की इस विपत्ति का तो कोई अन्त नहीं (दिखाई देता) । (मन ही मन) क्या ही अच्छा हो जो मैं अपने शरीर की भेंट देकर एक भी नाग की रक्षा कर सकूं ?

(प्रतीहार का प्रवेश)

प्रतीहार—मैं पहाड़ की चोटी पर चढ़ आया हूँ । (देखकर) अरे, मित्रावसु जँवाई के साथ ही हैं । तो पास जाता हूँ । (पास जाकर, प्रणाम करके) जय हो, राजकुमारों की ।

मित्रावसु—सुनन्द, यहाँ कैसे आए ?

प्रतीहार—(कान में) इसलिये ।

मित्रावसु—कुमार, पिता जी मुझे बुला रहे हैं ।

जीमूतवाहन—जाइये ।

मित्रावसु—यह स्थान नाना प्रकार के संकटों से भरा हुआ है, आपने कहीं कुतूहल वश यहाँ विलम्ब न कर देना ।

(मित्रावसु और प्रतीहार का निष्क्रमण)

जीमूतवाहन—तब तक मैं भी पहाड़ की चोटी से नीचे उतरकर समुद्रतट (की शोभा) को देखता हूँ । (चलता है)

(नेपथ्य में)

---

law. I shall go thither. (*Approaching, bowing respectfully*) Hail to the Princes !

Mitravasu—Sunanda, what brings you here ?

Porter—(*Whispering in the ear*) This is it.

Mitravasu—Prince, father has called me.

Jimutavahana—Yes, you must go.

Mitravasu—But I must warn the Prince not to stay here long through curiosity, for the place is full of dangers.

[*Exeunt* MITRAVASU *and* PORTER]

Jimutavahana—Meanwhile, I should also go down-hill and have a look at the beach. (*Walks about*)

[*Behind the scenes*]

हा, पुत्तअ शङ्खचूल ! कहं ! वावादिअमाणो किल अज्ज तुवं मए पेक्खिदव्वो ?
हा, पुत्रक शङ्खचूड ! कथं ! व्यापमद्यानः किलाद्य त्वं मया प्रेक्षितव्यः ?

जीमूतवाहनः—(आकर्ण्य) अये, योषित इवार्त्तप्रलापः । तद् यावदुपेत्य केयं, कुतो ऽस्या भयकारणमिति स्फुटीकरोमि । (परिक्रामति)

(ततः प्रविशति क्रन्दन्त्या वृद्धया ऽनुगम्यमानः शङ्खचूडो गोपायितवस्त्रयुगलः किङ्करश्च)

वृद्धा—(सास्रम्) हा, पुत्तअ सङ्खचूल! कहं! वावादिअमाणो किल अज्ज तुवं मए पेक्खिदव्वो ? (चिबुके गृहीत्वा) इमिणा मुखचन्देण विरहिदं अन्धआरीभविस्सदि पाआलं ।

(सास्रम्) हा, पुत्रक शङ्खचूड ! कथं ! व्यापाद्यमानः किलाद्य त्वं मया प्रेक्षितव्यः ? (चिबुके गृहीत्वा) अने॰ मुखचन्द्रेण विरहितमन्धकारीभविष्यति पातालम् ।

शङ्खचूडः—अम्ब, किमेवमतिविक्लवा सुतरामात्मानं पीडयसि ?

वृद्धा—(निर्वर्ण्य, पुत्रस्याङ्गान्यामृशन्ती) हा पुत्तअ ! कहं दे अदिट्ठसूरसुउमारं सरीरं णिग्घिणहिअओ गलुलो आहारइस्सदि ? (कण्ठे गृहीत्वा रोदिति)

(निर्वण्य, पुत्रस्याङ्गान्यामृशन्ती) हा पुत्रक ! कथं ते अदृष्टसूर्यसुकुमारं शरीरं निर्घृणहृदयो गरुड आहारयिष्यति ? (कण्ठे गृहीत्वा रोदिति)

शङ्खचूडः—अम्ब, अलमलं परिदेवितेन । पश्य,—

क्रोडीकरोति प्रथमं जातं नित्यमनित्यता ।
धात्रीव जननी पश्चात्तदा शोकस्य कः क्रमः ॥८॥

वृद्धाः—हा पुत्तअ ! चिट्ठ, मुहुत्तअं पि दाव वदनं दे पेक्खिस्सं ।
हा पुत्रक ! तिष्ठ, मुहूर्तमपि तावद्वदनं ते प्रेक्षिष्ये ।

किंकरः—एहि कुमाल, कि तव एताए भणन्तीए ? पुत्तशिणेहमोहिदा क्खु एशा ण लाअकज्जं जाणादि ।

एहि कुमार, किं तवैतया भणन्त्या ? पुत्रस्नेहमोहिता खल्वेषा न राजकार्यं जानाति ।

Ha, Sankhachuda, my son ! What ! shall I have to see thee being killed today befoɪe my very eyes ?

Jimutavahana—(*Listening*) Ah, it appears to be the wail of a woman in distress. So, I shall approach her and find out who she is and what is the cause of her fear. (*Goes*)

हाय, बेटा शङ्खचूड ! क्या आज मैं तुझे अपनी आँखों के सामने मारा जाता हुआ देखूँगी ?

जीमूतवाहन—(सुनते हुए) अरे, किसी स्त्री का-सा आर्त्त-नाद है। चलूँ, समीप जाकर पता करूँ, यह कौन है और इसपर क्या आ बनी है ? (जाता है)

(शङ्खचूड़, पीछे वस्त्र-युगल छिपाए एक नौकर, और उनके पीछे रोती हुई वुढ़िया का प्रवेश)

वृद्धा—हाय, बेटा शङ्खचूड़ ! क्या आज मैं तुझे अपनी आँखों के सामने मारा जाता हुआ देखूँगी ? (ठोड़ी पकड़कर) इस मुखचन्द्र के बिना तो (मेरे लिये) पाताल अन्धकार-मय हो जाएगा।

शङ्खचूड़—माँ, क्यों इतनी व्याकुल होकर अपने-आपको दुःखी करती हो ?

वृद्धा—(देखकर, पुत्र के अङ्ग-अङ्ग पर हाथ फेरती हुई) हाय बेटा, तेरी इस कोमल देह को, जिसपर कि सूर्य की झलक भी नहीं पड़ी, कठोर-हृदय गरुड़ खा कैसे सकेगा ? (गले लगाकर रोती है)

शङ्खचूड़—माँ, रोने-धोने से लाभ ? देखो ना—

जो भी जन्मता है उसे पहले ही नश्वरता (माँ बनकर) गोद में ले लेती है। असली माँ तो दाई की भाँति पीछे अङ्क में लेती है। तो इसमें शोक का क्या स्थान ? (८)

वृद्धा—हा बेटा, ठहर जा ! एक क्षणभर के लिये तेरा मुखड़ा तो देख लूँ।

सेवक—कुमार, चलो। यह तो बुड़बुड़ाती ही रहेगी, इससे तुझे क्या ? वात्सल्य से विमूढ़ बेचारी राज कार्य (की कठोरता) को नहीं समझती।

[*Enter* SANKHACHUDA *followed by an* OLD WOMAN *crying, and a* STATE PEON *tucking under arm a pair of red shawls*]

Old Woman—(*In tears*) Ha ! Sankhachuda, my son, what ! I have to see thee being killed today before my very eyes ? (*Holding his chin*) Robbed of this moon-like face the Nether world shall become dark (for me).

Sankhachuda—Mother, why do you afflict yourself so much with excessive grief ?

Old Woman—(*Gazing, touching the limbs of her son*) Ah, my son ! how cruel of heartless Garuda to make a meal of thy tender body which has never before seen the light of the sun. (*Throwing arms round his neck*)

Sankhachuda—Mother, control yourself and stop your lament. For, you must know that—

Every being that is born is always first taken into its arms by Mortality. It is only afterwards that the mother takes up the child even like a nurse. Where then, is the occasion for sorrow ? (8)

Oid Woman—Ah son ! wait, let me have a look at thy face just for a moment.

Peon—Come along boy. What concern have you with her babbling now ? Overwhelmed by her affection she little knows the sternness of our official duty.

शङ्खचूडः—भद्र, अयमहमागच्छामि।

किंकरः—(आत्मगतम्) आणीदो क्खु मए वज्झशिलाशमीवं शङ्खचूलो। जाव एदं वज्झचिण्हं लत्तंशुअजुअलं दइअ वज्झसिलं दंशेमि।

(आत्मगतम्) आनीतः खलु मया वध्यशिलासमीपं शङ्खचूडः। यावदेतद् वध्यचिह्नं रक्तांशुकयुगलं दत्त्वा वध्यशिलां दर्शयामि।

जीमूतवाहनः—अये ! इयमसौ योषित्। (शङ्खचूडं दृष्ट्वा) नूनमनेनाप्यस्याः सुतेन भवितव्यं, यदर्थमाक्रन्दति। (समन्तादवलोक्य) न खलु पुनः किञ्चिद् भयकारणं पश्यामि ! तत् कुतो ऽस्य भयं भविष्यतीति किमुपेत्य पृच्छामि ? अथवा, प्रसक्त एवायमालापः। कदाचिदित एव व्यक्तिर्भविष्यति। तद् विटपान्तरितस्तावच्छृणोमि।

किंकरः—(सास्रं, कृताञ्जलिः) कुमाल शङ्खचूल, एशो शामिणो आदेशो त्ति कलिअ ईदिशं पि णिट्ठुलं मन्तीअदि।

(सास्रं, कृताञ्जलिः) कुमार शङ्खचूड, एष स्वामिन आदेश इति कृत्वेदृशमपि निष्ठुरं मन्त्र्यते।

शङ्खचूडः—भद्र, कथय।

किंकरः—णाअलाओ वाशुई आणवेदि...

नागराजो वासुकिराज्ञापयति...

शङ्खचूडः—(शिरस्यञ्जलिं कृत्वा, सादरम्) किं मामाज्ञापयति स्वामी ?

किंकरः—एदं लत्तंशुअजुअलं पलिहिअ आलोह वज्झशिलं, जेण लत्तंशुअचिण्होवलक्खिदं गलुलो गण्हिअ आहालकलणाअ णइश्शदि।

एतद् रक्तांशुकयुगलं परिधायारोह वध्यशिलां, येन रक्तांशुकचिह्नोपलक्षितं गरुडो गृहीत्वाऽऽहारकरणाय नेष्यति।

जीमूतवाहनः—(सास्रम्) कष्टम् ! असौ वासुकिना परित्यक्तस्तपस्वी।

किंकरः—शङ्खचूल, गण्ह एदं। (वस्त्रयुगलमर्पयति)

शङ्खचूड, गृहाणैतत्। (वस्त्रयुगलमर्पयति)

Sankhachuda—My good man, I am just coming.

Peon—(*Aside*) I have brought Sankhachuda almost near the death-slab. Now, handing over to him this pair of red shawls as the victim's token, I shall show him the slab.

Jimutavahana—Oh ! here is that woman. (*Seeing* SANKHACHUDA) And surely he, too, must be her son for whose sake she is bewailing. (*Looking around*) But I don't see any cause of fear anywhere about ! Should I then I go and ask her whence comes her fear ? Or no, their talk is still going on. Perhaps it may

शङ्खचूड़—आया भई, मैं आया।

सेवक—(मन ही मन) वध्यशिला के समीप तो शङ्खचूड़ को मैं ले आया हूँ। अब इसे वध्य-चिह्न, यह लाल-जोड़ा, देकर वध्य-शिला दिखा दूँ।

जीमूतवाहन—अरे ! यही वह स्त्री है। (शङ्खचूड़ को देखकर) और हो-न-हो यही उसका पुत्र है जिसके लिये वह रो रही है। (चारों ओर देखकर) परन्तु मुझे तो कोई डर का कारण दिखाई नहीं देता ! तो क्या पास जाकर पूछूँ इसे किसका डर है ? अथवा, बात-चीत तो चल ही रही है । कदाचित् इसीसे स्पष्ट हो जाए। सो, वृक्ष की ओट में होकर ही सुनता हूँ।

सेवक—(आँसू भरकर, हाथ जोड़ते हुए) कुमार शङ्खचूड़, यह स्वामी का आदेश है, इसलिये इतनी कठोर बात कहने लगा हूँ।

शङ्खचूड़—हाँ भई, कहो।

सेवक—नागराज वासुकि महाराज ने आज्ञा दी है...

शङ्खचूड़—(हाथ जोड़कर माथे को लगाते हुए, आदर-पूर्वक) क्या आज्ञा दी है महाराज ने मुझे ?

सेवक—"यह लाल जोड़ा लपेटकर वध्यशिला पर चढ़ जाना, जिससे इस लाल वध्य-चिह्न से पहचानकर गरुड़ तुझे उठाकर अपने भोजनार्थ ले जाए।

जीमूतवाहन—(आँसू भरकर) हाय, बेचारे को वासुकि ने निराश्रय कर दिया !

सेवक—यह लो, शङ्खचूड़। (जोड़ा देता है)

---

reveal something. Let me therefore (remain here and) listen from behind the tree.

Peon—(*In tears, folding his hands*) Sankhachuda, my boy, this is the command of His Majesty, so I have to convey to you something which is so inhuman.

Sankhachuda—Tell me, sir.

Peon—His Majesty the king of Nagas orders thee...

Sankhachuda—(*Touching his head with folded hands, respectfully*) What be the orders of His Majesty for me ?

Peon—"Wearing this pair of red shawls mount the death slab so that Garuda may, recognizing thee from thy token of the victim's reds, seize and carry thee away for his food."

Jimutavahana—(*In tears*) Alas, that Vasuki should desert the poor fellow like that !

Peon—Sankhachuda, now take this please. (*Hands over the red pair*)

शङ्खचूडः—(सादरम्) उपनय। (इति गृहीत्वा शिरसि स्वाम्यादेशमर्पयति)

वृद्धा—(पुत्रहस्ते वाससी दृष्ट्वा, सोरस्ताडनम्) हा वच्छ! एदं क्खु तं वज्झचिण्हं वसणं, जेण भाएदि मे हिअअं। (मोहमुपगता)

(पुत्रहस्ते वाससी दृष्ट्वा, सोरस्ताडनम्) हा वत्स! एतत् खलु तद्वध्यचिह्नं वसनं, येन बिभेति मे हृदयम्। (मोहमुपगता)

किंकरः—आसण्णा क्खु गलुलस्स आगमणवेला। ता लहु अवक्कमामि।

आसन्ना खलु गरुडस्यागमनवेला। तल्लघ्वपक्रामामि।

(निष्क्रान्तः)

शङ्खचूडः—अम्ब, समाश्वसिहि, समाश्वसिहि।

वृद्धा—(समाश्वस्य, सास्रम्) हा जाद! हा पुत्तअ! हा मणोरहसदलद्ध! कहिं तुमं पुणो पेक्खिस्सं? (कण्ठे गृहीत्वा रोदिति)

(समाश्वस्य, सास्रम्) हा जात! हा पुत्रक! हा मनोरथशतलब्ध! कुत्र त्वां पुनः प्रेक्षिष्ये? (कण्ठे गृहीत्वा रोदिति)

जीमूतवाहनः—(सास्रम्) अहो, नैर्घृण्यं गरुत्मतः! अपि च,—

मूढाया मुहुरश्रुसन्ततिमुचः कृत्वा प्रलापान् बहून्
कस्त्राता मम पुत्रकेति कृपणं दिक्षु क्षिपन्त्या दृशम्।
अङ्के मातुरुपाश्रितं शिशुमिमं त्यक्त्वा घृणामश्नतश्
चञ्चुर्नैव खगाधिपस्य हृदयं वज्रेण मन्ये कृतम्॥९॥

शङ्खचूडः—(अम्बाया अश्रूणि परिमार्जयन्) अम्ब! अलमलं वैक्लव्येन। ननु समाश्वसिहि, समाश्वसिहि।—

Sankhachuda—(*Respectfully*) Give me. (*Takes and lifting it to his head honours it as a command of his master*)

Old Woman—(*Seeing the red pair in son's hand, beating her breasts*) Ah son! this is that wrapper, the victim's token, at the sight of which my heart sinks. (*Faints*)

Peon—This is about the time Garuda arrives. I should, therefore, make haste to leave this place.

[*Exit*]

शङ्खचूड़—(आदर से) लाओ। (लेकर, स्वामी की आज्ञा को सिर पर धारण करता है)

वृद्धा—(बेटे के हाथ में जोड़ा देखकर, छाती पीटती हुई) हाय बेटा, यही है वह वध्य-चिह्न जिसे देखकर मेरा हृदय सहमे जाता है। (मूर्छित हो जाती है)

सेवक—गरुड़ के आने का समय हो गया है, इसलिये शीघ्रता से चला जाऊँ।

(निष्क्रमण)

शङ्खचूड़—धीरज धरो, माँ, धीरज धरो।

वृद्धा—(चेतना में आकर, आँसूभरे) हाय बेटा! हाय पुत्र! हाय, तुझे सैंकड़ों मनोरथों से पाया था! अब तुझे फिर कहाँ देखूँगी? (गले लगाकर रोती है)

जीमूतवाहन—(आँसूभरे) कितना कठोर-हृदय है गरुड़!—

बार-बार मूर्च्छित होती, आँसुओं की झड़ी लगाती, नानाप्रकार के विलाप करती और "तेरा कौन रखवाला है, मेरे बेटा?" इस प्रकार दीनता से चारों ओर दृष्टि दौड़ाती—बेचारी बुढ़िया की गोद में पड़े इस बच्चे को निर्दयता-पूर्वक खा जाते हुए गरुड़ की, चोंच नहीं, मैं तो समझता हूँ, हृदय ही पत्थर का बना हुआ है। (६)

शङ्खचूड़—(माँ के आँसू पोंछता हुआ) बस अम्माँ, बस। व्याकुल होने से क्या लाभ? धीरज धरो, धीरज धरो।—

Sankhachuda—Take heart, mother, take heart.

Old woman—(*Recovering, tearfully*) Ah, son! Ah my child! Oh, whom I obtained as a reward of a thonsand prayers! Where shall I see thee again? (*Throwing arms round his neck, weeps*)

Jimutavahana—(*In tears*) Oh, how cruel of Garuda!

(*When I think of him as*) *mercilesily eating this child who is clinging to his mother's lap while the bewildered old woman is fainting again and again, shedding a constant stream of tears and is wailing aloud crying, "Who will save thee, my child?" and casting helpless looks all around,—I believe that not only Garuda's beak but even his heart is made of stone.* (9)

Sankhachuda—Don't be overwhelmed, mother. Take heart, I say, take heart.—

यैरत्यन्तदयापरैर्न विहिता वन्ध्यार्थिनां प्रार्थना
यैः कारुण्यपरिग्रहान्न गणितः स्वार्थः परार्थं प्रति ।
ये नित्यं परदुःखदुःखितधियस्ते साधवो ऽस्तं गताः
मातः, संहर बाष्पवेगमधुना कस्याग्रतो रुद्यते ॥१०॥

वृद्धा—(सास्रम्) पुत्तअ ! कहं समस्ससिमि ? किं एकपुत्तो त्ति किदाणुकम्पेण णिवत्ताविदो सि णाअराएण ? हा कदन्तहदअ ! कहं दाणिं तुए णिग्घिणहिअएण एव्वं वित्थिण्णे जीवलोए मम पुत्तओ एव्व सुमरिदो ? सव्वहा हदह्मि मन्दभाइणी ! (मूर्च्छां नाटयति)

(सास्रम्) पुत्रक ! कथं समाश्वसिमि ? किमेकपुत्र इति कृतानुकम्पेन निवर्तितो ऽसि नागराजेन ? हा कृतान्तहतक ! कथमिदानीं त्वया निघृणहृदयेनैवं विस्तीर्णे जीवलोके मम पुत्रक एव स्मृतः ? सर्वथा हता ऽस्मि मन्दभागिनी । (मूर्च्छां नाटयति)

जीमूतवाहनः—

आर्तं कण्ठगतप्राणं परित्यक्तं स्वबान्धवैः ।
त्राये नैनं यदि ततः कः शरीरेण मे गुणः ॥११॥

तद् यावदुपसर्पामि ।

शङ्खचूडः—अम्ब, संस्तम्भयात्मानम् ।

वृद्धा—हा पुत्तअ संखचूल ! दुल्लहो संत्थंभो । जदा एव्व णाअलोअपरिरक्खएण वासुइणा सअं परिच्चत्तोसि तदा को दे परित्ताणं करिस्सदि ?

हा पुत्रक शङ्खचूड ! दुर्लभः संस्तम्भः । यदैव नागलोकपरिरक्षकेण वासुकिना स्वयं परित्यक्तो ऽसि, तदा कस्ते परित्राणं करिष्यति ?

जीमूतवाहनः—(उपसृत्य) नन्वयमहम् ।

No more are the noble souls on this earth, who, out of the their prefound sense of pity, never turned down a suppliant's prayer, who, out of innate compassion, never cared for their own interest in preference to that of others', and who always felt a pang in their mind at the pain of others ! Now, restrain thy tears, O mother ! Before whom dost thou weep in vain ? (10)

वे महात्मा संसार से उठ गए, जिन्होंने अत्यन्त दया के कारण कभी किसी अर्थी की प्रार्थना को नहीं ठुकराया था, जिन्होंने अपनी स्वाभाविक करुणा के कारण दूसरों के हित के लिये अपने हित की कभी परवा नहीं की थी और जिनका मन सदा ही दूसरों के दुःख से दुःखी हो उठता था! इसलिये, हे माता, तू अपने आँसुओं के प्रवाह को रोक ले, अब तू व्यर्थ में किसके सामने रो रही है? (१०)

वृद्धा—(आँसूभरे) धीरज कैसे धरूं, बेटा? क्या इकलौता जानकर अनुकम्पा से नागराज ने तुझे छोड़ दिया है? हाय रे निगोड़े यम! क्या आज तुझ हृदयहीन को इस विस्तृत संसार में एक मेरे ही बेटे की सुध आई थी? मुझ अभागी का तो सर्वनाश हो गया! (मूर्च्छित हो जाती है)

जीमूतवाहन—

यदि विपत्ति में पड़े, मरणासन्न, बन्धु-बान्धवों से परित्यक्त इस बेचारे को मैं बचा नहीं सकता तो मेरे शरीर का क्या लाभ? (११)

तो चलो, उनके पास जाऊँ।

शङ्खचूड़—माँ, अपने आपको सँभालो।

वृद्धा—हाय, बेटा शङ्खचूड़! धीरज बाँधना कठिन है। जब नाग-लोक परिरक्षक स्वयं वासुकि महाराज ने ही तुझे छोड़ दिया तब और कौन तेरी रक्षा करेगा?

जीमूतवाहन—(पास जाकर) लो, मैं जो हूँ।

Old Woman—(*In tears*) How can I take heart, my son? Did our Naga king show any mercy on thee and keep thee back because thou wert the only son of a poor mother? O vile Death! you too in this vast living world could think only of my son, so relentlessly? Unfortunate that I am, I am wholly undone! (*Swoons*)

Jimutavahana—

If I cannot save the life of this poor lad who is in distress, who is standing on the verge of death, and has been deserted by his kinsmen, of what use would be this life of mine? (*11*)

So let me approach them.

Sankhachuda—Mother, compose yourself.

Old Woman—Sankhachuda, my son, it is hard to have composure. When even the protector of the Naga-world, Lord Vasuki himself, has forsaken thee, *who else* will save thee?

Jimutavahana—(*Approaching*) Most surely, *I will.*

वृद्धा—(ससंभ्रममुत्तरीयेण पुत्रमाच्छाद्य, जीमूतवाहनमुपसृत्य) गलुल, विणदाणन्दण ! वावादेहि मं। अहं दे आहारणिमित्तं परिकप्पिदा।

(ससंभ्रममुत्तरीयेण पुत्रमाच्छाद्य, जीमूतवाहनमुपसृत्य) गरुड, विनतानन्दन ! व्यापादय माम्। अहं ते आहारनिमित्तं परिकल्पिता।

जीमूतवाहनः—(सास्रम्) अहो पुत्रवात्सल्यम् !—

अस्या विलोक्य मन्ये पुत्रस्नेहेन विक्लवत्वमिदम्।
अकरुणहृदयः करुणां कुर्वीत भुजङ्गशत्रुरपि ॥१२॥

शङ्खचूडः—अम्ब, अलमलं त्रासेन। न खल्वयं नागशत्रुः। पश्य,—

महाहि - मस्तिष्क - विभेद - मुक्त-
रक्त - च्छटा - चर्चित-चण्ड-चञ्चुः।
क्वासौ गरुत्मान् क्व च नाम सोम-
सौम्य-स्वभावाकृतिर् एष साधुः ॥१३॥

वृद्धा—हा पुत्तअ ! अहं पुण तुज्झ मरणभीदा सव्वं एव गलुलमअं पेक्खामि।

हा पुत्रक ! अहं पुनस्तव मरणभीता सर्वमेव गरुडमयं प्रेक्षे।

जीमूतवाहनः—अम्ब, मा भैषीः। नन्वयमहं विद्याधरः, त्वत्सुतसंरक्षणार्थमेवायातः।

वृद्धा—(सहर्षम्) पुत्तअ, पुणो पुणो एव्वं भण।

(सहर्षम्) पुत्रक, पुनः पुनरेवं भण।

जीमूतवाहनः—अम्ब, किमनेन पुनः पुनरभिहितेन ? कर्मणैव संपादयामि।

वृद्धा—(शिरस्यञ्जलिं कृत्वा) पुत्तअ, चिरं जीव !

(शिरस्यञ्जलिं कृत्वा) पुत्रक, चिरं जीव !

Old Woman—(*Hurriedly covering her son with scarf, approaching* JIMUTAVAHANA) O Garuda, son of Vinata ! kill me. I have been assigned for thy food.

Jimutavahana—(*In tears*) O, the mother's affection !—

Seeing such anguish of this old woman on account of affection for her son, I feel that even the heartless Garuda, the natural foe of the Nagas, may show mercy. (12)

Sankhachuda—Mother, don't be so affrighted. He is not Garuda, the foe of us Nagas. For see,—

वृद्धा—(घबराकर, दुपट्टे से पुत्र को ढँकती हुई, जीमूतवाहन के पास जाकर) हे गरुड़ भगवान्, हे विनता माता के पुत्र ! मुझे मार डाल। तेरे भोजन के लिये मैं भेजी गई हूँ।

जीमूतवाहन—(आँसू भरकर) बलिहारी पुत्र-स्नेह के !—

पुत्र स्नेह के कारण इसकी यह विह्वलता देखकर तो लगता है कि दारुण-हृदय नाग-शत्रु स्वयं गरुड़ भी इसपर तरस खाएगा। (१२)

शङ्खचूड़—डरती क्यों हो, माँ। यह तो गरुड़ नहीं है। देख तो—

कहाँ वह गरुड़, जिसकी कठोर चोंच बड़े-बड़े साँपों की खोपड़ियों को फाड़कर फूटती रक्तधारा से रञ्जित होती है, और कहां चन्द्रमा के समान सौम्य स्वभाव और आकृति वाला यह महात्मा ! (१३)

वृद्धा—हाय रे, बेटा ! तेरी मृत्यु से सहमी हुई मैं सब किसीको गरुड़ ही समझती हूँ।

जीमूतवाहन—माता, डरो मत। मैं विद्याधर हूँ और तेरे पुत्र की रक्षा के लिये आया हूँ।

वृद्धा—(हर्ष से) फिर कहो, बेटा, फिर कहो।

जीमूतवाहन—फिर-फिर दुहराने से क्या लाभ, माता ? करके ही दिखाऊँगा।

वृद्धा—(हाथ जोड़कर माथे से लगाती हुई) जुग-जुग जियो बेटा, जुग-जुग जियो !

Where, on the one hand, Garuda with his ferocious beak bespattered witk blood gushing from the torn skull of a big Naga, and where, on the other, this saintly person whose face is indicative of a nature as cool as the moon ! (13)

Old Woman—Alas ! my son, I am so much distracted by the thought of thy impending death that I see everything as Garuda.

Jimutavahana—Don't be afraid, mother. I am a Vidhyadhara and have come here only to save your son.

Old Woman—(*Joyfully*) Say this again and again, my son.

Jimutavahana—What use is my saying it over and over again? I will prove the veracity of it by my act alone.

Old Woman—(*Placing folded hands on forehead*) May thou live long, my son!

जीमूतवाहनः—

ममैतदम्बार्पय वध्यचिह्नं प्रावृत्य यावद् विनतात्मजाय ।
पुत्रस्य ते जीवितरक्षणार्थं स्वं देहमाहारयितुं ददामि ॥ १४॥

वृद्धा—(कर्णौ पिधाय) पडिहदं क्खु एदं ! तुमं पि मे संखचूलणिव्विसेसो पुत्तओ एव्व । अहव, संखचूलातो अहिअदरो, जो एव्वं बन्धुजणपरिच्चत्तं मे पुत्तअं सरीरप्पदाणेण रक्खिदुं इच्छसि ।

(कर्णौ पिधाय) प्रतिहतं खल्वेतत् । त्वमपि मे शङ्खचूडनिर्विशेषः पुत्रक एव । अथवा, शङ्खचूडादधिकतरः, य एवं बन्धुजनपरित्यक्तं मम पुत्रकं शरीरप्रदानेन रक्षितुमिच्छसि ।

शङ्खचूडः—(सस्मितम्) अहो, जगद्विपरीतमस्य महासत्त्वस्य चरितम् ! कुतः,—

विश्वामित्रः श्वमांसं श्वपच इव पुरा ऽभक्षयद् यन्निमित्तं
नाडीजङ्घो विजघ्ने कृततदुपकृतिर्यत्कृते गौतमेन ।
पुत्रो ऽयं काश्यपस्य प्रतिदिनमुरगानत्ति तार्क्ष्यो यदर्थं
प्राणांस्तानेव चित्रं तृणमिव कृपया यः परार्थे जहाति ॥ १४॥

(जीमूतवाहनमुद्दिश्य) भो महात्मन्, दर्शिता त्वयेयमात्मप्रदानाध्यवसायान्निर्व्याजा मयि दयालुता । तदलमनेन निर्बन्धेन । कुतः,—

जायन्ते च म्रियन्ते च मादृशाः क्षुद्रजन्तवः ।
परार्थे बद्धकक्षाणां त्वादृशामुद्भवः कुतः ॥ १६ ॥

तत् किमनेन ? मुच्यतामयमध्यवसायः ।

Jimutavahana—

Mother, then let me have this victim's token so that wrapping myself in it I may offer myself to Garuda for food in order to save the life of thy son. (14)

Old Woman—(*Stopping her ears*) God forbid! Why, thou art as good a son to me as Sankhachuda, nay, even more than Sankhachuda, as thou wishest to save my son who is abandoned by his kinsmen by offering thy own body.

Sankhachuda—(*Smiling*) How different from the world are the ways of this great soul ! For,—

जीमूतवाहन—

माता, यह वध्य-चिन्ह मुझे दे दो जिसमें अपने-आपको लपेटकर तेरे पुत्र की प्राण-रक्षा के लिये मैं अपने शरीर को गरुड़ के प्रति भोजनार्थ दे दूँ। (१४)

वृद्धा—(कानों पर हाथ रखकर) **राम-राम, ऐसा मत करना ! तू भी तो शङ्खचूड़ के समान मेरा पुत्र ही है। अथवा शङ्खचूड़ से भी बढ़कर, जो बन्धु-बान्धवां द्वारा परित्यक्त मेरे पुत्र को अपना शरीर न्योछावर करके बचाना चाहता है।**

शङ्खचूड़—(मुस्कराते हुए) **अरे, इस महापुरुष का व्यवहार ही जगत् से निराला है ! क्योंकि,—**

जिन प्राणों (की रक्षा) के लिये विश्वामित्र ने कभी पहले एक चाण्डाल की भाँति कुत्ते का मांस तक खा लिया था, जिन प्राणों के लिये गौतम ने अपने उपकारी नाडीजङ्घ तक को मार डाला था, और जिन प्राणों के लिये कश्यप का पुत्र गरुड़ प्रतिदिन नागों को खाता है—आश्चर्य है कि उन्हीं प्राणों को यह महात्मा अनुकम्पा से पसीजकर तिनके के समान दूसरों के लिये न्योछावर कर रहा है ! (१५)

(जीमूतवाहन को लक्ष्य करके) **महात्मन्, आत्मोत्सर्ग के इस प्रस्ताव से आपने मेरे प्रति यह निष्कारण दयालुता प्रदर्शित की है। पर अब आप इसपर अधिक आग्रह न करें। क्योंकि,—**

मेरे जैसे तुच्छ प्राणी तो नित्य पैदा होते और मरते रहते हैं। परन्तु परोपकारार्थ कटिबद्ध होने वाले आप जैसों की उत्पत्ति कहां ? (१६)

सो, इससे क्या लाभ ? आप इस आग्रह छोड़ दें।

How strange ! that out of compassion for another he is sacrificing like a straw the very life on earth, for sustaining which Visvamitra in olden times ate a dog's flesh like a Chandala, for the sake of which Gautama killed Nadijangha who had been his benefactor, and for preserving which this Garuda, the son of Kasyapa, daily feasts upon Nagas. (15)

(*Addressing* JIMUTAVAHANA) Noble soul, by your readiness to sacrifice yourself, you have indeed shown what genuine sympathy you feel for me. Now, please do not be too insistent. For,—

Day in and day out petty creatures like me are born and they die. But how rarely, once in a blue moon, comes a soul like thee who is out to do good to others at all costs. (16)

जीमूतवाहनः—(शङ्खचूडं हस्ते गृहीत्वा) कुमार शङ्खचूड, न मे चिराल्लब्धावसरस्य परार्थसंपादनमनोरथस्यान्तरायं कर्तुमर्हति भवान्। (पादयोः पतित्वा) तदलं विकल्पेन। दीयतां वध्यचिह्नम्।

शङ्खचूडः—भो महासत्त्व, किमनेन वृथाप्रयासेन? न खलु शङ्खचूडः शङ्खधवलं शङ्खपालकुलं मलिनीकरिष्यति। अथ ते वयमनुकम्पनीयाः, तदियमस्मद्विपत्तिविक्लवा यथा न परित्यजति जीवितमम्बा, तथा ऽभ्युपायश्चिन्त्यताम्।

जीमूतवाहनः—किमत्र चिन्त्यते? चिन्तित एवाभ्युपायः। स तु त्वदायत्तः।

शङ्खचूडः—कथमिव?

जीमूतवाहनः—

म्रियते म्रियमाणे या त्वयि जीवति जीवति।
तां यदीच्छसि जीवन्तीं रक्षात्मानं ममासुभिः॥ १७॥

अयमभ्युपायः। तदर्पय त्वरितं वध्यचिह्नम्। यावदनेनात्मानमाच्छाद्य वध्यशिलामारोहामि। त्वमपि जननीं पुरस्कृत्यास्माद् देशान्निवर्तस्व। कदाचिदियमालोक्यैव सन्निकृष्टमाघातस्थानं स्त्रीसहभुवा कातरत्वेनाम्बा प्राणान् जह्यात्। किञ्च न पश्यति भवान् इदं विपन्नपन्नगानेककङ्कालसंकुलं महाश्मशानम्? तथाहि,—

Jimutavahana—(*Holding* SANKHACHUDA *by the hand*) Sankhachuda, my boy, you should not put obstacles in the way of my anxiety to serve the interests of others for which this opportunity has come to me as godsend after a long time. (*Falling at his feet*) Don't you hesitate now, hand me over the victim's token.

Sankhachuda—Noble man, what is the good of this futile endeavour? In no event is Sankhachuda going to sully his Sankhapala family which is as immaculate as a conch. If still you are determined to show compassion on us, then please do think of some way by which this mother of mine is saved from dying by the shock of this catastrophe.

Jimutavahana—What is there to think of? I have already thought of the way, but its success lies in your hands.

Sankhachuda—What is that if I may hear?

जीमूतवाहन—(शङ्खचूड़ का हाथ पकड़कर) कुमार शङ्खचूड़, बड़ी देर के पश्चात् यह अवसर हाथ आया है। मेरी परोपकार की अभिलाषा में रुकावट मत डालो। (चरणों पर गिरकर) अब और आनाकानी मत करो और लाओ वध्य-चिन्ह मुझे दे दो।

शङ्खचूड़—महात्मन्, इस व्यर्थ के क्लेश से क्या लाभ ? शङ्खचूड़ अपने शङ्ख-शुभ्र शङ्ख-पाल वंश को कलंकित नहीं करने का। यदि आपको सचमुच मेरे ऊपर दया आई ही है तो कोई ऐसा उपाय सोचिये कि मेरी यह विपत्ति की मारी माँ कहीं प्राण त्याग न कर बैठे।

जीमूतवाहन—इसमें और सोचने की बात ही क्या है ? उपाय तो सोच ही रखा है। और वह तेरे अपने अधीन है।

शङ्खचूड़—सो कैसे ?

जीमूतवाहन—

जो तेरे मरने से मर जाएगी और तेरे जीते रहने से जीती रहेगी—यदि उसे तू जीवित रखना चाहता है, तो मेरे प्राणों से अपनी प्राण-रक्षा कर। (१७)

यह है उपाय। तो लाओ, झटपट मुझे वध्य-चिह्न सौंप दो, जिससे इसे ओढ़-कर मैं वध्य-शिला पर चढ़ जाऊँ। उधर तू माँ को अपने साथ लेकर इस स्थान से लौट जा। कहीं यह वध्य-स्थली को निकट देखकर स्त्री-कातर स्वभाव से प्राण न छोड़ दे। और क्या तुम देखते नहीं, सामने यह अनेकों मृत नागों के पञ्जर-समूह से भरी हुई महाश्मशान भूमि है ? कि,—

Jimutavahana—

She is sure to die if you die, but she can live if you continue to live. If you are anxious to see her live, then save your own life with mine. (*17*)

This is the way out. So be quick and hand over the victim's token to me, that I may wrap myself in it and mount the death slab. You, on the other hand, take your mother along with you and quit this place, lest by merely seeing the place of execution close at hand, she should, with her faint heart of a woman, give up the ghost. Don't you see these vast funeral grounds littered all over with the skulls and bones of the dead Nagas ? For see,—

चञ्चच्-चञ्चूद्धृतार्ध-च्युत-पिशित-लव-ग्रास-संवृद्ध-गर्धैर्
गृध्रैरारब्ध-पक्ष-द्वितय-विधुतिभिर् बद्ध-सान्द्रान्धकारे । [वानाम्
वक्त्रोद्वान्ताः पतन्त्यश्छिमिति शिखिशिखाश्रेण्यो ऽस्मिञ्शि-
अस्र-स्रोतस्यजस्र-स्रुत-बहल-वसा-वास-विस्रे स्वनन्ति ॥१८॥

शङ्खचूडः—कथं न पश्यामि ?—

प्रतिदिनमशून्यमहिनाहारेण विनायकाहितप्रीति ।
शशिधवलास्थिकपालं वपुरिव रौद्रं श्मशानमिदम् ॥१९॥

तद् गच्छ । किमेभिस्त्रासनोपायैः ? आसन्नः खलु गरुडस्यागमनसमयः । (मातुरग्रतो जानुभ्यां स्थित्वा, शिरोनिहिताञ्जलिः) अम्ब, त्वमपि निवर्तस्वेदानीम् ।—

समुत्पत्स्यामहे मातर् यस्यां-यस्यां गतौ वयम् ।
तस्यां-तस्यां प्रियसुते माता भूयास्त्वमेव नः ॥२०॥

(पादयोः पतति)

वृद्धा—(सास्रम्, आत्मगतम्) कहं पच्छिमं से वअणं ? (प्रकाशम्) पुत्तअ, तुमं उज्झिअ अण्णदो मे पाआ ण पसरन्ति । ता तुए सह गमिस्सं ।

(सास्रम्, आत्मगतम्) कथं पश्चिममस्य वचनम् ? (प्रकाशम्) पुत्रक, त्वामुज्झित्वा ऽन्यत्र मे पादौ न प्रसरतः । तत् त्वया सह गमिष्यामि ।

शङ्खचूडः—(उत्थाय) यावदहमपि नातिदूरे भगवन्तं दक्षिणगोकर्णं प्रदक्षिणीकृत्य स्वाम्यादेशमनुतिष्ठामि । (मात्रा सह निष्क्रान्तः)

Here on these grounds,—which are overcast with a thick gloom caused by the flutter of the wings of vultures, hovering with increased avidity to eat the bits of flesh torn by and half falling from their nibbling beaks—the flames of the fire-brands dropped from the mouths of jackals, are hissing themselves out in the pool of blood, reeking with the smell of fat which is flowing so copiously. (*18*)

Sankhachuda—How could I fail to see it ?—

These funeral grounds with their heaps of bones and skulls bathed white in the moonlight and affording pleasure to Garuda (Vinayaka) by serving him with a Naga for food everyday without fail, look as hideous to me as the body of Rudra, which, adorned with skulls and bones flashing in the light of his crescent, affords delight to Ganesa with its serpent wreaths that never fail to bedeck it. (*19*)

You had better go away. Why frighten me like this ? The time of Garuda's approach is drawing near. (*Kneeling before his mother, touching his head with folded hands*) Mother, you should also now return.—

जहाँ चलती चोंच से नोचे हुए मांस की आधी गिरती हुई बोटियों को खाने के लालच से झपटते हुए गिद्धों ने अपने परों के फैलाव से घुप-अन्धेरा कर दिया है और जहाँ गीदड़ों के मुख से गिरती (अधजली लकड़ियों की) ज्वालाएँ निरन्तर प्रचुरता से बहती हुई चरबी से दुर्गन्धमय रुधिर के स्रोत में बुझकर 'सिम-सिम' की ध्वनि कर रही हैं। (१८)

शङ्खचूड़—देख क्यों नहीं रहा ?—

प्रतिदिन, निर्बाधरूप से भोजनार्थ एक नाग उपस्थित करके गरड़ को संतुष्ट करने वाला चन्द्र-धवल खोपड़ियों से भरा हुआ यह श्मशान कितना भयावह है—मानो निरन्तर सर्प-हार पहने, गणेश-वत्सल, सिर पर विराजमान चन्द्रकला द्वारा उज्ज्वलतर मुण्डमाला से सुशोभित साक्षात् रुद्र की मूर्ति हो। (१६)

अच्छा, अब आप जाएँ। इन डराने वाली बातों से क्या लाभ ? अब गरुड़ के आने का समय भी निकट है। (माँ के संमुख घुटने टेककर, मस्तक पर अञ्जलि रखता हुआ) माँ, अब तुम भी लौट जाओ।—

हे पुत्र-वत्सल माँ, जिस-जिस भी योनि में मैं उत्पन्न होऊँ, उस-उस में तूने ही मेरी माँ बनना। (२०)

(चरणों में गिरता है)

वृद्धा—(आँसूभरे, मन ही मन) बस यही इसकी अन्तिम इच्छा है ? (प्रकट) पुत्र, तुझे छोड़कर मेरे पाँव दूसरी ओर बढ़ते ही नहीं। इसलिये मैं तो तेरे साथ ही चलूँगी।

शङ्खचूड़—(उठकर) तब तक मैं भी यहीं पास ही भगवान् दक्षिण गोकर्ण (की मूर्ति) की प्रदक्षिणा करके अपने स्वामी की आज्ञा का पालन करता हूँ। (माता के साथ निष्क्रमण)

In whatever form of life I may be re-born, O fond mother, may thou be my mother always. (20)

[*Falls at her feet*]

Old Woman—(*In tears, aside*) O, this was to be the last wish of his! (*Aloud*) Sonny, my steps fail me when I have to go away leaving thee here. I will accompany thee rather.

Sankhachuda—(*Rising*) Meanwhile, let me go and do homage to Lord Dakshina Gokarna, whose temple is not far away, before obeying the orders of my master. (*Exit with his mother*)

जीमूतवाहनः—कष्टम् ! न संपन्नमभिलषितम् । तत् को ऽत्राभ्युपायः ?

(सहसा प्रविश्य)

काञ्चुकीयः—इदं वासोयुगलम्...

जीमूतवाहनः—(दृष्ट्वा, सहर्षमात्मगतम्) दिष्ट्या सिद्धमभिवाञ्छितमनेनार्तकितोपनतेन रक्तांशुकयुगलेन ।

काञ्चुकीयः—इदं वासोयुगलं देव्या मित्रावसोर्जनन्या कुमाराय प्रेषितम् । परिधत्तां कुमारः ।

जीमूतवाहनः—उपनय ।

(कञ्चुकीय उपनयति)

जीमूतवाहनः—(गृहीत्वात्मगतम्) सफलीभूतो मे मलयवत्याः पाणिग्रहणविधिः । (परिधाय, प्रकाशम्) कञ्चुकिन्, गम्यताम् । मद्वचनादभिवादनीया देवी ।

काञ्चुकीयः—यदाज्ञापयति कुमारः । (निष्क्रान्तः)

जीमूतवाहनः—

वासोयुगमिदं रक्तं प्राप्तकाले ममागतम् ।
करोति महतीं प्रीतिं परार्थं देहमुज्झतः ॥२१॥

(दिशो विलोक्य) यथायं चलितमलयाचलशिखरशिलासञ्चयः प्रचण्डो नभस्वांस्तथा तर्कयामि आसन्नीभूतः पक्षिराज इति । अपि च,—

Jimutavahana—Alas ! my wish could not be fulfilled. What other way ?

[*Entering suddenly*]

Chamberlain—This pair of shawls...

Jimutavahana—(*Seeing, joyfully, to himself*) Thank God, this pair of red shawls, arrived so unexpectedly, has, so to say, fulfilled my wish.

Chamberlain—This pair of shawls has been sent for the Prince by the Queen, Mitravasu's mother. The Prince may wear it.

Jimutavahana—Bring it to me.

[CHAMBERLAIN *hands it over*]

Jimutavahana—(*Taking, aside*) My wedding Malayavati has borne its fruit. (*Wearing, aloud*) Chamberlain, you may go now. Pay my respects to the mother Queen.

जीमूतवाहन—हाय! मेरा मनोरथ सफल न हुआ। तो अब क्या किया जाए ?

(एकाएक प्रवेश)

कञ्चुकी—यह रहा कपड़ों का जोड़ा...

जीमूतवाहन—(देखकर, हर्ष से फूला न समाता हुआ, मन ही मन) अहो-भाग्य! जिसकी कल्पना भी नहीं थी, ऐसे अचानक प्राप्त हुए इस लाल जोड़े ने मेरी कामना पूरी कर दी।

कञ्चुकी—यह रहा कपड़ों का जोड़ा जो महादेवी मित्रावसु की माता ने आपके लिये भेजा है। आप इसे पहन लें।

जीमूतवाहन—लाओ।

(कञ्चुकी देता है)

जीमूतवाहन—(लेकर, मन ही मन) मलयवती से मेरा विवाह सफल हुआ। (पहनकर, प्रकट) कञ्चुकी, तुम जाओ और महादेवी जी को मेरा प्रणाम कहो।

कञ्चुकी—जैसी युवराज की आज्ञा। (निष्क्रमण)

जीमूतवाहन—

ठीक अवसर पर आया हुआ यह (लाल) कपड़ों का जोड़ा, दूसरों के निमित्त देह-त्याग करते हुए मुझे बहुत भला प्रतीत हो रहा है। (२१)

(चारों ओर देखकर) क्योंकि वायु प्रचण्ड हो उठने के कारण मलयाचल के शिखर और चट्टानें काँपने लगी हैं, इसलिये मेरा विचार है कि गरुड़ कहीं पास ही आ पहुँचा है। और—

Chamberlain—As the Prince commands. (*Exit*)

Jimutavahana—

This pair of red shawls, having come at the opportune time fills me with ineffable joy as I am about to sacrifice my life for the sake of another. (21)

(*Looking in all directions*) From the impetuous gale that has broken out, shaking the rocks on the top of Malaya hills, I conclude that Garuda has come very near. For,—

तुल्याः संवर्तकाभ्रैः पिदधति गगनं पङ्क्तयः पक्षतीनां
तीरं वेगान्निरस्तं क्षिपति भुव इव प्लावनायाम्बु सिन्धोः ।
कुर्वन् कल्पान्तशङ्कां सपदि च सभयं वीक्षितो दिग्द्विपेन्द्रैर्
देहोद्द्योतैर्दशाशाः कपिशयति मुहुर्द्वादशादित्यदीप्तिः ॥२२॥

तद् यावदसौ नागच्छत्येव शङ्खचूडः, तावत् त्वरिततरमिमां वध्यशिलामारोहामि । (तथा कृत्वोपविश्य, स्पर्शं नाटयन्) अहो स्पर्शो ऽस्याः !—

न तथा सुखयति मन्ये मलयवती मलयचन्दनरसार्द्रा ।
अभिवाञ्छितार्थसिद्ध्यै वध्यशिलेयं यथा स्पृष्टा ॥२३॥

अथवा, किं मलयवत्या ?—

शयितेन मातुरङ्के विस्रब्धं शैशवे न तत् प्राप्तम् ।
लब्धं सुखं मयास्या वध्यशिलाया यदुत्सङ्गे ॥२४॥

तदयमागत एव गरुत्मान् ! यावदात्मानमाच्छाद्य तिष्ठामि । (तथा करोति)

(ततः प्रविशति गरुडः)

His spreading wings are filling the firmament as if it were overcast with the clouds of doomsday. The water of the sea, tossed by his swoop, is breaking on the shore as if to deluge the earth. Dazzling like the twelve suns risen simultaneonsly, he is blazing all the (space between) ten quarters with the luster of his body and is being gazed at with fear by the guardian elephants of quarters, apprehensive of the day of Destruction. (22)

But I should be quicker to ascend this death-slab before Sankhachuda arrives. (*Doing so, sitting, and indicating the feel of it*) O, how pleasant it feels !—

गरुड़ के (विशाल) पंखों की पंक्तियों ने प्रलय-काल के मेघों के समान आकाश को ढँक लिया है। (पंखों की वायु के) वेग द्वारा प्रबलता से उछाला हुआ समुद्र का पानी मानों पृथ्वी को डुबा देने के लिये तट को आक्रान्त कर रहा है। दिग्गज चौंककर डर के मारे उसी बारह आदित्यों के समान भासमान गरुड़ की ओर देख रहे हैं जब कि वह इसी प्रकार प्रलय-काल की अशङ्का उत्पन्न करता हुआ अपने शरीर की प्रभा से दशों दिशाओं को पुनः-पुनः प्रदीप्त कर रहा है। (२२)

इसलिये उस शङ्खचूड के लौट आने से पहले ही मैं झटपट वंध्यशिला पर चढ़ जाता हूँ। (शिला पर चढ़कर, बैठकर स्पर्श-सुख प्रकट करता हुआ) अहा, क्या सुहावना स्वर्श है !—

मेरे विचार में मलयाचल के चन्दन-रस में लिप्त मलयवती (के आलिङ्गन) ने भी मुझे ऐसा आनन्द कभी नहीं दिया था जैसा मेरे (परोपकार) मनोरथ को पूर्ण करने वाली इस शिला के स्पर्श ने दिया है। (२४)

अथवा, मलयवती का तो कहना ही क्या ?—

बचपन में माँ की गोद में निःशङ्क सोते हुए भी मुझे ऐसा सुख कभी नहीं मिला था जैसा आज इस वध्यशिला पर लेटने से मिल रहा है। (२४)

लो, गरुड़ तो आ ही गया ! अब मैं अपने-आपको ढँक लेता हूँ। (ढँकता है)

(गरुड़ का प्रवेश)

Not even the touch of Malayavati's body anointed with fresh sandal paste is so soothing as that of this death-slab leading to the fulfilment of my wish. (23)

Or, why speak of Malayavati ?—

Even while lying snug in the lap of my mother I hadn't enjoyed that pleasure in my childhood which I am now getting from the contact of this death-slab. (24)

Lo, there is Garuda—arrived ! So, let me wrap myself and wait. (*Does so*)

[*Enter* GARUDA]

गरुडः—एष भोः !—

क्षिप्त्वा बिम्बं हिमांशोर्भयकृतवलयां संहरन् शेषमूर्तिं
सानन्दं स्यन्दनाश्वत्रसनविचलिते पूष्णि दृष्टोऽग्रजेन ।
एष प्रान्ताऽवसज्जज्-जलधर-पटलात्यायतीभूत-पक्षः
प्राप्तो वेलामहीध्रं मलयमहमहिग्रासगृध्नुः क्षणेन ॥२५॥

जीमूतवाहनः—

संरक्षता पन्नगमद्य पुण्यं मयार्जितं यत् स्वशरीरदानात् ।
भवे-भवे तेन ममैवमेव भूयात् परार्थः खलु देहलाभः ॥२६॥

गरुडः—(जीमूतवाहनं निर्वर्ण्य)—

अस्मिन् वध्यशिलातले निपतितं शेषानहीन् रक्षितुं
निर्भिद्याशनिदण्डचण्डतरया चञ्च्वा ऽधुना वक्षसि ।
भोक्तुं भोगिनमुद्धरामि तरसा रक्ताम्बरप्रावृतं
दिग्धं मद्-भय-दीर्यमाण-हृदय-प्रस्यन्दिनेवासृजा ॥२७॥

Garuda—Look ! here,—

In an instant I have come to the sea-side hills of Malaya, avid for my meal of a Naga, with the span of my wings extended by the clouds clinging to their ends, being watched (at dusk) with interest by my elder brother as the steeds of sun's chariot shied and he strayed from his course, causing Seshanaga to coil up in fear, and brushing the puny moon aside. (25)

Jimutavahana—

In every existence in which I be re-born again and again, may

गरुड़—लो मैं आ गया !—

चन्द्र बिम्ब को एक ओर फेंककर, भय से कुण्डली मारे हुए शेषनाग के शरीर को और अधिक संकुचित करवाता हुआ, रथ के घोड़ों के ठिठक जाने से सूर्य देवता के दोलायमान हो जाने पर अपने बड़े भाई (अरुण) से सहर्ष देखा जाता हुआ और पक्षान्तों से सटे मेघपटलों द्वारा विस्तृत (अर्थात् परिवर्धित) पंखों से उड़कर नाग-भोजन की लालसा से, लो मैं क्षणभर में ही समुद्र तटवर्ती मलय पर्वत पर आ गया हूँ। (२५)

जीमूतवाहन—

अपने शरीर-दान द्वारा नाग की रक्षा करते हुए जो पुण्य मैंने आज उपार्जित किया है, उसीके फलस्वरूप मुझे जन्म-जन्मान्तर में परोपकार-हित ही शरीर-लाभ होता रहे। (२६)

गरुड़—(जीमूतवाहन को देखकर)—

अब मैं इस नाग को, जो बाकी नाग-समुदाय को बचाने के लिये वध्यशिला पर पड़ा हुआ है और लाल वस्त्र में लिपटा होने के कारण ऐसे लगता है मानों मेरे भय से विदीर्ण छाती से बहते हुए रुधिर में लथपथ हो, वज्राघात से भी कठोरतर अपनी चोंच से इसकी छाती फाड़कर खा जाने के लिये झटपट उठाकर ले जाऊँगा। (२७)

---

my body, by virtue of the merit I am going to acquire by saving the life of a Naga at the cost of my own today, be dedicated everytime in a like manner to the good of others. (26)

Garuda—(*Seeing* JIMUTAVAHANA)—

Lo ! with a sudden swoop, now I am going to rip open with my beak, which is harder than thunderbolt, the chest of this Naga who is lying on this death-slab in order to save the lives of his fellow Nagas, and carry him away for my meal, wrapped as he is in reds, and is looking as if he were bathed in the stream of blood flowing from his heart rent by anticipatory dread of me. (27)

(अभिपत्य जीमूतवाहनं गृह्णाति । नेपथ्यात् पुष्पाणि पतन्ति । दुन्दुभिध्वनिश्च। ऊर्ध्वं दृष्ट्वा ऽऽकर्ण्य च) अये ! पुष्पवृष्टिर्दुन्दुभिध्वनिश्च ।—

आमोदानन्दितालिर्निपतति किमियं पुष्पवृष्टिर्नभस्तः
स्वर्गे किं वैष चक्रं मुखरयति दिशां दुन्दुभीनां निनादः ।

(विहस्य)

आ ज्ञातं सो ऽपि मन्ये मम जवमरुता कम्पितः पारिजातः
सार्धं संवर्तकाभ्रैरिदमपि रसितं जातसंहारशङ्कैः ॥२८॥

जीमूतवाहनः—(आत्मगतम्) दिष्टया कृतार्थो ऽस्मि ।

गरुडः—(कलयन्)—

नागानां रक्षिता भाति गुरुरेष यथा मम ।
तथा सर्पाशनाशङ्कां व्यक्तमद्यापनेष्यति ॥२९॥

तद् यावदहं मलयशिखरमारुह्य यथेष्टमाहारयामि ।

(जीमूतवाहनं गृहीत्वा निष्क्रान्तः)

चतुर्थो ऽङ्कः

(*Swoops down and lifts up* JIMUTAVAHANA. *Shower of flowers, and fanfare behind the scenes. Looking up and listening*) Oh, a shower of flowers and a fanfare !—

What ! Is this really a shower of flowers that is falling from the sky and attracting the bees with its sweet smell ? and this, a fanfare in heaven filling the quarters with its peal ?

(*Laughing*)

I see ! It must be the tree of Heaven, I believe, which has been shaken by the storm raised up my impetuous flight and simulta-

(झपटकर जीमूतवाहन को उठा लेता है। नेपथ्य से पुष्प वर्षा और दुन्दुभि-ध्वनि। ऊपर देखकर और सुनते हुए) अरे, **पुष्प वर्षा और दुन्दुभि-ध्वनि !—**

आकाश से क्या यह सचमुच पुष्पों की वर्षा हो रही है जिसकी सुगन्धि से भौंरे मस्त हो उठे हैं ? और स्वर्ग में यह नगाड़ों की ध्वनि उठ रही है जिसने दिग्दिगन्तर को गुँजा दिया है ?

(ठहाका मारकर)

आह ! समझ गया। मेरे विचार में मेरी उड़ान के वेग से कल्पद्रुम हिल गया है और साथ ही प्रलय की आशङ्का से सबके-सब प्रलयमेघ एक-साथ गरज उठे हैं। (२८)

जीमूतवाहन—(मन ही मन) **मेरे अहोभाग्य, मेरा मनोरथ सफल हुआ।**

गरुड़—(भार आँकते हुए)—

नाग-कुल की रक्षा करने वाला यह नाग मुझे भारी-भारी लग रहा है। इसलिये अवश्य ही यह मेरी नाग-भोजन की लालसा को आज मिटा देगा। (२६)

तो, अब मैं मलयाचल की चोटी पर बैठकर पेटभर इसे खाता हूँ।

(जीमूतवाहन को उठाकर ले जाते हुए निष्क्रमण)

चतुर्थ अङ्क समाप्त

---

neously this noise must have been caused by the Clouds of Destruction in anticipation of Dissolution. (28)

Jimutavahana—(*Aside*) Luckily, my object has been fulfilled

Garuda—(*feeling the weight*)—

As this saviour of the Nagas feels weighty, I am sure he shall slake my craving for the Naga-meal today (*for ever*). (29)

Now, I shall ascend a summit of Malaya and make a hearty meal of him.

Exit carrying JIMUTAVAHANA

END OF THE FOURTH ACT

पञ्चमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति प्रतीहारः)

प्रतीहारः—

स्वगृहोद्यानगतेऽपि स्निग्धे पापं विशङ्कयते स्नेहात् ।
किमु दृष्ट-बह्वपाय-प्रतिभय-कान्तार-मध्य-स्थे ॥१॥

तथा हि,—जलनिधिवेलावलोकनकुतूहली निष्क्रान्तः कुमारो जीमूतवाहनश्चिरयतीति दुःखमास्ते महाराजो विश्वावसुः । समादिष्टश्चास्मि तेन, यथा—"सुनन्द, श्रुतं मया सन्निहितगरुडप्रतिभयमुद्देशं गतो जामाता जीमूतवाहनस्तत्र चिरयतीति शङ्कित इवास्म्यनेन वृत्तान्तेन । त्वरिततरं विदित्वागच्छ—किमसौ स्वगृहं गतो वा न वेति" । तद् यावत् तत्रैव गच्छामि । (परिक्रामन्, अग्रतो दृष्ट्वा) अये! अयमसौ जीमूतवाहनस्य पिता जीमूतकेतुरुटजाङ्गणे सहधर्मचारिण्या वध्वा मलयवत्या पर्युपास्यमानस्तिष्ठति । तथा हि,—

क्षौमे भङ्गवती तरङ्गितदशे फेनाम्बुतुल्ये वहन्
जाह्नव्येव विराजितः सवयसा देव्या महापुण्यया ।
धत्ते तोयनिधेरयं सुसदृशीं जीमूतकेतुः श्रियं
यस्यैषान्तिकवर्तिनी मलयवत्याभाति वेला यथा ॥२॥

तदुपसर्पामि ।

(ततः प्रविशत्यासनस्थः पत्नीवधूसमेतो जीमूतकेतुः)

FIFTH ACT

(*Enter* PORTER)

Porter—

Even when a dear one is gone only to the kitchen-garden, affection fills the heart with misgivings, how much more would it do so when he is away somewhere in a dreadful forest infested with many dangers. (*1*)

Even so, His Majesty Visvavasu is feeling ill at ease at the delay the Prince Jimutavahana is making in returning from the seaside where he had gone out of curiosity to see the tide. His Majesty has bid me saying, "Sunanda, the report that dear Jimutavahana, my son-in-law, is gone to that notorious place haunted by Garuda and is delaying to come back, has made me apprehensive. Therefore, hie ye post-haste and being me the news whether he has returned home or not." Accordingly, I am going thither. (*Walking about, looking ahead*) Oh, there is Jimuta-

पञ्चम अङ्क

(प्रतीहार का प्रवेश)

प्रतीहार—

जिससे स्नेह हो, चाहे वह घर के उद्यान में ही गया हो तो भी स्नेह के **कारण उसके** *विषय में अनिष्ट की शङ्का बनी रहती है। फिर यदि वह संकटों से भरे अत एव भयावह जंगल में चला गया हो तब तो कहना ही क्या? (१)*

क्योंकि—समुद्र की ज्वार को देखने के कुतूहल से निकला हुआ जीमूतवाहन आने में विलम्ब कर रहा है इस कारण महाराज विश्ववसु बेचैन बैठे हैं। मुझे उन्होंने आज्ञा दी है कि—"सुनन्द, मैंने सुना है कि जँवाई जीमूतवाहन उसी स्थान पर गया हुआ है जो कि गरुड़ के संपात के कारण भयानक है। उसे आने में देर हो रही है इसलिये मैं इस समाचार से चिन्तित हूँ। तू जितनी जल्दी हो सके पता लेकर आ कि वह अभी (लौटकर) अपने घर पहुँचा है कि नहीं।" सो, मैं उधर जाता हूँ। (जाते हुए, सामने देखकर) अरे, जीमूतवाहन के पिता जीमूतकेतु तो वह कुटी के आङ्गन में बैठे हैं और उनकी धर्म-पत्नी तथा पुत्रवधू मलयवती उनकी परिचर्या में लगी हुई हैं। क्योंकि,—

फेनिल जल के समान श्वेत, लहरिये किनारे वाले और सिलवट पड़े रेशमी वस्त्र युगल को धारण किये, जीमूतकेतु की शोभा फेनिल, तरङ्गाकुल और भङ्गिमा-पूर्ण समुद्र की-सी बन पड़ती है। संग में उन्हींके सम-वयस्क पुण्य-शील धर्मपत्नी पावन गङ्गा के समान विराजमान है। और पास ही बैठी मलयवती मलयाद्रि को सहलाती हुई वेला सी प्रतीत हो रही है। (२)

चलूँ, उनके पास पहुँचूँ।

(आसन पर विराजमान जीमूतकेतु का पत्नी तथा पुत्रवधू सहित प्रवेश)

---

ketu, the father of Prince Jimutavahana, sitting in the coutryard of his cottage and being attended upon by his wife and his daughter-in-law Malayavati. There,—

Wearing a white pair of silken shawls, frilled at the border, and falling in folds, and accompanied by his highly virtuous wife, as old as himself, and with Malayavati sitting by his side, Jimutaketu presents the grandeur of the ocean with its surface ruffled by the waves bearing foam on their crests, sanctified by its union with the holy Ganges, as ancient as itself, and with its water touching the Malaya coast. (2)

Let me approach him.

[*Enter* JIMUTAKETU *seated, with wife and daughter-in-law*]

जीमूतकेतुः—

भुक्तानि यौवनसुखानि यशो विकीर्णं
राज्ये स्थितं स्थिरधिया चरितं तपोऽपि ।
श्लाघ्यः सुतः सुसदृशान्वयजा स्नुषेयं
चिन्त्यो मया ननु कृतार्थतयाऽद्य मृत्युः ॥३॥

प्रतीहारः—(सहसोपसृत्य) जीमूतवाहनस्य...

जीमूतकेतुः—(कर्णौ पिधाय) शान्तं, शान्तं पापम् ।

देवी—पडिहदं क्खु अमंगलवअणं ।

प्रतिहतं खल्वमङ्गलवचनम् ।

मलयवती—इमिणा दुण्णिमित्तेण वेवदि विअ मे हिअअं ।

अनेन दुर्निमित्तेन वेपत इव मे हृदयम् ।

जीमूतकेतुः—भद्र, किं जीमूतवाहनस्य ?

प्रतीहारः—जीमूतवाहनस्य वार्तामन्वेष्टुं महाराजविश्वावसुना युष्मदन्तिकं प्रेषितोऽस्मि । तदाज्ञापयतु महाराजः किं मया स्वामिनो विज्ञापनीयमिति ?

जीमूतकेतुः—किमसन्निहितस्तत्रापि मे वत्सः ?

देवी—(सविषादम्) महाराअ, जइ तहिं पि णत्थि, ता कहिं दाणिं गओ मे पुत्तओ, जेण एव्वं चिराअदि ?

(सविषादम्) महाराज, यदि तत्रापि नास्ति, तत् क्वेदानीं गतो मम पुत्रको, येनैवं चिरयति ?

जीमूतकेतुः—नियतमस्मत्प्राणयात्रार्थं दूरं गतो भविष्यति ।

मलयवती—(सविषादम्, आत्मागतम्) अहं पुण मुहुत्तअं पि अज्जउत्तं अपेक्खन्ती अण्णं एव्व किं वि आसंकामि ।

(सविषादम्, आत्मगतम्) अहं पुनर् मुहूर्तकमप्यार्यपुत्रमपश्यन्त्यन्यदेव किमप्याशङ्के ।

Jimutaketu—

I have had my fill of youth's pleasures, my fame has spread far and wide, I have ruled over a kingdom without losing my head, I have also performed penance, I have a worthy son, and this daughter-in-law of mine also comes of an equally high family. Having thus lived a full life, I have no other care than to think of death— (3)

जीमूतकेतु—

यौवन के सुख-भोग मैं लूट चुका हूँ, मेरी कीर्ति फैल चुकी है। राज की बागडोर भी अविचलित भाव से सँभाली, और तपस्या भी कर ली। पुत्र स्वयं यशस्वी है और यह पुत्रवधू भी अनुरूप कुल की है। इस प्रकार जीवन की सर्वतो-मुखी सफलता के अनन्तर अब मुझे मृत्यु का ही ध्यान करना चाहिये। (३)

प्रतीहार—(एकाएक पास आकर) जीमूतवाहन की—

जीमूतकेतु—(कान मूँदकर) शिव, शिव, शिव ! ऐसे अनिष्ट की शान्ति हो !

देवी—यह अमङ्गल बात दूर हो !

मलयवती—इस अपशकुन ने तो मानो मेरे हृदय को ही दहला दिया।

जीमूतकेतु—हाँ भई, 'जीमूतवाहन की' क्या कहने लगे थे ?

प्रतीहार—जीमूतवाहन की सूचना लेने मुझे महाराज विश्वावसु ने आपके पास भेजा है। सो, आज्ञा कीजिये महाराज, मैं स्वामी से जाकर क्या निवेदन करूँ ?

जीमूतकेतु—क्या ! बेटा जीमूतवाहन वहाँ भी नहीं है ?

देवी—(शोकाकुलता से) महाराज, यदि वहाँ भी नहीं है तो मेरा बेटा है कहाँ, जो इतनी देर कर रहा है ?

जीमूतकेतु—हमारे खान-पान के लिये ही कुछ जुटाने दूर निकल गया होगा।

मलयवती—(आतुर भाव से, मन-ही-मन) मैं तो क्षणभर भी यदि उनको न देख पाऊँ तो मन में कुछ और ही आशङ्का उठने लगती है।

Porter—(*Approaching suddenly*) Of Jimutavahana.

Jimutaketu—(*Stopping his ears*) God forbid !

Old Queen—May the evil word be averted !

Malayavati—This bad omen makes my heart almost tremble.

Jimutaketu—Good man, what of Jimutavahana ?

Porter—Of Jimutavahana I have to bear the news from you, for which purpose, I have been sent here by His Majesty Visvavasu. Your Majesty may, therefore, please command me what I should convey to my master.

Jimutaketu—What ! is my son not even there ?

Old Queen—(*Shocked*) My lord, if he is not even there, where could my child have gone, that he should be tarrying so long ?

Jimutaketu He must have strayed far in search of provisions for us.

Malayavati—(*Dejectedly, aside*) I, for my part, not seeing my Lord even for a moment, begin to have serious misgivings.

प्रतीहारः—आज्ञापयतु किं मया स्वामिनो विज्ञापनीयम् ?

जीमूतकेतुः—(वामाक्षिस्पन्दनं सूचयन्) जीमूतवाहनश्चिरयतीति मय्याकुले विचिन्तयति—

स्फुरसि किमदक्षिणेक्षण मुहुर्मुहुः कथयितुं ममानिष्टम् ?
हतचक्षुरपहतं ते स्फुरितं, मम पुत्रकः कुशली ॥४॥

(ऊर्ध्वं पश्यन्) अयमेव मे भुवनैकचक्षुर्भगवान् सहस्रदीधितिः स्फुरन् जीमूतवाहनस्य श्रेयः करिष्यति। (सविस्मयम्)—

आलोक्यमानम् अतिलोचन-दुःख-दायि
रक्तच्छटा निजमरीचिरुचो विमुञ्चत्।
उत्पात - काल - तरलीकृत - तारकाभम्
एतत् पुरः पतति किं सहसा नभस्तः ॥५॥

कथं, चरणयोरेव पतितम् ?

(सर्वे निरूपयन्ति)

जीमूतकेतुः—अये! लग्नसरसमांसकेशश्चूडामणिः। कस्य पुनरयं भविष्यति ?

देवी—(सविषादम्) पुत्तअस्स विअ मे एदं चूडारअणं।

(सविषादम्) पुत्रकस्येव म एतच्चूडारत्नम्।

मलयवती—मा एवं भण।

मैवं भण।

प्रतीहारः—महाराज, मा अविज्ञायैवं विक्लवो भूः। अत्र हि,—

तार्क्ष्येण भक्ष्यमाणानां पन्नगानामनेकशः।
उल्कारूपाः पतन्त्येते शिरोमणय ईदृशाः ॥६॥

Porter—Command me, sir, as to what I am to convey to my master.

Jimutaketu—(*Indicating thrnaobbing of the left eye*) While I am worried over why Jimutavaha is delaying,—

Why dost thou, O left eye, throb again and again foreboding ill to me. Devil take thy throbbing, wretched eye, may my child be safe ! (4)

(*Looking upwards*) That venerable god, the yon Sun, who is the eye of the world, shall see to the welfare of Jimutavahana with the flash of his light. (*With a start*)—

What is it that is falling so rapidly from the sky, dripping

प्रतीहार—हाँ, तो आज्ञा कीजिये, मैं अपने स्वामी से जाकर क्या निवेदन करूँ ?

जीमूतकेतु—(बाईं आँख का फरकना सूचित करके) इधर जीमूतवाहन आने में देर कर रहा है इससे मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है और उधर,—

हे बाईं आँख, तू क्यों किसी अनिष्ट की सूचना देने को बार-बार फरक रही है ? अरी निगोड़ी, चूल्हे में जाए तेरा फरकना, मेरा पुत्र कुशल से हो ! (४)

(ऊपर की ओर देखते हुए) सकल विश्व के एकमात्र पथदर्शक (चक्षु) भगवान् सूर्य ही अपनी फरकती ज्योति से मेरे पुत्र का कल्याण करेंगे। (चकित भाव से)—

अरे, यह क्या वस्तु है जो अपनी ही अरुण किरणों के समान रक्त की बूँदे टपकाती, और देखने वाले की आँखों को कष्ट पहुँचाती, आकाश से अकस्मात् गिरती हुई चली आ रही है—मानों उत्पात के समय नेत्रों को चकाचौंध कर देने वाला कोई धूमकेतु द्रवीभूत (अथवा अपने स्थान से च्युत) होकर अपनी किरणें फैलाता हुआ नीचे गिर रहा हो ! (५)

यह क्या ? यह तो मेरे पाओं में ही आ गिरी !

(सभी देखने लगते हैं)

जीमूतकेतु—अरे ? यह तो रक्त, माँस और केशों से लिप्त किसीकी मुकुट-मणि है। पर यह होगी किसकी ?

देवी—(शोकाकुल भाव से) यह चूड़ामणि तो मेरे बेटे की-सी लगती है।

मलयवती—ऐसा मत कहो, माँ जी।

प्रतीहार—महाराज, बिना पहचाने ही व्याकुल न होइये क्योंकि,—

गरुड़ का भोजन बनने वाले नागों की ऐसी उल्का-सी अनेकों मुकुट-मणियाँ यहाँ तो आए दिन गिरती रहती हैं। (६)

---

blood and blinding the sight like a molten meteor at the time of Destruction, dazzling the eyes of the spectator and leaving behind a red trail of light. (5)

Oh, it has fallen at my feet !

[*All stare at it*]

Jimutaketu—Look ! it is a crown to which fresh bits of flesh and hair are sticking. Whose possibly could it be ?

Old Queen—(*Sadly*) This jewelled crown looks like that of my child !

Malayavati—Don't say so, mother.

Porter—Your Majesty, don't be despondent without knowing it for certain. For,—

Such crowns, belonging to the Nagas assigned for Garuda's food, falling down like meteors, are a matter of daily phenomenon here. (6)

जीमूतकेतुः—देवि, सोपपत्तिकमभिहितमनेन। कदाचिदेवमपि स्यात्।

देवी—सुणन्द, अवि णाम कदाइ एत्तिआए वेलाए ससुरउलं एव्व गदो मे पुत्तओ भविस्सदि। ता गच्छ, जाणिअ लहुं एव्व अह्माणं णिवेदेहि।

सुनन्द, अपि नाम कदाचिदेतावत्या वेलया श्वशुरकुलमेव गतो मे पुत्रको भविष्यति। तद् गच्छ, ज्ञात्वा लघ्वेवास्माकं निवेदय।

प्रतीहारः—यदाज्ञापयति देवी। (निष्क्रान्तः)

जीमूतकेतुः—देवि, अपि नाम नागचूडामणिरयं भवेत्!

(ततः प्रविशति रक्तवस्त्रसंवीतः शङ्खचूडः)

शङ्खचूडः—(सास्रम्) कष्टं भोः! कष्टम्!—

गोकर्णम् अर्णव-तटे त्वरितं प्रणम्य
प्राप्तो ऽस्मि तां खलु भुजङ्गमवध्यभूमिम्।
आदाय तं नख-मुख-क्षत-वक्षसं च
विद्याधरं गगनम् उत्पतितो गरुत्मान् ॥७॥

हा निष्कारणैकबान्धव! हा परमकारुणिक! हा परदुःखदुःखित! क्व नु खलु गतो ऽसि? प्रयच्छ मे प्रतिवचनम्। हा शङ्खचूड हतक! किं त्वया कृतम्?

नाहित्राणात् कीर्तिर् एका मयाप्ता
नापि श्लाघ्या स्वामिनो ऽनुष्ठिताज्ञा।
दत्त्वात्मानं रक्षितो ऽन्येन शोच्यो
हा धिक् कष्टं! वञ्चितो, वञ्चितो ऽस्मि ॥८॥

तन्नाहमेवंविधः क्षणमपि जीवन्नपहास्यमात्मानं करोमि। यावदेनमनुगन्तुं प्रयतिष्ये। (परिक्रामन्, भूमौ दत्तदृष्टिः)—

Jimutaketu—Queen, what he says, is sensible. It is quite possible.

Old Queen—Sunanda, I presume that by this late hour my child may have arrived at his in-laws. Therefore, go, and without wasting a moment bring us the happy news.

Porter—As Her Majesty Commands.

[*Exit*]

Jimulaketu—Queen, supposing it is the crown of a Naga ?

[*Enter* SANKHACHUDA *wrapped in red clothes*]

Sankhachuda—(*In tears*) Alas, alas !—

जीमूतकेतु—देवि, बात तो इसने युक्ति-संगत कही है। संभव है ऐसा ही हो।

देवी—सुनन्द, कहीं इसी बीच में मेरा बेटा अपने सुसराल में ही न आ गया हो। इसलिये तू जा, पता करके शीघ्र ही आकर हमें बता।

प्रतीहार—जो आज्ञा, महारानी जी। (निष्क्रमण)

जीमूतकेतु—देवि, यह चूड़ामणि किसी नाग की भी हो सकती है!

(लाल-जोड़ा पहने शङ्खचूड़ का प्रवेश)

शङ्खचूड़—(आँसूभरे) हाय रे, हाय!—

समुद्र तट पर गोकर्ण महाराज को झटपट प्रणाम करके मैं नागों की वध्य-भूमि के पास पहुँचा ही था कि गरुड़ पञ्जों और चोंच से उस विद्याधर की छाती फाड़कर, उसे आकाश में ले उड़ा। (७)

हा, मेरे एकमात्र निःस्वार्थ बन्धु! हा परम दयालु! हा पर-दुःख-कातर! तू कहाँ चला गया? मुझे उत्तर तो दे। हाय रे अभागे शङ्खचूड़! तूने क्या कर डाला?—

न ही किसी नाग की जान बचाकर मैंने कोई यश प्राप्त किया, और न ही अपने स्वामी की आज्ञा का पालन करके श्लाघा पाई। मेरी दशा सचमुच दयनीय है जो कि एक अपरिचित व्यक्ति ने अपने प्राण देकर मुझे बचाया है। मुझे धिक्कार है! मैं लुट गया, लुट गया? (८)

इस प्रकार क्षणभर भी जीकर मैं अपने-आपको घृणित उपहास का पात्र नहीं बनने दूँगा। इसलिये मैं उसका अनुसरण करने का यत्न करूँगा। (जाते हुए, भूमि पर दृष्टि डाले)—

As soon as I returned to the execution-ground of the Nagas after hurriedly making obeisance to Lord Gokarna on the beach, lo! Garuda flew away carrying that bleeding Vidyadhara, whose chest he had ripped open with his beak and talons. (7)

Oh, my only selfless friend! Oh, thou, the most merciful of all! Oh, thou who didst take others' sufferings to heart!—Where art thou gone? Vouchsafe me an answer. Ah, Sankhachuda, wretch! what hast thou done?—

Neither did I earn a good name by saving the life of a Naga, nor to my credit carry out the orders of my master. On the contrary, for having been saved by another at the cost of his own life, I have become the object of worst pity. Woe me, I am undone, I am undone! (8)

In these circumstances, I cannot stand this life of shame even for a moment. I shall therefore try to follow him. (*Walking around, staring at the ground*)—

आदावुत्पीडपृथ्वीं प्रचलपतितां स्थूलबिन्दुं ततोऽग्रे
ग्रावस्वापातशीर्णप्रसृततनुकणां कीटकीर्णां स्थलीषु ।
दुर्लक्ष्यां धातुभित्तौ घनतरुशिखरे गह्वरे स्त्यानरूपाम्
एतां तार्क्ष्यं दिदृक्षुर्निपुणमनुसरन् रक्तधारां व्रजामि ॥९॥

(परिक्रामति)

देवी—(ससाध्वसम्) महाराअ, एसो को वि परुण्णवदणो इदो एव्व तुरिअ-तुरिअं आअच्छन्तो हिअअं मे आउलीकरेदि । ता जाणीअदु दाव को एसो त्ति ।

(ससाध्वसम्) महाराज, एष कोऽपि प्ररुग्णवदन इत एव त्वरित-त्वरितमागच्छन् हृदयं मे अकुलीकरोति । तज्ज्ञायतां तावत् क एष इति ।

जीमूतकेतुः—यथाह देवी ।

शङ्खचूडः—(साक्रन्दम्) हा त्रिभुवनैकचूडामणे ! क्वासि प्रस्थितो मया द्रष्टव्यः ? मुषितोऽस्मि भोः ! मुषितोऽस्मि ।

जीमूतकेतुः—(आकर्ण्य, सहर्षम्) मुञ्च देवि, विषादम् । अस्यायं चूडामणिः, नूनं मांसलोभात् केनापि पक्षिणा मस्तिकादुत्खाय नीयमानोऽस्मिन् पतितः ।

देवी—(सहर्षं मलयवतीमालिङ्ग्य) अविहवे ! धीरा होहि । ण क्खु दे ईदिसी आइदि वेहव्वदुक्खं अणुहोदि ।

(सहर्षं मलयवतीमालिङ्ग्य) अविधवे ! धीरा भव । न खलु ते ईदृशी आकृतिर्वैधव्यदुःखमनुभवति ।

मलयवती—(सहर्षम्) अम्ब, तुह एसा आसी । (पादयोः पतति)

(सहर्षम्) अम्ब, तवैषा आशीः । (पादयोः पतति)

जीमूतकेतुः—(शङ्खचूडमुपसृत्य) वत्स, किं तव चूडामणिरपहृतः ?

Let me closely follow this trail of blood in search of Garuda—the trail which is thick at the start on account of profuse flow of blood, gradually reduced to thin drops on account of intermittent falling, then shattered to atoms by splashing on the boulders, infested with ants on the earth and hardly visible on mineral rocks and top of thick trees, and appearing clotted in pits. (9)

[*Walks about*]

Old Queen—(*With fear*) My lord, my heart sinks at the sight of that stranger who is coming hither with hurried steps and a glum look on his face. Let us enquire who he is.

Jimutaketu—As the Queen says.

Sankhachuda—(*Crying bitterly*) O thou, the one *crown* of the

गरुड़ को ढूँढने की आकांक्षा से अब मैं इस रक्त की धारा का ही ध्यान से अनुसरण करता हुआ जाऊँगा । यह रक्त-धारा आरम्भ मे अधिक स्राव के कारण स्थूल है । आगे जाकर धीरे-धीरे टपकने से मोटी-मोटी बूँदों में परिणत हो गई है । तत्पश्चात् पत्थरों पर गिरकर विशीर्ण होने से इसके छींटे दूर तक फैल गए हैं, और भूमि पर पड़ने से उसके ऊपर च्योंटियाँ इकट्ठी हो गई हैं । धातुराग की शिलाओं घने वृक्षों की चोटियों पर तो यह धारा दिखाई ही नहीं देती, और गढ़ों में जम गई है । (६)

(चलता जाता है)

देवी—(आशङ्का से) महाराज, यह कोई म्लानमुख व्यक्ति बड़ी शीघ्रता से इधर को ही आ रहा है ! इसे देखकर मेरा हृदय बैठा जा रहा है । पता तो कीजिये, यह कौन है ?

जीमूतकेतु—जैसे तुम्हारी इच्छा ।

शङ्खचूड़—(चिल्लाता हुआ) हा त्रिलोक-चूड़ामणि ! तू कहाँ चला गया ? तुझे कहाँ ढूँढू ? मैं लुट गया रे, मैं लुट गया !

जीमूतकेतु—(सुनकर, हर्ष से) देवि, शोक करना छोड़ो । इसकी है यह चूड़ामणि, जो किसी मांस-लोलुप पक्षी ने (मांस के भ्रम से) इसके सिर से झपटा मार कर ले जाते हुए यहाँ गिरा दी है ।

देवी—(हर्ष से, मलयवती को छाती से लगाकर) धीरज धरो, सुहागिनी बेटी ! तेरे जैसी मोहिनी मूरतें वैधव्य-दुःख के लिये नहीं हुआ करतीं ।

मलयवती—(हर्ष से) माँ, यह तुम्हारा आशीर्वाद है । (चरणों में गिर जाती है)

जीमूतकेतु—(शङ्खचूड़ के पास जाकर) बेटा, क्या तुम्हारी चूड़ामणि खो गई है ?

---

three worlds! Where art thou lost? Where shall I find thee? I have been reaved, I have been robbed!

Jimutaketu—(*Hearing, joyfully*) My queen, don't grieve any more. This *crown* belongs to him. It must have been plucked off by some greedy bird from his head mistaking it for a piece of flesh, and fallen here while being carried.

Old Queen—(*Embracing* MALAYAVATI *in a fit of joy*) Take heart, my girl, thou art lucky, thy husband is safe! Thine is not the age which should know of the sorrows of widowhood.

Malayavati—(*Joyfully*) Mother, I take it as your blessing.

[*Falls at her feet*]

Jimutaketu—(*Approaching* SANKHACHUDA) Child, has your crown been lost?

शङ्खचूडः—आर्य, न ममैकस्य, त्रिभुवनस्यापि ।

जीमूतकेतुः—कथमिव ?

शङ्खचूडः—दुःखातिशयाद् बाष्पोपरुध्यमानकण्ठो न शक्नोमि कथयितुम् ।

जीमूतकेतुः—(आत्मगतम्) हन्त ! हतो ऽस्मि । (प्रकाशम्)

आवेदय ममात्मीयं पुत्र दुःखं सुदुस्सहम् ।
मयि संक्रान्तमेतत् ते येन सह्यं भविष्यति ॥१२॥

शङ्खचूडः—श्रूयताम् । शङ्खचूडो नाम नागः खल्वहमाहारार्थमवसरप्राप्तो वासुकिना वैनतेयस्य प्रेषितः । किं वा विस्तरेण ? कदाचिदियं रुधिरधारापद्धतिः पांसुभिरवकीर्यमाणा दुर्लक्षतामुपयाति । तत् संक्षेपतः कथयामि ।—

विद्याधरेण केनापि करुणाविष्टचेतसा ।
मम संरक्षिताः प्राणा दत्त्वात्मानं गरुत्मते ॥११॥

जीमूतकेतुः—(सविषादम्) को ऽन्य एवं परहितव्यसनी ? ननु स्पष्टमेवोच्यतां पुत्रेण जीमूतवाहनेनेति । हा ! हतो ऽस्मि मन्दभाग्यः ।

देवि—हा पुत्तअ ! किं तुए किदम् ?
हा पुत्रक ! किं त्वया कृतम् ?

मलयवती—हा ! कहं सच्चीभूदं एव्व मे दुच्चिन्दिदम् ?
हा ! कथं सत्यीभूतमेव मे दुश्चिन्तितम् ?

(सर्वे मोहं गताः)

Sankhachuda—Father, not mine alone but of all the three worlds.

Jimutaketu—How ?

Sankhachuda—At the moment I am so much choked with grief that I cannot speak.

Jimutaketu—(*Aside*) Oh, I am ruined ! (*Aloud*)—

Tell me, my son, of thy overwhelming grief so that by-being shared with me it may become a little bearable to thee. (*10*)

Sankhachuda—Then listen. I am a Naga, named Sankhachuda, who was, when it was my turn, sent by Vasuki to Garuda for his food. But how can I go on with my story at length

शङ्खचूड़—नहीं बाबा, मेरी अकेले की ही नहीं, त्रिभुवन की।

जीमूतकेतु—कैसे ?

शङ्खचूड़—दुःख के आवेग से आँसुओं के कारण गला रुँध जाने से मैं बता नहीं सकता।

जीमूतकेतु—(मन ही मन) हाय रे, मारा गया ! (प्रकट)—

बेटा, मुझे अपना दारुण दुखड़ा तो सुनाओ ! मेरे साथ बाँट लेने से यह तेरे लिये हलका हो जाएगा। (१०)

शङ्खचूड़—सुनिये। मैं शङ्खचूड़ नाम का एक नाग हूँ। मेरी बारी आने पर वासुकि ने मुझे गरुड़ के पास भोजनार्थ भेजा था। कथा लम्बी करने से क्या लाभ ? कहीं यह लहू की धारा के चिह्न मिट्टी से ढँककर अदृश्य न हो जाएँ, इसलिये संक्षेप में ही कह दूँ।—

किसी विद्याधर ने आकर करुणा भरे हृदय से, गरुड़ को अपने प्राण अर्पण करके, मेरे प्राण बचा दिये हैं। (११)

जीमूतकेतु—(शोकाकुलता से) और भला किसे परोपकार का ऐसा व्यसन होगा ? स्पष्ट ही कह दो मेरे पुत्र जीमूतवाहन ने। हाय रे, मैं मारा गया, अभागा !

देवी—हाय बेटा ! तूने यह क्या किया ?

मलयवती—हाय रे, क्या मेरी अनिष्टाशङ्का सच होकर ही रही ?

(सब मूर्च्छित हो जाते हैं)

---

when I am afraid that this trail of blood may disappear from view under dust. To cut short—

One of the Vidhyadharas, whose heart was moved with compassion for me, offered himself to Garuda and saved my life. (11)

Jimutaketu—(*Dejectedly*) Who else (but he) could be so anxious for doing good to others ? Why not say plainly it was my son Jimutavahana who did it ? O, I'm undone ! I'm ruined !

Old Queen—O, my son! what have you done ?

Malayavati—O, that my misgivings should have thus come true !

[*All swoon*]

शङ्खचूडः—(सास्रम्) अये ! नूनम् एतौ पितरौ तस्य महासत्त्वस्य, अप्रिय-निवेदनान्मयैतामवस्थां गमितौ। अथवा, विषादृते किमन्यद् विषधरस्य मुखान्निष्क्रामति ? अहो ! प्राणप्रदस्य सदृशं प्रत्युपकृतं जीमूतवाहनस्य शङ्खचूडेन । तत् किमधुनैवात्मानं व्यापादयामि ? अथवा, समाश्वासयामि तावदेतौ । तात ! समाश्वसिहि, समाश्वसिहि । अम्ब ! समाश्वसिहि, समाश्वसिहि ।

(उभौ समाश्वसितः)

देवी—वच्छे ! उट्ठेहि, उट्ठेहि। मा रोअ। अह्मे वि किं जीमूदवाहणेण विणा जीवह्म ? ता समस्सस दाव ।

वत्से ! उत्तिष्ठोत्तिष्ठ । मा रुदिहि । वयमपि किं जीमूतवाहनेन विना जीवामः ? तत् समाश्वसिहि तावत् ।

मलयवती—(समाश्वस्य) हा अय्यउत्त ! कहिं तुवं मए पेक्खिदव्वो ?

(समाश्वस्य) हा आर्यपुत्र ! कुत्र त्वं मया प्रेक्षितव्यः ?

जीमूतकेतुः—हा वत्स, गुरुचरणशुश्रूषाभिज्ञ !—

चूडामणिं चरणयोर्मम पातयता त्वया ।
लोकान्तरगतेनापि नोज्झितो विनयक्रमः ॥१२॥

(चूडामणिं गृहीत्वा) हा वत्स ! कथमेतावन्मात्रदर्शनो ऽसि मे संवृत्तः ? (हृदये दत्त्वा) हहह !—

भक्त्या विदूर-विनतानन-न-अमौलेः
शश्वत् तव प्रणमतश्चरणौ मदीयौ ।
चूडामणिर्निकषणैर्मसृणो ऽप्ययं हि
गाढं विदारयति मे हृदयं कथं नु ॥१३॥

Sankhachuda—(*In tears*) Surely, they are the parents of that noble man, who have been reduced to this plight by my breaking the ill news to them. Or why, what else but venom can fall from the mouth of an adder ? What a befitting return has been made by Sankhachuda to Jimutavahana, the saviour of his life ! Then, should I kill myself on the spot ? No, let me first revive them. Take heart, father ! Take heart, mother !

[*Both recover consciousness*]

Old Queen—Rise up, my daughter ! rise up. Don't weep. Dost thou think we are going to live without Jimutavahana ? So, take heart for a moment and console thyself.

शङ्खचूड़—(आँसू भरकर) हो न हो, ये दोनों उसी महापुरुष के माता-पिता हैं। बुरी सूचना देकर मैंने उनकी यह दुर्दशा कर दी है। अथवा साँप के मुख से विष के अतिरिक्त और निकल ही क्या सकता है ? हाय, शङ्खचूड़ ने अपने प्राण-दाता जीमूतवाहन के उपकार का अच्छा बदला चुकाया ! तो क्या मैं इसी क्षण आत्मघात कर लूँ ? अथवा, पहले इन दोनों (वृद्धों) को सुध में ला दूँ । बाबा ! धीरज धरो, चेतना करो। अम्माँ ! धीरज धरो, उठो, सुध में आओ।

(दोनों सुध में आ जाते हैं)

देवी—उठ, बेटी, तू भी उठ। रो मत। जीमूतवाहन के बिना हम भी कैसे जी सकते हैं ? इसलिये सँभाल अपने-आपको।

मलयवती—(सुध में आकर) हा स्वामी ! तुम्हें मैं कहाँ पाऊँगी ?

जीमूतकेतु—हा पुत्र ! माता-पिता की परिचर्या के एकमात्र मर्मज्ञ,—

परलोक को सिधारते समय भी अपनी चूड़ामणि को मेरे चरणों में गिराकर तूने विनय-वृत्ति का परित्याग नहीं किया। (१२)

(चूड़ामणि को हाथ में लेकर) हाय बेटा, क्या अब तेरा यही एक चिह्न शेष रह गया है ? (छाती से लगाकर) हा !

यह चूड़ामणि जो सदा तेरे नम्रता से सिर झुकाकर भक्ति-पूर्वक प्रणाम करने से मेरे चरणों के साथ घिस-घिसकर मृदु हो चुकी थी, क्या कारण है कि आज मेरे हृदय को छलनी कर रही है ? (१३)

Malayavati—(*Reviving*) Ah, my lord ! where shall I see you again ?

Jimutaketu—Ah, son, thou who didst know how to be duteous always !—

By dropping thy crown at my feet even whilst departing to the other world, methinks, thou didst not forget thy filial duty. (12)

(*Taking the crown*) Ha, son ! this is what hath remained of thee for us to see ? (*Pressing it to heart*) Alas !—

How is it that the self same crown, which had grown smooth by rubbing against my feet as thou regularly didst with devotion bend thy head low to pay thy respects to me, should now score my heart so ruthlessly ? (13)

देवी—हा पुत्तअ जीमूदवाहण ! जस्स दे गुरुजणसुस्सूसं वज्जिअ अण्णं सुहं ण रोअदि, सो कहं दाणिं पिदरं उज्झिअ सग्गसोक्खं अणुभविदुं पत्थिदो सि ?

हा पुत्रक जीमूतवाहन ! यस्मै ते गुरुजनशुश्रूषां वर्जयित्वा ऽन्यत् सुखं न रोचते, स कथमिदानीं पितरमुज्झित्वा स्वर्गसौख्यमनुभवितुं प्रस्थितो ऽसि ?

जीमूतकेतुः—(सास्रम्) देवि, किं वयं जीमूतवाहनेन विना जीवामः, येनैवं विलपसि ?

मलयवती—(पादयोर्निपत्य, कृताञ्जलिः) ताद! देहि मे अय्यउत्तस्स चूडारअणं जेण इमं हिअए करिअ जोलणप्पवेसेण अत्तणो सन्दावं अवणेमि ।

(पादयोर्निपत्य, कृताञ्जलिः) तात ! देहि मे आर्यपुत्रस्य चूडारत्नं येनेदं हृदये कृत्वा ज्वलनप्रवेशेनात्मनः संतापमपनयामि ।

जीमूतकेतुः—(सास्रम्) पतिव्रते ! किं मामाकुलयसि? ननु सर्वेषामेवास्माकमयं निश्चयः ।

देवी—महाराअ, ता किं पडिवालीअदि ?

महाराज, तत् किं प्रतिपाल्यते ?

जीमूतकेतुः—देवि, न खलु किंचित् । किंत्वाहिताग्नेर्नान्येनाग्निना संस्कारो विहितः । तदग्निहोत्रशरणादग्नीनादायात्मानमादीपयामः ।

शङ्खचूडः—(आत्मगतम्) हा कष्टम् ! ममैकस्य पापस्यार्थे सकलमेवेदं विद्याधरकुलमुत्सन्नं भविष्यति ! तदेवं तावत् । (प्रकाशम्) तात, न खल्वनिश्चित्यैव युक्तमीदृशं साहसमनुष्ठातुम् । विचित्राणि हि विधेर्विलसितानि । कदाचित् नायं नाग इति ज्ञात्वा जीवन्तमेव जीमूतवाहनं परित्यजेन्नागशत्रुः ! तदनयैव तावद् रुधिरधारया वैनतेयमनुसरामः ।

देवी—सव्वहा देवदाणं पसादेण जीवन्तं एव्व मे पुत्तअं पेक्खिस्सं !

सर्वथा देवतानां प्रसादेन जीवन्तमेव मे पुत्रकं प्रेक्षिष्ये !

Old Queen—Ha, my child, Jimutavahana ! how is it that even thou, to whom nothing else gave so much pleasure as the service of thy elders, shouldst now have set out to enjoy the pleasures of heaven leaving thine (aged) father behind ?

Jimutaketu—(*In tears*) Queen, do you suppose we would survive without Jimutavahana that you are wailing so plaintively ?

Malayavati—(*Falling at his feet, with folded hands*) Father, hand over the crown of my lord to me so that clasping it to my heart I may enter into the funeral fire and end my pain for ever.

Jimutaketu—(*In tears*) My virtuous daughter, why dost thou

देवी—हा, बेटा जीमूतवाहन! तुझे तो गुरुजनों की सेवा-शश्रूषा को छोड़ अन्य कोई सुख रुचता ही नहीं था। सो अब क्यों तू अपने (वृद्ध) पिता को छोड़कर स्वर्ग का सुख भोगने के लिये (अकेला ही) चल दिया है ?

जीमूतकेतु—(आँसूभरे) देवि, क्या हम जीमूतवाहन के बिना जी सकते हैं, जो तू इस प्रकार विलाप कर रही है ?

मलयवती—(चरणों पर गिरती हुई, हाथ जोड़कर) पिताजी, स्वामी की यह चूड़ामणि मुझे दे दीजिये, जिससे मैं इसे हृदय से लगाकर अग्नि-प्रवेश करके अपने दुःख का अन्त कर लूँ।

जीमूतकेतु—(आँसूभरे) क्यों मुझे आकुल करती हो, सती ? हमारा तो सभी का यही निश्चय है।

देवी—महाराज, तो अब प्रतीक्षा काहे की है ?

जीमूतकेतु—देवि, किसी बात की नहीं। किन्तु आहिताग्नि मनुष्यों का दाह-संस्कार केवल यज्ञाग्नि द्वारा ही विहित है, अन्य अग्नि से नहीं। इसलिये किसी यज्ञ-शाला से अग्नि लाकर हम सब उसमें जल मरेंगे।

शङ्खचूड़—(मन ही मन) हाय री दैया, मुझ एक पापी के कारण यह सारे-का-सारा विद्याधर कुल नष्ट हो जाएगा! अच्छा, तो यूँ कहता हूँ। (प्रकट) बाबा, बिना पूरी पड़ताल किये इतना घोर कर्म करना उचित नहीं। भाग्य के खेल विचित्र होते हैं। क्या जाने गरुड़, यह जानकर कि यह तो नाग नहीं है, जीमूतवाहन को जीवित ही छोड़ दे ? तो आओ, इस रुधिर-पंक्ति का अनुसरण करते हुए गरुड़ का पता लगाएँ।

देवी—देवताओं की ऐसी कृपा हो कि मैं अपने बच्चे को सर्वथा जीता-जागता देख लूँ!

---

overwhelm me so much, with grief when all of us have made the same resolve ?

Old Queen—Then why wait, my lord ?

Jimutaketu—Not at all, Qneen. But house-holders are not enjoined to be cremated with any other than the sacrificial fire. So let us fetch fires from the sacrificial grounds and burn ourselves.

Sankhachuda—(*Aside*) Alas, for the sake of a single wretch like me, this whole Vidyadhara family would perish! Then, let me say this. (*Aloud*) Old father, it is not advisable to take such a rash step without ascertaining the facts. Strange are the ways of Fate. Quite possible that the sworn enemy of Nagas, Garuda, discovering that he is not a Naga, may let Jimutavahana go alive. So come, let us follow the track of Garuda along this very trail of blood.

Old Queen—Wholly by the grace of gods may I see my son alive!

मलयवती—(आत्मगतम्) दुल्लहं क्खु एदं मम मन्दभाआए।

(आत्मगतम्) दुर्लभं खल्वेतन्मम मन्दभाग्यायाः।

जीमूतकेतुः—वत्स, अवितथैषा भारती ते भवतु ? तथापि साग्नीनामेवास्माकं युक्तमनुसर्तुम्। तदनुसरतु भवान्। वयमप्यग्निहोत्रशरणादग्नीनादाय त्वरिततरमनुगच्छामः। (पत्नीवधूसमेतो निष्क्रान्तः)

शङ्खचूडः—तद् यावद् गरुडमनुसरामि। (चलन्, अग्रतो निर्वर्ण्य)—

कुर्वाणो रुधिरार्द्रचञ्चुकषणैर् द्रोणीरिवाद्रेस्तटीः
प्लुष्टोपान्तवनान्तरः स्वनयनज्योतिःशिखासंचयैः।
मज्जद्-वज्र-कठोर-घोर-नखर-प्रान्तावगाढावनिः
शृङ्गाग्रे मलयस्य पन्नगरिपुर् दूरादयं लक्ष्यते॥ १४॥

(ततः प्रविशत्यासनस्थः पुरःपातितजीमूतवाहनो गरुडः)

गरुडः—(आत्मगतम्) आ ! जन्मनः प्रभृति भुजङ्गपतीनश्नता मया न चेदृशमाश्चर्यं दृष्टपूर्वं, यदयं महासत्त्वो न केवलं न व्यथते, प्रहृष्ट एव दृश्यते ! तथा हि,—

ग्लानिर् नाधिकपीयमानरुधिरस्याप्यस्ति धैर्योदधेर्
मांसोत्कर्तनजा रुजोऽपि वहतः प्रीत्या प्रसन्नं मुखम्।
गात्रं यन्न विलुप्तमेष पुलकस्तत्र स्फुटो लक्ष्यते
दृष्टिर् मय्युपकारिणीव निपतत्यस्यापकारिण्यपि॥ १५॥

तत् कौतूहलमेव मे जनितमस्यानया धैर्यवृत्त्या। भवतु, न भक्षयाम्येनम्। जानामि तावत् कोऽयमिति। (अपसर्पति)

Malayavati—(*Aside*) Little hope of luck for a wretched creature like me.

Jimutaketu—Child, would these words of thine came true! Still, it is only proper that we go carrying fire along with us. So, thou follow the trail and we will be just on thy heels, bringing sacred fires from the sacrificial shed.

[*Exit with wife and daughter-in-law*]

Sankhachuda—Well, let me now follow up Garuda. (*Walking about, observing in the distance*)—

There, from this distance, can be seen Garuda, the enemy of Nagas—seated on the summit of Malaya, making saucer-like pits on the surface of the rock by rubbing on it frequently his blood-stained beak, singeing the neighbouring woods with the flames shot from his flashing eyes, and gripping vice-like the earth by digging into it the ends of his formidable and adamant-hard talons.

[*Enter* GARUDA *seated, with* JIMUTAVAHANA *laid in front*]

मलयवती--(मन ही मन) मुझ अभागिन के भला एसे भाग कहाँ ?

जीमूतकेतु—बेटा, तेरी जीभ सुलखनी हो ! फिर भी हमें यज्ञाग्नि लेकर ही उधर जाना चाहिये। इसलिये तू चल, हम भी यज्ञ-शाला से अग्नि लेकर शीघ्र ही पीछे-पीछे आते हैं।

(पत्नी तथा पुत्रवधू समेत निष्क्रमण)

शङ्खचूड—अच्छा, तब तक मैं तो गरुड़ का अनुसरण करूँ। (चलते हुए, आगे देखकर)—

लो, नागों का शत्रु गरुड़, वह मलयाद्रि की चोटी पर सामने बैठा दूर से दिखाई दे रहा है। लहू से लथपथ चोंच से रगड़-रगड़कर उसने पर्वत के तट पर गढ़ा कर दिया है। आँखों की ज्योति की ज्वालाओं से आस-पास की वनस्थली को झुलस दिया है और वज्र-कठोर और घोर नखों की नोकों को अन्दर गाड़कर भूमि को जकड़कर पकड़े हुए है। (१४)

(जीमूतवाहन को सामने गिराए यथादृष्ट बैठे गरुड़ का प्रवेश)

गरुड़—(मन ही मन) अहो, जन्म से लेकर आज तक साँपों को खाते-खाते मैंने ऐसा अचरज कभी नहीं देखा कि यह महापुरुष न केवल दुःख ही अनुभव नहीं करता किन्तु उलटा प्रसन्न दिखाई देता है ! क्योंकि,--

भला इसके धैर्य की भी कोई थाह है कि कितना ही अधिक इसका खून पी लो यह 'सी' तक नहीं करता ! मांस नोचने पर कष्ट सहन करते हुए भी इसका मुख प्रसन्नता से खिला हुआ है ! शरीर का जो भी भाग अभी खाने से बचा हुआ है, उसपर (यथापूर्व) रोमाञ्च स्पष्ट दिखाई देता है ! मैं इसका इतना अपकार कर रहा हूँ और यह मेरी ओर ऐसे देख रहा है जैसे मैं इसका कोई बड़ा उपकार कर रहा होऊँ ! (१५)

इसके धैर्य ने तो मेरे अन्दर कुतूहल उत्पन्न कर दिया है ! अच्छा, अब मैं इसे खाता नहीं, पता करता हूँ यह है कौन। (उससे परे हट जाता है)

Garuda—(*To himself*) Ah! ever since my birth, the time I began eating Nagas, I have never before come across such a wonder as this that this noble soul not only does not wince under pain but instead seems happy. For,—

Although I am sucking more and more blood out of him, this noble soul, who seems a veritable ocean of fortitude, shows no sign of wincing. His face is beaming with delight even under the excruciating pain of picking flesh ! The part of his body, which has not yet been devoured, shows visible horripilation ! And the look he casts on me is full of gratitude as if I were his benefactor rather than a wrong-doer as I actually am ! (15)

This equanimity of his has only excited my curiosity. I shall stop eating him, and find out who he is. (*Draws away*)

जीमूतवाहनः—(मांसोत्कर्तनविमुखमुपलक्ष्य)—

सिरामुखैः स्यन्दत एव रक्तम्
अद्यापि देहे मम मांसमस्ति।
तृप्तिं न पश्यामि तवेह तावत्
किं भक्षणात् त्वं विरतो गरुत्मन् ॥१६॥

गरुडः—(आत्मगतम्) अहो आश्चर्यम् ! कथमयमस्यामप्यवस्थायामेवमत्यूर्जितमभिधत्ते ? (प्रकाशम्)—

आवर्जितं मया चञ्च्वा हृदयात् तव शोणितम् ।
अनेन धैर्येण पुनस्त्वया हृदयमेव नः ॥१७॥

अतः, कस्त्वमिति श्रोतुमिच्छामि ?

जीमूतवाहनः—एवं क्षुदुपतप्तो न श्रवणयोग्यः। तत् कुरुष्व तावदस्मन्मांसशोणितेन तृप्तिम्।

शङ्खचूडः—(सहसोपसृत्य) न खलु न खलु साहसमनुष्ठेयम् ! नायं नागः। परित्यजैनम् । मां भक्षय । अहमसौ तवाहारार्थं वासुकिना प्रेषितः । (उरो ददाति)

जीमूतवाहनः—(शङ्खचूडं पश्यन्, सविषादमात्मगतम्) कष्टं ! विफलीभूतो मे मनोरथः शङ्खचूडेनागच्छता ।

गरुडः—(उभौ निरूपयन्) उभयोरपि भवतोर्वध्यचिह्नमस्त्येव। कः खलु नाग इति नावगच्छामि ।—

शङ्खचूडः—अस्थान एव ते भ्रान्तिः ।

Jimutavahana—(*Seeing him disinclined to pick flesh*)—

Blood is still running from the ends of my veins, there is yet flesh left in my body, and I don't see if you were satisfied either, why then, O Garuda, have you suddenly stopped eating ? (16)

Garuda—(*Aside*) O, wonderful, even in this plight he should be uttering such magnificent words ! (*Aloud*)—

With my beak I have only succeeded in drawing blood out of thy heart, but by this fortitude of thine thou hast drawn the very heart out of me. (17)

I am, therefore, anxious to know who thou art ?

जीमूतवाहन—(मांस नोचने से विरक्त देखकर)—

मेरी नाड़ियों के सिरे से अभी तक रुधिर बह रहा है, मेरे शरीर में अभी मांस भी शेष है, और आपकी तृप्ति हुई भी दिखाई नहीं देती। फिर, हे गरुड़! आप खाने से क्यों रुक गए हैं? (१६)

गरुड़—(मन ही मन) आश्चर्य है! इस अवस्था में भी इसके वचनों में इतनी ऊर्जस्विता है! (प्रकट)—

मैंने तो अपनी चोंच से तेरे हृदय का रक्त खींचा है पर तूने इस धैर्य से बलात् मेरे हृदय को ही खेंच लिया है। (१७)

इसलिये मैं जानना चाहता हूँ, तू है कौन?

जीमूतवाहन—भूख से इतने व्याकुल भला आप क्या सुनेंगे? पहले मेरे रक्त और मांस से अपनी तृप्ति कर लें।

शङ्खचूड—(सहसा पास जाकर) देखना, ऐसा घोर कर्म मत कर डालना! यह नाग नहीं है, इसे छोड़ दीजिये। मुझे खाइये। मैं हूँ जिसे वासुकि ने आपके आहारार्थ भेजा था। (छाती आगे करता है)

जीमूतवाहन—(शङ्खचूड को देखकर, खेद से, मन ही मन) शोक, शङ्खचूड ने आकर मेरा मनोरथ विफल कर दिया!

गरुड—(दोनों को देखते हुए) आप दोनों पर ही वध्य-चिह्न पड़े हुए हैं। मैं नहीं पहचान सकता कि कौन नाग है?

शङ्खचूड़—आपका भ्रम वृथा है। (क्योंकि,)—

Jimutavahana—You are hardly in a fit state of hearing so long as you are oppressed by hunger. So, you should first satiate yourself with my flesh and blood.

Sankhachuda—(*Approaching suddenly*) Don't pray, do not do this rash act! He is not a Naga. Leave him and eat me. It was I who was sent for thy meal by Vasuki. (*Opens his chest and offers*)

Jimutavahana—(*Seeing* SANKHACHUDA, *in dismay, aside*) Alas! the arrival of Sankhachuda has thwarted my wish.

Garuda—(*Surveying both*) Both of you are wearing the victim's token. I can't make ont as to which of you is a Naga.

Sankhachuda—Your dubiety is ill-founded. (For,)—

आस्तां स्वस्तिकलक्ष्म वक्षसि तनौ नालोक्यते कञ्चुकं
जिह्वे जल्पत एव मे न गणिते नाम त्वया द्वे अपि ।
तिस्रस् तीव्र-विषाग्नि-धूम-पटल-व्याजिह्म-रत्न-त्विषो
नैता दुःसहशोकशूत्कृतमरुत्स्फीताः फणाः पश्यसि ॥१८॥

गरुडः—(शङ्खचूडस्य फणाः पश्यन्, जीमूतवाहनं च वीक्षमाणः) कः खल्वयं मया व्यापादितः ?

शङ्खचूडः—विद्याधरराजवंशतिलको जीमूतवाहनः । कथमकारुणिकेन त्वयैतदतिनिष्ठुरमनुष्ठितम् !

गरुडः—अये ! अयमसौ विद्याधरकुमारो जीमूतवाहनः ?—

मेरौ मन्दरकन्दरासु हिमवत्सानौ महेन्द्राचले
कैलासस्य शिलातलेषु मलयप्राग्भारदेशेष्वपि ।
उद्देशेष्वपि तेषु-तेषु बहुशो यस्य श्रुतं तन्मया
लोकालोकविचारिचारणगणैरुद्गीयमानं यशः ॥ १९ ॥

सर्वथा ऽहमयशःपङ्के निमग्नो ऽस्मि !

जीमूतवाहनः—भोः फणिपते, किमेवमाविग्नो ऽसि ?

शङ्खचूडः—किमिदमस्थानमावेगस्य ? पश्य,—

स्वशरीरेण शरीरं तार्क्ष्यात् परिरक्षता मदीयमिदम् ।
युक्तं नेतुं भवता पातालतलादपि तलं माम् ॥ २० ॥

Let alone the Svastika mark on my chest, can't you see the slough on my body ? Could you not even count my two tongues while I spoke ? Don't you see these three hoods of mine which expand while I hiss with unbearable grief and whose crest-jewels have been besmirched by the cloud of smoke arising from the blaze of my venom ? (18)

Garuda—(*Looking at hoods of* SANKHACHUDA *and then at* JIMUTAVAHANA) Oh, then who is it whom I have killed ?

Sankhachuda—He is Jimutavahana, the glory of the Vidyadhara race. How merciless of thee that thou hast perpetrated so cruel a thing !

छाती पर के स्वस्तिक चिह्न को यदि रहने भी दो, तो भी क्या मेरे शरीर पर केंचुली नहीं दीखती ? क्या मेरी बोलते हुए की दो जिह्वाएँ भी आपने नहीं गिनीं ? क्या असह्य शोक की फुंकारों से फैली हुईं मेरी ये तीन फणें भी आप नहीं देखते, जिनकी मणियों की कान्ति विषाग्नि के धुएँ की लपटों से मन्द हो गई है ? (१८)

गरुड--(शङ्खचूड के फणों को और फिर जीमूतवाहन को देखता हुआ) अरे! यह कौन है जिसे मैंने मार डाला ?

शङ्खचूड--विद्याधर राजवंश के चूडामणि जीमूतवाहन। कितने निर्दयी हो जो ऐसा क्रूर कर्म कर डाला !

गरुड—अरे, क्या यह वही विद्याधरों का राजकुमार जीमूतवाहन है ?—

जिसकी कीर्ति के गीत मैंने मेरु पर, मन्दराचल की गुफाओं में, हिमालय की चोटी पर, महेन्द्र पर्वत पर, कैलास की पहाड़ियों में और मलयाचल की अधित्यकाओं पर, लोकालोक पर्वत पर (अथवा—देश-विदेश में सर्वत्र—लोक-लोकान्तरों में) भ्रमण करने वाले चारणों के मुख से अनेक वार सुने हैं ? (१९)

मैं तो सदा के लिये अपयश के कीचड़ में धँस गया।

जीमूतवाहन—हे नागराज, तुम इतना घबरा क्यों रहे हो ?

शङ्खचूड—क्या यह घबराने की बात नहीं ? देखो तो !—

क्या आपके लिये उचित था कि अपने शरीर-दान द्वारा गरुड़ से मेरे प्राण बचाकर मुझे रसातल से भी नीचे पहुँचा दो ? (२०)

Garuda—Oh, this is he, Jimutavahana, that well-known Prince of the Vidyadharas ?—

Whose praises I have often heard sung by minstrels wandering on the Lokaloka mountain (or from place to place, here, there and everywhere)—on Meru, in the caves of Mandara, on the peaks of Himalaya, on the mountain Mahendra, on the cliffs of Kailasa and even on the table lands (or tidal zones) of Malaya. (19)

I have irretrievably sunk into the mire of infamy.

Jimutavahana—O my noble Naga ! why dost thou feel so depressed ?

Sankhachuda—Is it not the occasion for feeling depressed ? Tell me,—

Did it behove thee to sink me even lower than the depths of the Netherworld by thus saving my life from Garuda by offering thine own instead ? (20)

गरुडः—अये ! करुणार्द्रचेतसा ऽनेन महात्मना ममास्यगोचरं प्राप्तस्यास्य फणिनः प्रणान् परिरक्षितुं स्वयमेवात्मा ममाहारार्थमुपनीतः। तन्महदकृत्यमिदं मया कृतम्। किं बहुना, बोधिसत्त्व एवायं मया व्यापादितः। तदस्य महतः पापस्याग्निप्रवेशादृते नान्यत् प्रायश्चित्तं पश्यामि। क्व नु खलु वाह्निमासादयामि ? (दिशः पश्यन्) अये ! अमी केचिद् गृहीताग्नय इत एवागच्छन्ति। यावदेतान् प्रतिपालयामि।

शङ्खचूडः—कुमार, पितरौ ते प्राप्तौ।

जीमूतवाहनः—(ससंभ्रमम्) शङ्खचूड, एहि। समुपविश्यानेनोत्तरीयेणाच्छादितशरीरं कृत्वा समुपस्थितो धारय माम्। अन्यथा कदाचिदीदृगवस्थं मां सहसा ऽवलोक्य अम्बा जीवितं जह्यात्।

(शङ्खचूडः पार्श्वपतितमुत्तरीयं गृहीत्वा तथा करोति)

(ततः प्रविशति पत्नीवधूसमेतो जीमूतकेतुः)

जीमूतकेतुः—(सास्रम्) हा पुत्र, जीमूतवाहन !—

आत्मीयः पर इत्ययं खलु कुतः सत्यं कृपायाः क्रमः
किं रक्षामि बहून् किमेकमिति ते चिन्ता न जाता कथम्।
तार्क्ष्यात् त्रातुमहिं स्वजीवितपरित्यागं त्वया कुर्वता
येनात्मा पितरौ वधूरिति हतं निःशेषमेतत्कुलम् ॥२१॥

देवी—(मलयवतीमुद्दिश्य) जादे, मुहुत्तअं पि दाव विरम। इमेहिं अविरदपडन्तेहिं अस्सुबिन्दूहिं दे णिव्वापीअदि अअं अग्गी।

(मलयवतीमुद्दिश्य) जाते, मुहूर्तकमपि तावद् विरम। एभिरविरलपतद्भिरश्रुबिन्दुभिस्ते निर्वाप्यते ऽयमग्निः।

(सर्वे परिक्रामन्ति)

Garuda—O, this noble man, with his heart moved by compassion, in order to save the life of a Naga who had almost fallen into my jaws, voluntarily offered himself for my meal ! Thus, I have committed a great sin. In short, I have killed the very Bodhisattva. So, of this heinous sin, I see no other expiation than plunging into the fire. But where to find fire ? (*Looking in all directions*) O, here are some people coming in this very direction and carrying fires in hand. Let me, in the meanwhile, wait for them.

Sankhachuda—Prince, your parents have come.

Jimutavahana—(*Ill at ease*) Sankhachuda, come here. Sit by me and, covering my body with this scarf, hold me up with thy support, lest my mother, seeing me in this condition, should instantly die.

गरुड—अरे, करुणा से द्रवीभूत होकर इस महात्मा ने मेरे पंजे में आए हुए इस नाग की प्राण रक्षा के लिये स्वयं अपने-आपको मेरे भोजन के लिये अर्पण कर दिया ! यह तो मैंने बड़ा अन्धेर कर डाला ! और तो और, यह वोधिसत्त्व की ही हत्या कर डाली । इस भारी पाप का प्राश्चित्त चिता-प्रवेश के अतिरिक्त मुझे और कोई नहीं दीखता । पर आग कहाँ से लाऊँ ? (इधर-उधर देखकर) अरे, ये तो कोई अग्नि लिये इधर ही चले आ रहे हैं ! तो मैं इन्हीं की प्रतीक्षा करता हूँ ।

शङ्खचूड—कुमार, आपके माता-पिता आ रहे हैं ।

जीमूतवाहन—(चौंककर) शङ्खचूड, भाई इधर आओ, और यहाँ बैठकर इस दुपट्टे से मेरे शरीर को ढँककर यहीं बैठे-बैठे मुझे (पीठ की ओर से) सहारा दिये रहो । नहीं तो कहीं मुझे इस दुरवस्था में देखते ही मेरी माँ अकस्मात् प्राण न त्याग दे ।

(शङ्खचूड पास पड़े दुपट्टे को उठाकर वैसे ही करता है)

(पत्नी और पुत्रवधू समेत जीमूतकेतु का प्रवेश)

जीमूतकेतु—(आँसू भरकर) हा बेटा, जीमूतवाहन !—

माना कि करुणा की दृष्टि में यह भेद कहाँ कि यह अपना है या पराया ? पर "मैं एक की जान बचाऊँ या अनेक की" क्या यह विचार भी तुझे न आया ? गरुड़ से एक नाग के प्राण बचाने के लिये अपने जीवन की बलि देकर तूने अपने-आपका, (वृद्ध) मात-पिता का और नववधू का—सारे कुल का ही नाश कर दिया है । (२१)

देवी—(मलयवती को लक्ष्यकरके) बेटी, क्षणभर के लिये तो चुप कर । तेरे इन निरन्तर गिरते हुए आँसुओं से यह अग्नि ही बुझी जा रही है ।

(सभी आगे बढ़ते हैं)

[SANKHACHUDA, *taking up the scarf lying beside, does so*]

[*Enter* JIMUTAKETU *with wife and daughter-in-law*]

Jimutaketu—(*In tears*) O my son, Jimutavahana !—

True, that the ways of Mercy know no distinction between one's own and a stranger. But, how is it that the question whether thou shoudst save many or only one never occured to thee ? For, by sacrificing thy own life in order to save one Naga from the clutches of Garuda, thou hast exterminated thy ownself, thy parents and thy wife—our whole family. (21)

Old Queen—(*Addressing* MALAYAVATI) My child, control thy emotion if just for a wee moment. See, hese ttears of thine, falling unremittingly, are extinguishing the fire (in thy hand),

[*All walk about*]

गरुडः—हा पुत्र जीमूतवाहनेति ब्रवीति ! व्यक्तमयमस्य पिता । अतः कृतमेतदीयेनाग्निना । अपि च न शक्नोम्यस्य पुत्रघाती लज्जया मुखं दर्शयितुम् । अथवा, किमग्निहेतोः पर्याकुलो ऽहम् ? तटस्थ एवास्मि जलनिधेः । तद् यावदिदानीं,—

ज्वालाभङ्गैस् त्रिलोकीग्रसनरसचलत्कालजिह्वाग्रकल्पैः
सर्पद्भिः सप्त सर्पिष्कणमिव कवलीकर्तुमीशे समुद्रान् ।
स्वैर् एवोत्पातवातप्रसरपटुतरैर् धुक्षिते पक्षवातैर्
अस्मिन् कल्पावसानज्वलनभयकरे बाडवाग्नौ पतामि ॥२२॥

(उत्थातुमिच्छति)

जीमूतवाहनः—भोः पतगाधिराज ! अलमनेन व्यवसायेन । नायं प्रतीकारो ऽस्य पाप्मनः ।

गरुडः—(जानुभ्यां स्थित्वा, कृताञ्जलिः) महात्मन् ! कस्तर्हि कथ्यताम् ?

जीमूतवाहनः—प्रतिपालय क्षणम् । पितरौ मे प्राप्तौ । यावदेतौ प्रणमामि ।

गरुडः—एवम् ।

जीमूतकेतुः—(दृष्ट्वा, सहर्षम्) देवि ! दिष्ट्या वर्धसे । अयमसौ वत्सो जीमूतवाहनो न केवलं ध्रियते, प्रत्युत पुरः कृताञ्जलिना शिष्येणेव गरुडेन पर्युपास्यमानस्तिष्ठति ।

देवी—महाराअ ! किदत्थह्मि । अक्खदसरीरस्स एव्व पुत्तअस्स मुहं दिट्ठं ।
महाराज ! कृतार्था ऽस्मि । अक्षतशरीरस्यैव पुत्रकस्य मुखं दृष्टम् ।

Garuda—"O my son, Jimutavahana"—so he cries ! Certainly he must be his father. Let alone his fire. I cannot even show him my face out of sheer shame of having killed his son. Or, why at all should I be worried for want of fire, when I am sitting on the sea-coast ? Now lo !—

I am going to plunge into this Submarine Fire at hand which is as terrific as the (all-enveloping) fire of Destruction which, when kindled with the blasts of air, more violent than the havoc-making gusts of the whirlwind, stirred by my wings, is capable of consuming the seven seas like a drop of ghee by means of its fast-spreading flames that are comparable to the tongues of Death lolling with tho gusto of devouring the three worlds. (22)

[*About to rise*]

Jimutavahana—O King of Birds, withhold thyself from this desperate step. This is no atonement of the sin thou hast committed.

गरुड—अरे, यह तो "हा पुत्र जीमूतवाहन" कहकर बिलख रहा है ! निःसन्देह यह इसका पिता है। तो रहने दो इसकी आग को। इसके पुत्र की हत्या से लज्जित मैं इसे क्या मुँह दिखाऊँ ? अथवा, अग्नि पाने के लिये मैं इतना व्याकुल क्यों हो रहा हूँ ? मैं समुद्र के तट पर ही तो बैठा हूँ। तो फिर अभी,—

मैं इस प्रलयाग्नि सी भयंकर बड़वाग्नि में ही कूद पड़ता हूँ जो कि उत्पातकारी बवंडर के वेग से भी अधिक प्रचण्ड मेरे अपने पंखों की पवन से संधुक्षित है और जो तीनों लोकों को हड़प करने की लालसा से लपलपाती हुई काल की जिह्वा की नोक के समान अपनी उठती हुई ज्वालाओं से सातों समुद्रों को घी की एक बूँद की न्याईं चट कर जाने में समर्थ है ! (१८)

(उठना चाहता है)

जीमूतवाहन—हे पक्षिराज, ऐसा दुःसाहस मत करो ! यह तो इस पापका कोई प्रतीकार नहीं।

गरुड—(घुटने टेककर, हाथ जोड़कर) तो और क्या है ? आप ही बताएँ महाराज !

जीमूतवाहन—क्षणभर ठहरें। मेरे माता-पिता आ रहे हैं। मैं तनिक उन्हें प्रणाम कर लूँ।

गरुड—अवश्य।

जीमूतकेतु—(देखकर, सहर्ष) देवि, धन्य भाग, तुझे बधाई हो! यह रहा बेटा जीमूतवाहन, जो केवल जीवित ही नहीं प्रत्युत स्वयं गरुड उसके संमुख शिष्यवत् हाथ जोड़े उसकी शुश्रूषा कर रहा है।

देवी—महाराज मेरा जीवन सफल हुआ जो मैंने जीते-जागते पुत्र का मुखड़ा देख लिया।

Garuda—(*Kneeling down, with folded hands*) Then what else is, pray tell me, noble sir ?

Jimutavahana—Wait for a while. My parents have arrived. Let me first pay them my respects.

Garuda—By all means.

Jimutaketu—(*Seeing, joyfully*) Congratulations, my Queen ! Here is our child Jimutavahana, who is not only alive but is being honoured by Garuda, sitting in front with hands folded like an obedient pupil.

Old Queen—My lord, I am really lucky to have been able to see the face of my child, who is hale and hearty.

मलयवती—जं सच्चं एव्व अय्यउत्तं पेक्खन्ती वि असंभावणीअं त्ति करिअ ण पत्तिआमि ।

यत्सत्यमेवार्यपुत्रं पश्यन्त्यप्यसंभावनीयमिति कृत्वा न प्रत्येमि ।

जीमूतकेतुः—(उपसृत्य) वत्स, एह्येहि । परिष्वजस्व माम् ।

(जीमूतवाहनः उत्थातुमिच्छन्, पतितोत्तरीयो मूर्च्छितः)

शङ्खचूडः—कुमार ! समाश्वसिहि, समाश्वसिहि ।

जीमूतकेतुः—हा वत्स ! कथं दृष्ट्वा ऽपि मां परित्यज्य गतो ऽसि ?

देवी—हा पुत्तअ ! कहं वाआमत्तएण वि तुए ण संभाविदह्मि ?

हा पुत्रक ! कथं वाङ्मात्रेणापि त्वया न संभाविता ऽस्मि ?

मलयवती—हा अय्यउत्त ! कहं गुरुजणो वि तुए उवेक्खिदव्वो ?

हा आर्यपुत्र ! कथं गुरुजनो ऽपि त्वयोपेक्षितव्यः ?

(मोहं गच्छन्ति)

शङ्खचूडः—हा शङ्खचूडहतक ! गर्भ एव किं न विपन्नो ऽसि, येनैवं क्षणे-क्षणे मरणाधिकं दुःखमनुभवसि ?

गरुडः—सर्वमेतन्मम नृशंसस्यासमीक्ष्यकारिताया विजृम्भितम् । तदेतदपि तावत् करोमि । (पक्षाभ्यां वीजयन्) समाश्वसिहि महात्मन्, समाश्वसिहि ।

जीमूतवाहनः—(समाश्वस्य) शङ्खचूड, समाश्वासय गुरून् ।

शङ्खचूडः—(उपसृत्य) तात ! समाश्वसिहि । अम्ब ! समाश्वसिहि । समाश्वसितो जीमूतवाहनः । किं न पश्यथ, प्रत्युत युष्मानेव समाश्वासयितुमुपविष्टस्तिष्ठति ?

(उभौ समाश्वसितः)

देवी—हा पुत्तअ ! पेक्खन्ताणं एव्व अह्माणं कदन्तहदएण अवहारीअसि !

हा पुत्रक ! प्रेक्षमाणानामेवास्माकं कृतान्तहतकेनापह्रियसे !

Malayavati—True, though I see my lord before me, I cannot believe my eyes, thinking it was impossible !

Jimutaketu—(*Approaching*) Come, my child, come and cling thee close to my heart.

[JIMUTAVAHANA *trying to rise, his scarf slips and he faints*]

Sankhachuda—Prince, hold thyself up, hold thyself up !

Jimutaketu—Ah, son ! even after seeing me thou hast gone away leaving me behind, thus ?

Old Queen—Oh, my child ! thou didst not accost me even with a word of greeting ?

Malayavati—Ha, my lord ! thou shouldst be so remiss to greet thy elders ?

[*All swoon*]

मलयवती—आर्यपुत्र को सचमुच सामने देखते हुए भी यह समझकर कि ऐसी बात असंभव है मुझे विश्वास नहीं होता।

जीमूतकेतु—(पास जाकर) आओ, बेटा, आओ, मुझे छाती से लगा लो।

(जीमूतवाहन उठना चाहता है, दुपट्टा ऊपर से गिर जाता है, वह मूर्च्छित हो जाता है)

शङ्खचूड—कुमार, सँभलो, तनिक सँभलो !

जीमूतकेतु—हा बेटा, क्या मुझे देखकर भी मुझे छोड़ चले हो ?

देवी—हाय बेटा, एक शब्द बोलकर भी तू मेरा स्वागत न कर सका ?

मलयवती—हाय स्वामी, क्या आप गुरुजनों की भी उपेक्षा करने लगे ?

(सब मूर्च्छित हो जाते हैं)

शङ्खचूड—हाय रे अधम शङ्खचूड ! तू गर्भ में ही क्यों न मर गया, जो इस प्रकार प्रतिक्षण मृत्यु से भी दारुण दुःख झेल रहा है ?

गरुड—यह सारा विपत्ति जाल मेरे जैसे नृशंस के बिना विचारे काम करने का फल है। इसलिये कम-से-कम इतना तो करूँ ही। (पंखों से हवा करते हुए) होश में आइये, महाराज, होश में आइये।

जीमूतवाहन—(होश में आकर) शङ्खचूड, तू माता-पिता को होश में ला।

शंखचूड—(पास जाकर) बाबा ! होश में आओ ! अम्माँ ! तुम भी होश सँभालो। जीमूतवाहन होश में आ चुका है। देखते नहीं, वह तो तुम्हें ही ढारस बँधाने के लिये उठ बैठा है ?

(दोनों होश में आते हैं)

देवी—हाय बेटा ! हमारे देखते-ही-देखते यह निगोड़ा यम तुझे लिये जा रहा है।

Sankhachuda—Oh, thou wretch of a Sahkhachuda ! why couldst not thou die ere thou wast born, that every moment thou hast to bear this agony worse than death ?

Garuda—All this mess is the result of thoughtlessness on my part who am so cruel. Let me do this much at least. (*Fanning with wings*) Recover thyself, my noble man, recover.

Jimutavahana—(*Recovering*) Sankhachuda, bring thou my parents back to consciousness.

Sankhachuda—Revive, old father ! revive. Revive, mother ! revive. Jimutavahana has recovered himself. Don't you see that he has sat up only to bring you back to consciousness ?

[*Both revive*]

Old Queen—O my son ! that thou shouldst be thus snatched away from us by the cursed Death before our very eyes !

जीमूतकेतुः—देवि, मैवममङ्गलं वादीः । ध्रियत एवायुष्मान् । तद् वधूस्तावदाश्वास्यताम् ।

देवी—(वस्त्रेण मुखमावृण्वती रुदत्येव) पडिहदं क्खु अमङ्गलं ! ण रोदिस्सं । जादे, समस्सस दाव । वरं एत्तिअं वेलं भत्तुणो दे मुहं दिट्ठं ।

(वस्त्रेण मुखमावृण्वती रुदत्येव) प्रतिहतं खल्वमङ्गलम् । न रोदिष्यामि । जाते, समाश्वसिहि तावत् । वरमियतीं वेलां भर्तुस्ते मुखं दृष्टम् ।

मलयवती—(समाश्वस्य) हा अय्यउत्त ! किं करोमि मन्दभाइणी ?

(समाश्वस्य) हा आर्यपुत्र ! किं करोमि मन्दभाग्या ?

देवी—(मलयवत्या मुखं पाणिना परामृज्य) वच्छे, मा एव्वं करेहि । पडिहदं खु एदं ।

(मलयवत्या मुखं पाणिना परामृज्य) वत्से, मैवं कुरु । प्रतिहतं खल्वेतत् ।

जीमूतकेतुः—(सास्रम्)—

विलुप्तशेषाङ्गतया प्रयातान् निराश्रयत्वादिव कण्ठदेशम् ।
प्राणान् वहन्तं तनयं निरीक्ष्य कथं न पापः शतधा व्रजामि ॥२३॥

मलयवती—अदिदुक्खरकारिणी क्खु अहं, जा ईदिसं पि अय्यउत्तं पेक्खन्ती अज्ज वि जीविअं ण परिच्चआमि ।

अतिदुष्करकारिणी खल्वहं, येदृशमप्यार्यपुत्रं प्रेक्षमाणा अद्यापि जीवितं न परित्यजामि ।

देवी—(जीमूतवाहनस्याङ्गानि परामृशन्ती, गरुडमुद्दिश्य) णिसंस ! कहं दाणिं तुए एदं आपूरिअमाणणवरूवजोव्वणसोहं एव्व एददवत्थं पुत्तअस्स मे सरीरं किदं ?

(जीमूतवाहनस्याङ्गानि परामृशन्ती, गरुडमुद्दिश्य) नृशंस ! कथमिदानीं त्वयैतदापूर्यमाणनवरूपयौवनशोभमेवैतदवस्थं पुत्रकस्य मे शरीरं कृतम् ?

जीमूतवाहनः—अम्ब मा, मैवम् । किमनेन कृतम् ? ननु पूर्वमप्येतदीदृशमेव परमार्थतः । पश्य,—

Jimutaketu—Queen, don't utter such ominous words. He is alive, our dear son, may he live long! You had rather look to the recovery of our daughter-in-law.

Old Queen—(*Covering her face with scarf, still weeping*) May the evil be averted! I will not weep. My Daughter! recover thyself. Better have a look at thy husband the while he is alive.

Malayavati—(*Recovering herself*) Ah, my lord! what an unlucky woman like me is to do now?

जीमूतकेतु—देवि, ऐसे अमङ्गल वाक्य मुँह से न निकालो। मेरा लाल तो अभी जीवित है, जुग-जुग जिये ! तब तक बहू की भी तो सुध लो।

देवी—(कपड़े से मुँह ढँककर, केवल रोए जाती है) अमङ्गल दूर हो ! मैं नहीं रोऊँगी। बेटी, होश में आओ तो। इन थोड़े क्षणों के लिये तो अपने स्वामी का मुख देख लो।

मलयवती—(सुध में आकर) हा स्वामी ! क्या करूँ मैं अभागिन ?

देवी—(मलयवती का मुख हाथ से पोंछकर) बेटी, ऐसे मत करो, यह अमङ्गल टल जाए !

जीमूतकेतु—(आँसू भरकर)—

शेष सब अङ्गों के नष्ट हो जाने से कोई और आश्रय न पाकर अब बेटे के प्राण गले में आ अटके हैं। इसे देखते हुए मुझ पापी के सौ टुकड़े क्यों नहीं हो जाते ? (२२)

मलयवती—मैं सचमुच बड़ी कठोर-हृदय हूँ जो स्वामी को इस दुरवस्था में देखकर भी इसी क्षण मर नहीं जाती !

देवी—(जीमूतवाहन के अङ्गों को पलोसती हुई, गरुड को लक्ष्य करके) अरे निठुर ! नवयौवन के सौन्दर्य से भरपूर मेरे पुत्र की सलोनी देह की तूने यह क्या दुर्दशा कर डाली ?

जीमूतवाहन—माँ, ऐसे मत कहो। इसने क्या किया है ? यह देह तो वास्तव में पहले ही ऐसी थी। देख,—

Old Queen—(*Wiping* MALAYAVATI's *face with her hand*) My child, don't lose heart like this. It is inauspicious.

Jimutaketu—(*In tears*)—

Seeing the life of my son come to the last gasp in the throat for lack of sustenance anywhere else, the rest of the body having been consumed away—why the wretch I do not shatter into a thousand pieces ? (23)

Malayavati—How hard-hearted indeed am I, that seeing my lord in such agony, I do not die at once.

Old Queen—(*Feeling* JIMUTAVAHANA's *limbs, addressing* GARUDA) Ah, brute ! this is how thou hast mangled the body of my son which was full of splendour of fresh youth ?

Jimutavahana—Don't say so, mother. What has he done to it ? For, it was already in fact like this before.—

मेदो ऽस्थिमज्जामांसासृक्सङ्घाते ऽस्मिन् त्वगावृते ।
शरीरनाम्नि का शोभा सदा बीभत्सदर्शने ॥२४॥

गरुडः—भो महात्मन्, नरकानलज्वालावलीढमात्मानं मन्यमानो दुःखं तिष्ठामि । तदुपदिश्यतां येन मुच्ये ऽहमस्मादेनसः ।

जीमतवाहनः—अनुजानातु मां तातः । यावदस्य पापस्य प्रतिपक्षमुपदिशामि ।

जीमूतकेतुः—वत्स, एवं क्रियताम् ।

जीमूतवाहनः—वैनतेय, श्रूयताम् ।

गरुडः—(जानुभ्यां स्थित्वा, कृताञ्जलिः) आज्ञापय ।

जीमूतवाहनः—

नित्यं प्राणातिपातात् प्रतिविरम कुरु प्राक्कृते चानुतापं
यत्नात् पुण्यप्रवाहं समुपचिनु दिशन् सर्वसत्त्वेष्वभीतिम् ।
मग्नं येनात्र नैनः फलति परिमितप्राणिहिंसात्तमेतद्
दुर्गाधापारवारेर् लवणपलमिव क्षिप्तम् अन्तर्ह्रदस्य ॥२५॥

गरुडः—

अज्ञाननिद्राशयितो भवता प्रतिबोधितः ।
सर्वप्राणिवधादेष विरतो ऽद्यप्रभृत्यहम् ॥२६॥

What beauty is there in this so-called body which is merely a lump of fat, bone, marrow, flesh and blood covered over with skin, ever so loathsome to behold ? (24)

Garuda—Noble sir, hard is my lot. I consider myself engulfed in the flames of Hell-fire. Advise me how I can absolve myself of this sin ?

Jimutavahana—Pray, father, allow me to tell him the atonement of his sin.

Jimutaketu—Do so, my child.

Jimutavahana—O Garuda, listen.

Garuda—(*Kneeling before him, with folded hands*) Bid me, Master.

शरीर क्या है—चमड़े से मँढा हुआ, चरबी, हड्डी, मज्जा, मांस, रक्त—इन्हीं घिनावनी वस्तुओं का एक पुतला ही तो है—इसमें सौन्दर्य कैसा ? (२४)

गरुड—महात्मन्, मानों नरकाग्नि की ज्वालाओं में मैं जलता हुआ बड़े दुःख में बैठा हूँ। मुझे कोई उपाय बताइये जिससे कि मैं इस पाप से मुक्त हो सकूँ।

जीमूतवाहन—पिता जी मुझे आज्ञा दें तो मैं इसे इस पाप का प्रायश्चित्त बता दूँ।

जीमूतकेतु—हाँ बेटा, बता दो।

जीमूतवाहन—गरुड, सुनो।

गरुड—(घुटने टेकते हुए, हाथ जोड़कर) आज्ञा दीजिये।

जीमूतवाहन—

इस नित्य की प्राणि-हत्या को छोड़ दो, पहिले किये पर पश्चात्ताप करो। जीवमात्र को अभय-दान करते हुए मनोयोग से इतना पुण्य संचित करो कि उसके प्रवाह में कुछ एक प्राणियों की हत्या का पाप उसी प्रकार विफल हो जाए जिस प्रकार अगाध एवं अपार सरोवर के जल में लवण की एक डली। (२५)

गरुड—

मैं अज्ञान की नींद में सो रहा था, आपने मुझे जगा दिया है। लीजिये, आज से लेकर मैंने जीवमात्र की हत्या से अपना हाथ खेंच लिया। (२६)

Jimutavahana—

Withhold thyself from this regular killing of living beings. Feel penitent for what thou hast already done. Accumulate merit with assiduity, granting security of life to all, so much so that sunk into it the sin that clings to thee on account of this small slaughter bears no bitter fruit, like unto a bit of salt thrown into a lake with fathomless and endless expanse of water. (25)

Garuda—

Roused by thee to wakefulness from the slumber of my ignorance, here I pledge myself to abstain from the killing of all life for good. (26)

संप्रति हि,—

क्वचिद् द्वीपाकारः पुलिनविपुलैर्भोगनिवहैः
कृतावर्तभ्रान्तिर् वलयितशरीरः क्वचिदपि ।
व्रजन् कूलात् कूलं क्वचिदपि च सेतुप्रतिसमः
समाजो नागानां विहरतु महोदन्वति सुखम् ॥२७॥

अपि च—

स्रस्तान् पातालग्नांस्तिमिरचयनिभान् केशहस्तान्वहन्त्यः
सिन्दूरेणेव दिग्धैः प्रथमरविकरस्पर्शताम्रैः कपोलैः ।
आयासादालसाङ्ग्यो ऽप्यविगणितरुजः कानने चन्दनानाम्
अस्मिन् गायन्तु रागादुरगयुवतयः कीर्तिमेतां तवैव॥२८॥

जीमूतवाहनः—साधु महासत्त्व, साधु । अनुमोदामहे । सर्वथा दृढसमाधानो भव । (शङ्खचूडमुद्दिश्य) स्वभवनमेव गम्यताम् ।

(शङ्खचूडो निःश्वस्याधोमुखस्तिष्ठति)

जीमूतवाहनः—(निःश्वस्य मातरं पश्यन्)—

उत्प्रेक्षमाणा त्वां तार्क्ष्यचञ्चुकोटिविपाटितम् ।
त्वद्-दुःखदुःखिता दुःखमास्ते सा जननी तव ॥२९॥

देवी—धण्णा क्खु सा, जा गरुडमुहपडिदं पि अक्खदसरीरं एव्व पुत्तअं पेक्खिस्सदि ।

धन्या खलु सा, या गरुडमुखपतितमप्यक्षतशरीरमेव पुत्रकं प्रेक्षिष्यते ।

शङ्खचूडः—अम्ब, सत्यमेवैतद् यदि कुमारः स्वस्थो भविष्यति ।

Now,—

Let the community of Nagas romp about at will in the ocean—here forming themselves into an island by spreading out their hoods like an expanse of sands, here creating the illusion of a whirlpool by coiling their bodies, and there going from one coast to the other and making a causeway as it were. (27)

And—

May the women-folk of Nagas in this grove of sandal-wood trees sing lustily the songs of thy glory, with their loosened locks of jet-black hair looking like heaped darkness and touching their heels,

अब,—

नागों की यह सम्पूर्ण जाति विशाल समुद्र में आनन्द से खेले-कूदे—जी चाहे कहीं अपने बालुकामय स्थल (बरेती) के समान विपुल फणों के समूह से द्वीप-सा रचती फिरे, कहीं कुण्डलियाँ मार-मारकर भँवर की भ्रान्ति उत्पन्न करती फिरे और कहीं एक छोर से दूसरे छोर तक जाते हुए पुल सा बाँध दे। (२७)

अपि च—

खुले और धरती तक लटकते हुए घुप अँधेरे से काले केशपाशों वाली, सूर्योदय की प्रथम किरणों के स्पर्श से मानो सौभाग्य-सिन्दूर से रञ्जित कपोलों वाली नाग युवतियाँ इस चन्दन-वन (मलय कानन) में, यात्रा-श्रम से शिथिलित अंगों की पीड़ा की उपेक्षा करती हुईं, बड़े चाव से तेरे ही इस यश का गान करें। (२८)

जीमूतवाहन—**धन्य हो, महाभाग, धन्य हो। मैं बहुत प्रसन्न हूँ। अपने निश्चय पर अटल रहना। (शङ्खकूड को लक्ष्य करके) जाओ, तुम अपने घर जाओ।**

(शङ्खचूड निःश्वास लेकर, मुँह नीचा किये खड़ा रहता है)

जीमूतवाहन—(निःश्वास लेकर माँ की ओर देखते हुए)—

यह सोचकर कि गरुड ने तीखी चोंच से तुझे चीर-फाड़ डाला होगा, तेरे दुःख से दुखी होकर तेरी माँ बुरी तरह तड़प रही होगी। (२६)

देवी—**धन्य है वह जो गरुड़ के मुँह में गए हुए अपने पुत्र को भी जीता-जागता (लौट आया) देखेगी।**

शंखचूड—**अम्माँ, यह बात तभी सत्य होगी यदि कुमार बच जाए।**

---

with their cheeks aglow with the touch of the first rays of the sun as if with a dab of vermilion, heedless of the pain of their limbs languishing from exertion. (28)

Jimutavahana—Bravo, my good man, bravo. I commend it. Now, be firm in thy resolve, ever. (*Addressing* SANKHACHUDA) And thou go to thy house.

[*Heaving a sigh* SANKHACHUDA *stands with bowed head*]

Jimutavahana—(*Sighing and looking at his mother*)—

There, thy mother must be in great anguish, every moment lamenting thy torment, thinking thee torn by this time by the sharp beak of Garuda. (29)

Old Queen—Blessed is she who would see her son return whole from out of the jaws of Garuda.

Sankhachuda—This will be true only if and when the Prince revives.

जीमूतवाहनः—(वेदनां नाटयन्) हहह ! परार्थसंपादनामृतरसास्वादाक्षिप्तत्वा-देतावतीं वेलां न विदिता संप्रति मां बाधितुमारब्धा वेदना ।

(मरणावस्थां नाटयति)

जीमूतकेतुः—(ससंभ्रमम्) हा वत्स ! किमेवं करोषि ?

देवी—हा ! किण्णु हु एदं वट्टदि ? (सोरस्ताडनम्) परित्ताअह ! परित्ताअह ! एसो मे पुत्तओ विवज्जदि !

हा ! किं नु खल्वेतद् वर्तते ? (सोरस्ताडनम्) परित्रायध्वं ! परित्रायध्वम् ! एष मे पुत्रको विपद्यते !

मलयवती—हा अय्यउत्त ! परिच्चइदुकामो विअ लक्खीअसि ।

हा आर्यपुत्र ! परित्यक्तुकाम इव लक्ष्यसे ।

जीमूतवाहनः—(अञ्जलिं कर्तुमिच्छन्) शङ्खचूड, समानय मे हस्तौ ।

शङ्खचूडः—(तथा कुर्वन्, सास्रम्) कष्टम् ! अनाथीभूतं जगत् ।

जीमूतवाहनः—(अर्धोन्मीलिताक्षः, पितरौ पश्यन्) अयं पश्चिमः प्रणामः ।—

गात्राण्यमूनि न वहन्ति विचेतनानि
श्रोत्रं स्फुटाक्षरपदा न गिरः शृणोति ।
कष्टं निमीलितमिदं सहसैव चक्षुर्
हा तात ! यान्ति विवशस्य ममासवो ऽपि ॥३०॥

अथवा, किमनेन ?—

('संरक्षता पन्नगमद्य पुण्यम्' इति पूर्वश्लोकमेव पठित्वा पतति)

देवी—हा वच्छ ! हा गुरुजणवच्छल ! हा जीमूदवाहण ! कहिं सि मए पुणो पेक्खिदव्वो ?

हा वत्स ! हा गुरुजनवत्सल ! हा जीमूतवाहन ! कुत्रासि मया पुनः प्रेक्षितव्यः ?

Jimutavahana—(*Indicating pain*) Oh, the pain—which I had not so long felt being lost in the enjoyment of the immortal joy that comes to one from the service of one's fellow beings—has now begun to afflict me. (*Shows signs of sinking*)

Jimutaketu—(*In alarm*) Oh, my child, why in such throes ?

Old Queen—Woe me, what is this ? (*Beating her breasts*) Help ! help ! here my child is dying !

Malayavati—Oh, my lord, looks, you are leaving me !

Jimutavahana—(*Trying to fold hands*) Sankhachuda, pray bring my hands together.

Sankhachuda—(*Doing so, in tears*) Oh, the world becomes orphan !

जीमूतवाहन—(वेदना का अभिनय करते हुए) हा, हा, हा ! परोपकार के अमृत रसपान में निमग्न होने के कारण मुझे अब तक पीड़ा का ज्ञान ही नहीं हो पाया था, किन्तु अब मुझे पीड़ा व्याकुल करने लगी है।

(मरणावस्था का अभिनय करता है)

जीमूतकेतु—(घबराकर) हाय बेटा ! क्यों ऐसे कर रहे हो ?

देवी—हाय ! यह क्या हो गया ? (छाती पीटकर) अरे कोई बचाओ ! कोई बचाओ ! यह मेरा बेटा मरे जा रहा है !

मलयवती—हा स्वामी—लगता है मुझे छोड़ चले !

जीमूतवाहन--(हाथ जोड़ना चाहता है) शङ्खचूड, मेरे हाथों को तो मिला दो।

शंखचूड—(हाथों को मिलाता हुआ) हाय ! आज सारा संसार ही अनाथ हो गया।

जीमूतवाहन—(अध-खुली आँखों से माता-पिता की ओर देखता हुआ) यह मेरा अन्तिम प्रणाम है।—

मेरे अंग चेतना हीन हो चुके हैं, ये अब काम नहीं करते। स्पष्ट कही हुई वाणी को भी श्रोत्र अब (पूरी तरह) नहीं सुनते। हाय ! आँखें एकाएक मुँदती जा रही हैं। हा तात ! मैं विवश हूँ, मेरे प्राण भी निकले जा रहे हैं ! (३०)

अथवा, रोने-धोने से क्या लाभ ?—(अपने शरीरदान द्वारा नाग की रक्षा करते हुए जो पुण्य मैंने आज उपार्जित किया है, उसीके फलस्वरूप मुझे जन्म-जन्मान्तर में परोपकारहित ही शरीर लाभ होता रहे। (४·२६)—इस श्लोक को पढ़ता हुआ वहीं ढेर हो जाता है)

देवी—हाय बेटा ! हाय माता-पिता के दुलारे ! हाय मेरे जीमूतवाहन ! अब तुझे फिर कहाँ देखूँगी ?

Jimutavahana—(*Looking at his parents with half-open eyes*) This is my last obeisance.—

My limbs are becoming numb and do not move, my ears fail to catch words though uttered clearly, alas ! my eyes, too, are losing their sight all at once. Ah father ! my life is departing in my utter helplessness. (30)

Or why lament it ? (*Falls down reciting a previous verse*)—

By merit that today I earn—
Save one Naga life and mine own spurn,
In every future life be't so
To serve mine fellow be'ngs, hey-ho ! (4. 26)

Old Queen—Ah, my child ! Ah thou, apple of the parents' eye ! Ah, Jimutavahana ! where shall I see thee again ?

जीमूतकेतुः—(सास्रम्) हा पुत्र जीमूतवाहन! हा प्रणयिजनवत्सल ! हा सर्वगुणनिधे! क्वासि ? प्रयच्छ मे प्रतिवचनम् । (हस्तावुत्क्षिप्य) कष्टं भोः, कष्टम् !—

निराधारं धैर्यं कमिव शरणं यातु विनयः
क्षमः क्षान्तिं वोढुं क इह विरता दानपरता ।
हतं सत्यं सत्यं व्रजतु कृपणा क्वाद्य करुणा
जगत् कृत्स्नं शून्यं त्वयि तनय ! लोकान्तरगते ॥३१॥

मलयवती—(सास्रम्) हा अय्यउत्त ! कहिं मं परिच्चइअ गदो सि ? णिग्घिणे मलअवदि ! किं एदं पेक्खिदव्वं त्ति एत्तिअं वेलं जीविदासि ?

(सास्रम्) हा आर्यपुत्र ! कुत्र मां परित्यज्य गतो ऽसि ? निर्घृणे मलयवति ! किमेतत् प्रेक्षितव्यमित्येतावतीं वेलां जीविता ऽसि ?

शङ्खचूडः—कुमार! क्व प्राणेभ्यो ऽपि वल्लभतरं परिजनं परित्यज्य गतो ऽसि ?

गरुडः—(सोद्वेगम्) हा कष्टम् ! उपरतो ऽयं महात्मा। किमिदानीं मया कर्तव्यम् ?

देवी—(सास्रमूर्ध्वं दृष्ट्वा) भअवन्तो लोअपाला! अमिदेण सिञ्चिअ पुत्तअं मे जीवावेह ।

(सास्रमूर्ध्वं दृष्ट्वा) भगवन्तो लोकपालाः ! अमृतेन सिक्त्वा पुत्रकं मे जीवयत ।

गरुडः—(सहर्षमात्मगतम्) अमृतसंकीर्तनात् साधु स्मृतम् । मन्ये प्रमृष्टमयशः। तद् यावत् त्रिदशपतिमभ्यर्थ्य तद्विसृष्टेनामृतवर्षेण न केवलं जीमूतवाहनम्, एतानपि पूर्वभक्षितानस्थिशेषानाशीविषान् प्रत्युज्जीवयामि । अथवा, न ददात्यसौ, ततो ऽहं —

Jimutaketu—(*In tears*) Ah, my son, Jimutavahana! Ah, darling of all dear ones ! Ah, thou home of all virtues ! Where art thou ? Vouchsafe me an answer ! (*Throwing up his arms in despair*) Alas, O Alas !—

Fortitude has lost its stay. Where shall Politeness find a refuge? Who is there to give prop to Forbearance? Lost is Generosity! Truthfulness is gone indeed! Where shall poor Compassion now go? The whole world has become void at thy departure, my son! (31)

Malayavati—(*In tears*) Why, my lord, have you departed, leaving me behind ? Cruel Malayavati, was it to witness this, that thou hast lived so long ?

जीमूतकेतु—(आँसू भरकर) हाय पुत्र जीमूतवाहन ! हाय सुहृज्जनों के प्यारे ! सब गुणों की खान ! तू कहाँ चला गया ? मुझे उत्तर दे। (दोनों हाथ ऊपर को फैलाते हुए) हाय रे, हाय !—

धैर्य को अब आधार कहाँ ? विनय (नम्रता) अब किसका पल्ला पकड़े ? अब क्षमा को कौन बाँह दे ? दान-शीलता संसार से उठ गई ! सत्य सचमुच लुप्त हो गया ! बेचारी करुणा कहाँ जाए ?—हे पुत्र, तेरे परलोक सिधारने से अब तो सारा संसार ही शून्य हो गया है। (३१)

मलयवती—(आँसू भरकर) हा स्वामी ! मुझे छोड़कर कहाँ चले गए ? अरी हृदय-हीन मलयवति ! क्या यही कुछ देखने के लिये तू इतनी देर जीती रही है ?

शंखचूड—कुमार, प्राणों से भी प्यारे दास को छोड़कर किधर सिधार गए हो ? शङ्खचूड तो अब अवश्य तुम्हारा ही अनुसरण करेगा।

गरुड़—हा शोक ! यह महात्मा चल बसा ! अब मुझे क्या करना चाहिये ?

देवी –(आँसूभरे, ऊपर की ओर देखकर) हे लोक के पालक देवताओ ! अमृत छिड़ककर मेरे पुत्र को जीवित कर दो।

गरुड़—(सहर्ष, मन ही मन) अमृत के कथन से अच्छा स्मरण आया। अब मेरा कलंक समझो धुल गया। तो जाकर भगवान् इन्द्र से अनुनय-विनय करके दिये हुए अमृत की वर्षा द्वारा न केवल जीमूतवाहन को, अपितु सभी पहले खाए हुए कंकाल-शेष नागों को भी जीवित कर दूँगा। और यदि वह नहीं देगा, तो मैं भी—

Sankhachuda—Prince, where have you gone leaving me, your slave, behind, whom you had treated dearer than life? This Sankhachuda must follow you.

Garuda—(*With emotion*) Ha, the noble soul is no more! What is it that I can do now ?

Old Queen—(*In tears, looking upwards*) O, Guardians of the Worlds, may you sprinkle the Water of Life and bring my child back to life!

Garuda—(*Joyfully, aside*) The mention of the Water of Life has reminded me well. My ignominy is now about washed, I believe. Now I shall go and implore Indra, the Lord of Heaven, and with the shower of the Water of Life given by him bring back to life not Jimutavahana alone but also these Nagas heretofore eaten by me and whose bones alone are now left. And if he refuses to give it, then—

पक्षोत्क्षिप्ताम्बुनाथः पटुजवपवनप्रेर्यमाणे समीरे
नेत्रार्चिःप्लोषमूर्च्छाविधुरविनिपतत्सानलद्वादशार्कः ।
चञ्च्वा संचूर्ण्य शक्राशनिधनदगदाप्रेतलोकेशदण्डान्
अन्तःसंमग्नपक्षः क्षणममृतमयीं वृष्टिमभ्युत्सृजामि ॥३२॥

तदयं गतो ऽस्मि । (निष्क्रान्तः)

जीमूतकेतुः—शङ्खचूड, किमद्यापि स्थीयते ? समाहृत्य दारूणि पुत्रस्य मे विरचय चिताम्, येन वयमप्यनेन सह गच्छामः ।

देवी—पुत्तअ संखचूड, लहु सज्जेहि । दुक्खं क्खु अह्मेहिं विणा भादुओ दे वट्टइ ।

पुत्रक शङ्खचूड, लघु सज्जय । दुःखं खल्वस्माभिर्विना भ्राता ते वर्तते ।

शङ्खचूडः—(सास्रम्) यदाज्ञापयन्ति गुरवः । ननु पुरस्सर एवाहमत्र युष्माकम् । (उत्थाय चितारचनां नाटयित्वा) तात, सज्जीकृतेयं चिता ।

जीमूतकेतुः—कष्टं भोः, कष्टम् !—

उष्णीषः स्फुट एव मूर्धनि विभात्यूर्णेयमन्तर्भ्रुवोश्
चक्षुस्तामरसानुकारि हरिणा वक्षःस्थलं स्पर्धते ।
चक्राङ्कौ चरणौ तथापि हि कथं हा वत्स मद्-दुष्कृतैस्
त्वं विद्याधरचक्रवर्तिपदवीमप्राप्य विश्राम्यसि ॥३३॥

देवि, किमिव रुद्यते ? तदुत्तिष्ठ, चितामारोहामः ।

(सर्वे परिक्रामन्ति)

Tossing aside the ocean with the flap of my wings and stirring the wind into a gale with the impetuosity of my flight, making the twelve suns and the submarine fire collapse helplessly before the blazing flash of my eyes, breaking into pieces Indra's bolt, Kubera's mace and Yama's club with my beak, and then, dipping my wings in the Water of Life, I shall rain a shower of it in a moment. (32)

Lo, I am gone! (*Exit*)

Jimutaketu—Sankhachuda, still waiting, why? Go, gather fuel and build up the pyre for my son, so that we too may be able to accompany him.

Old Queen—Sankhachuda, my child, do prepare it quickly, for your brother must be feeling uneasy without us.

अपने पंखों की मार से समुद्र को उछालकर, उड़ान के वेग से वायुमण्डल में बवण्डर लाते हुए, आँखों की ज्वालाओं की झुलसाहट से अग्नि-समेत बारह आदित्यों को मूर्छित करके गिराता हुआ, और चोंच से इन्द्र के वज्र, कुबेर की गदा, और यमराज के लोहदण्ड को चकनाचूर करता हुआ, पंखों को अमृत में डुबोकर क्षणभर के लिये अमृत की वर्षा कर दूँगा। (३२)

तो लो, मैं चला। (निष्क्रमण)

जीमूतकेतु—शङ्खचूड, अभी तक खड़े क्यों हो? लकड़ियाँ बटोरकर मेरे पुत्र के लिये चिता बनाओ, जिससे हम भी उसीके साथ-साथ जाएँ।

देवी—बेटा शङ्खचूड, शीघ्र तय्यार करो। तुम्हारा भाई हमारे बिना दुःखी होता होगा।

शंखचूड—(आँसू भरकर) जो गुरुजनों की आज्ञा। इसके लिये तो मैं आप से पहले ही उतावला हूँ। (उठकर चिता बनाने का अभिनय करके) बाबा जी, लो, यह चिता तय्यार कर दी है।

जीमूतकेतु—शोक, अहो शोक!—

मस्तक पर अभी तक (चक्रवर्तियों का सा) उष्णीष स्पष्ट शोभा देता है। भ्रुकुटियों के मध्य में ऊर्णा (रोमावली-चक्र) विद्यमान है। नेत्र कमल के समान अरुण हैं। वक्षःस्थल विष्णु (अथवा सिंह) का प्रतिस्पर्धी है। दोनों चरणों पर चक्रचिह्न दृश्यमान हैं, तथापि, हाय बेटा! मेरे पापों के कारण तू क्यों विद्याधरों के चक्रवर्ती पद को प्राप्त किये बिना ही सदा के लिये सो गया है? (३३)

देवि, रोती क्यों हो? उठो, चलो चिता पर चढ़ें।

(सब चलते हैं)

Sankhachuda—As my elders command. But I shall certainly precede you in this matter (of following him). (*Rising up and preparing the pyre*) Old father, the pyre is ready.

Jimutaketu—Alas,—

The excrescence on the head is still well marked, there is a lovely ring of hair between the brows. The eyes emulate a lotus and thechest vies with that of Vishnu (or a lion), while both the feet bear the sign of wheel. But Ah, son! why, by my sins, hast thou gone to eternal rest without attaining to the status of a Vidyadhara sovereign? (33)

Why weep, my Queen? Get up, let us ascend the pyre.

[*All walk about*]

मलयवती—(बद्धाञ्जलिरूर्ध्वं पश्यन्ती) भअवदि गौरि, तुए आणत्तं 'विज्जाहरचक्कवट्टी दे भत्ता भविस्सदि' त्ति। ता कहं मम मन्दभाआए तुमं पि अलिअवादिणी संवुत्ता ?

(बद्धाञ्जलिरूर्ध्वं पश्यन्ती) भगवति गौरि, त्वया ऽऽज्ञप्तं 'विद्याधरचक्रवर्ती ते भर्ता भविष्यति' इति। तत् कथं मम मन्दभाग्यायास्त्वमप्यलीकवादिनी संवृत्ता ?

(ततः प्रविशतिससंभ्रमा गौरी)

गौरी—महाराज जीमूतकेतो, न खलु न खलु साहसमनुष्ठेयम्।

जीमूतकेतुः—कथम् ! अमोघदर्शना भगवती गौरी ?

गौरी—(मलयवतीमुद्दिश्य) वत्से मलयवति, कथमहमलीकवादिनी ? दृश्यताम्। (जीमूतवाहनमुपसृत्य कमण्डलुवारिणाऽभ्युक्षन्ती)—

निजेन जीवितेनापि जगतामुपकारिणः।
परितुष्टा ऽस्मि ते वत्स, जीव जीमूतवाहन ॥३४॥

(जीमूतवाहन उत्तिष्ठति)

जीमूतकेतुः—(सहर्षम्) देवि ! दिष्ट्या वर्धसे। यदयमक्षतशरीरो जीमूतवाहनः समुत्थितः।

देवी—(सहर्षम्) भअवदीए पसादेण।

(सहर्षम्) भगवत्याः प्रसादेन।

(उभौ गौर्याः पादयोः पतित्वा, जीमूतवाहनमालिङ्गतः)

मलयवति—(सहर्षम्) दिट्ठिअ पच्चुज्जीविदो अय्यउत्तो।

(सहर्षम्) दिष्ट्या प्रत्युज्जीवित आर्यपुत्रः।

(गौर्याः पादयोः पतति)

Malayavati—(*With folded hands, looking upwards*) O Goddess Gauri, thou hadst commanded that my husband would be a Vidyadhara sovereign. Then how is it that in my case, accursed that I am, even thou hast proven thyself untrue ?

[*Enter* GAURI *in haste*]

Gauri—King Jimutaketu, don't, don't be so rash.

Jimutaketu—Oh ! here comes the Goddess Gauri, whose holy vision is never futile ?

Gauri—(*Addressing* MALAYAVATI) Malayavati, my child, how

मलयवती—(हाथ जोड़कर, ऊपर की ओर देखती हुई) **भगवति गौरि, तूने वर दिया था 'तेरा पति विद्याधरों का चक्रवर्ती बनेगा'। तो क्योंकर मुझ अभागिन के लिये तू भी झूठी बन गई ?**

(हड़बड़ाहट में गौरी का प्रवेश)

गौरी—**महाराज जीमूतकेतो, यह अनर्थ न करना ! रुक जाओ, रुक जाओ।**

जीमूतकेतु—**अहा ! क्या अमोघ-दर्शना गौरी जी आ पहुँचीं ?**

गौरी—(मलयवती को लक्ष्य करती हुई) **पुत्रि मलयवति, मैं झूठी कैसे हो सकती हूँ ? देखो तो,** (जीमूतवाहन के पास जाकर, कमण्डलु का जल उसपर छिड़कती हुई)—

वत्स जीमूतवाहन, मैं तेरे से प्रसन्न हूँ क्योंकि तू अपने प्राण देकर भी संसार का उपकार करने वाला है। उठ, अब जीवित हो जा। (३४)

(जीमूतवाहन उठ बैठता है)

जीमूतकेतु—(हर्ष से) **देवि, सौभाग्य की बात है, बधाई हो ! जो यह जीमूतवाहन जीता-जागता उठ बैठा है।**

देवी---(सहर्ष) **भगवती की कृपा से।**

(दोनों गौरी के चरणों में गिरकर, जीमूतवाहन को छाती से लगाते हैं)

मलयवती—(सहर्ष) **मेरे धन्यभाग, स्वामी फिर से जी उठे !**

(गौरी के चरणों में गिरती है)

---

have I proven myself untrue ? Look ! (*Approachiug* JIMUTAVAHANA *and sprinkling him with water from jug*)—

I am pleased with thee Jimutavahana, my son, who art the benefactor of all that lives even at the cost of thy own life. Come thou back to life. (34)

[JIMUTAVAHANA *sits up alive*]

Jimutaketu—(*Joyfully*) Congratulations, my Queen ! For, here is Jimutavahana resurrected unharmed.

Old Queen—(*Joyfully*) By the grace of the Goddess, he is.

[*Both fall at the feet of* GAURI *and then embrace* JIMUTAVAHANA]

Malayavati—(*Cheerfully*) My good luck, my lord has come to life again.

[*Falls at the feet of* GAURI]

जीमूतवाहनः—(गौरीं दृष्ट्वा, बद्धाञ्जलिः) भगवति !—

अभिलषिताधिकवरदे, प्रणिपतितजनार्तिहारिणि, शरण्ये ।
चरणौ नमाम्यहं ते विद्याधरदेवते गौरि ॥३५॥

(पादयोः पतति)

(सर्वे ऊर्ध्वं पश्यन्ति)

जीमूतकेतुः—कथमनभ्रा वृष्टिः ! भगवति, किमेतत् ?

गौरी—महाराज, जीमूतवाहनमुज्जीवयितुमेतांश्च पूर्वभक्षितानस्थिशेषानुरगपतीन् समुपजातपश्चात्तापेन पक्षिपतिना देवलोकादियममृतवृष्टिर्निपातिता। (अङ्गुल्यग्रेण निर्दिशन्ती) किञ्च न पश्यति महाराजः ?—

संप्राप्ताखण्डदेहाः स्फुटफणमणिभिर्भासुरैरुत्तमाङ्गैर्
जिह्वाकोटिद्वयेन क्षितिममृतरसास्वादलोभाल्लिहन्तः ।
संप्रत्याबद्धवेगा मलयगिरिसरिद्वारिपूरा इवामी
वक्रैः प्रस्थानमार्गैर्विषधरपतयस्तोयराशिं विशन्ति ॥३६॥

(जीमूतवाहनमुद्दिश्य) वत्स जीमूतवाहन, त्वं जीवितमात्रदानकस्यैव न योग्यः । तदयमपरस्ते प्रसादः—

हंसांसाहत-हेम-पङ्कज-रजः-संपर्क-पङ्कोज्झितैर्
उत्पन्नैर्मम मानसादपि परं तोयैर्महापावनैः ।
स्वेच्छानिर्मितरत्नकुम्भनिहितैरेषा ऽभिषिच्य स्वयं
त्वां विद्याधरचक्रवर्तिनमहं प्रीत्या करोमि क्षणात् ॥३७॥

Jimutavahana—(*Seeing* Gauri, *folding his hands*) O Goddess !—
O thou, who bestowest more than we ask for, who removest the troubles of thy devotees, who art the sole refuge of all, Gauri, thou Goddess of Vidyadharas, I bow at thy feet. (35)

[*Falls at her feet*]

[*All look upwards*]

Jimutaketu—O, it's rain without clouds ! Goddess, what is this ?

Gauri—King, it is the rain of the Water of Life poured from Heaven by Garuda, the King of Birds, grown penitent, in order to resussitate Jimutavahana and these skeletal remains of Nagas so far eaten by him. (*Pointing with finger*) Doesn't the King behold —

These Nagas here, with their heads resplendent with lustrous

जीमूतवाहन—(गौरी को देखकर, हाथ जोड़कर) भगवति !—

हे मनोरथों से अधिक वर संप्रदान करने वाली, भक्तजनों के दुःखों को दूर करने वाली, अशरण-शरण, हे विद्याधरों की कुल-देवता, माता गौरि, मैं तेरे चरणों में नमस्कार करता हूँ। (३५)

(सब ऊपर की ओर दखते हैं)

जीमूतकेतु—अरे ! यह बिना बादलों के वर्षा कैसी ? भगवति, यह क्या बात है ?

गौरी—महाराज, जीमूतवाहन को और पूर्व-भक्षित, कंकाल-शेष नागपतियों को पुनर्जीवित करने के लिये, पश्चात्ताप करते हुए पक्षिराज गरुड़ ने देवलोक से यह अमृत की वर्षा की है। (उँगली के सिरे से निर्देश करती हुई), क्या आप देख नहीं रहे, महाराज ?—

मृत नागपतियों के शरीर फिर से पूर्णाङ्ग हो गए हैं। दीप्तिमान् शिरोमणियों से उनके मस्तक पुनरुज्ज्वल हो उठे हैं। अमृत चखने के लोभ से जिह्वा के दोनों सिरों से पृथ्वी को चाटते हुए ये नाग इस समय मलयाद्रि की आपूर्ण नदियों के वेग से आगे बढ़ते हुए, टेढ़ी-मेढ़ी गति से समुद्र में प्रविष्ट हो रहे हैं। (३६)

(जीमूतवाहन को लक्ष्य करती हुई) वत्स जीतवाहन, तू केवल जीवनमात्र के ही एक प्रतिदान का पात्र नहीं। सो तेरे लिये यह एक और वर है,—

मेरे मानस (=मानसरोवर, मन) से उत्पन्न होने पर भी हंसों के पक्षों से कम्पित स्वर्णकमलों के पराग के सम्पर्क से होने वाले कीच से रहित और अति पवित्र जलों से, जो अपनी इच्छा के अनुसार बनाए हुए रत्न-कुम्भों में रखे हुए हैं, मैं स्वयं प्रेमपूर्वक तेरा अभिषेक करके क्षणभर में तुझे विद्याधरों का चक्रवर्ती बनाए देती हूँ। (३७)

---

hood-gems, rushing to enter the ocean with full speed like the swelling streams of Malaya hills, by zig-zag paths leading to it, after having recovered their bodies intact, and licking the earth with the tips of their forked tongues through their avidity to taste the Water of Life ? (36)

(*Addressing* JIMUTAVAHANA) My child Jimutavahana, thou deservest much more than merely the restoration of thy life. So, here I grant thee another boon.—

Now, of my own accord and pleasure, do I instantly make thee the paramount sovereign of Vidyadharas by anointing thee with the most holy waters sprung from my own mind but purer than those of the Manasa lake, for they are free from the slimy sediment of the pollen of golden lotuses shaken by the wings of swans, and are stored in jars of precious stone fashioned by my will. (37)

अपि च—

अग्रेसरीभवतु काञ्चनचक्रम् एतद्
एष द्विपश्च धवलो दशनैश्चतुर्भिः ।
श्यामो हरिर्मलयवत्यपि चेत्यमूनि
रत्नानि ते समवलोकय चक्रवर्तिन् ॥३८॥

एते च मत्प्रचोदिताश्चटुलचूडामणिमरीचिरचितेन्द्रचापपङ्क्तयो भक्त्या ऽवनतपूर्वकायाः प्रणमन्ति त्वां मतङ्गदेवादयो विद्याधरपतयः । वत्स, किं ते भूयः प्रियमुपहरामि ?

जीमूतवाहनः—(जानुभ्यां स्थित्वा) प्रियकारिणि, किमतः परमपि प्रियमस्ति ?—

त्रातो ऽयं शङ्खचूडः पतगपतिमुखाद्वैनतेयो विनीतस्
तेन प्राग्भक्षिता ये विषधरपतयो जीवितास्ते ऽपि सर्वे ।
मत्प्राणाप्त्या विमुक्ता न गुरुभिरसवश्चक्रवर्तित्वमाप्तं
त्वत्तस्त्वं देवि, दृष्टा, प्रियमपरमतःप्रार्थ्यते किं मया यत् ॥३९॥

तथाप्येतावदस्तु—

(भरतवाक्यम्)

वृष्टिं हृष्टशिखण्डिताण्डवभृतः काले किरन्त्वम्बुदाः
कुर्वन्तः प्रतिरूढसन्ततहरित्सस्योत्तरीयां क्षितिम् ।
चिन्वानाः सुकृतानि वीतविपदो निर्मत्सरैर्मानसैर्
मोदन्तां घनबद्धबान्धवसुहृद्गोष्ठीप्रमोदाः प्रजाः ॥४०॥

Further,—

May this golden wheel, this white elephant with four tusks and also this sable steed (of Sun god on the Malaya hills) as well as Malayavati be thy formost insignia wherever thou go. They are thy real treasure, mayest thou have a good look at them. (32)

And look! here are all Vidyadhara chieftains, Matangadeva and others, offering thee tribute at my instance by bending their heads low in faithfulness, producing the bands of a rainbow with the flashing lustre of their crest-jewels. Tell me, my child, what other gift can I offer thee?

Jimutavahana—(*Kneeling down*) O, Bestower of favours! What other gift greater than this could be ?—

और भी—

हे चक्रवर्तिन्, देखो, ये हैं तुम्हारे रत्न—सबसे पहले तो यह लो सोने का चक्र, और फिर यह चार दाँतों वाला श्वेत हाथी, और फिर यह काला घोड़ा और मलयवती भी। (३८)

और वह देखो, मेरी प्रेरणा से ये मतङ्गदेवादि विद्याधरपति भक्तिभाव से अपने सिर (शरीर का अग्रभाग) झुकाते हुए तुझे प्रणाम कर रहे हैं। इनकी हिलती हुई चूडामणियों की झिलमिलाती किरणें इन्द्र-धनुष की रंग-बरंगी धारियों की सी शोभा दे रही हैं। पुत्र, और कौन-सी प्यारी वस्तु में तेरी भेंट करूँ?

जीमूतवाहन—(घुटने टेककर) अनुग्रह-कारिणि देवि, क्या इससे बढ़कर भी कोई और अनुग्रह हो सकता है?—

इस शङ्खचूड को गरुड़ के मुख से बचा लिया है, स्वयं गरुड़ भी सीधे रास्ते पर आ गया है, गरुड़ ने जिन नागों को अब तक खाया था वे सब पुनर्जीवित कर दिये हैं, मेरा जीवन लौट आने से मेरे माता-पिता ने प्राण-त्याग नहीं किया, तेरे अनुग्रह से चक्रवर्ती पद मिल गया है, और हे देवि, तेरे साक्षात् दर्शन भी हो गए—इससे बढ़कर और क्या प्रिय हो सकता है जिसके लिये प्रार्थना करूँ? (३९)

तथापि इतना और हो जाए—,

(भरत-वाक्य)

मेघ यथा-समय वृष्टि प्रदान करें जिसे देखकर मोर आनन्द से नृत्य करने लगें और धरती निरन्तर हरी-भरी लहलहाती खेतियोंका दुशाला ओढ़े रहे। प्रजाएँ विपद्-मुक्त होकर, निर्वैर भाव से पुण्य-संचय करती हुईं स्नेह-बन्धन में बँधी, मित्रों बान्धवों के साथ रल-मिलकर गोष्ठियों तथा आमोद-विनोद का आनन्द लूटें। (४०)

This Sankhachuda has been saved from the jaws of Garuda, and the latter, Vinata's son, has been turned humane, the Nagas here-to-fore devoured by him have all been restored to life, and, by my resurrection, my parents have been saved from putting an end to their life. I have obtained the sceptre of sovereignty from thee and we have been blessed by thy holy sight. What other boon, after all these favours, does still remain for me to ask? (39)

Nevertheless, let this much more be granted—

[*Epilogue*]

May the clouds send down timely rains stimulating the peacocks to dance mad with delight, and making the earth wear a perennial garb of luxuriant green. May the people, living righteously and freed from scourge, assembling together with their friends and kinsmen in intimate picnics and parties, rejoice with their hearts free from rancour. (40)

अपि च—

शिवमस्तु सर्वजगतां परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः ।
दोषाः प्रयान्तु नाशं सर्वत्र सुखी भवतु लोकः ॥४१॥

(निष्क्रान्ताः सर्वे)

पञ्चमोऽङ्कः

नागानन्दं समाप्तम्

And also,—

May the worlds be all blessed with luck, may the living beings

अपि च—

सारे संसार का कल्याण हो, प्राणि-जात परोपकार में रत हों, दुःख-दारिद्र्य नष्ट हों और लोक सर्वत्र सुखी रहें। (४१)

(सबका निष्क्रमण)

पञ्चम अङ्क समाप्त

नागानन्द नाटक समाप्त हुआ

---

devote themselves to doing good to others, may calamities be stamped out, and people be happy everywhere ! (41)

[*Exeunt omnes*]

END OF THE FIFTH ACT

FINIS

टिप्पण

प्रथम अङ्क

कथासार—

पितृपरम्परागत राज्य को छोड़कर जीमूतवाहन अपने वृद्ध, वानप्रस्थ माता-पिता की सेवा शुश्रूषार्थ मलयाचल पर आ बसा है। गौरी-पूजार्थ एक दिन वह अपने मित्र विदूषक के साथ मन्दिर की ओर जा रहा है कि इतने में एक दिव्य संगीत उसे बरबस अपनी ओर खींच लेता है। सिद्धराज विश्वावसु की कन्या मलयवती भगवती गौरी की आराधना में वीणा बजा रही है। मलयवती की चेटी आश्चर्य करती है कि राजकुमारी इस पत्थर की मूर्त्ति से किस वर की आस लगाए बैठी है! किन्तु नहीं, देवी ने स्वप्न में उसे वर दे दिया है कि विद्याधर चक्रवर्ती (जीमूतवाहन) तेरा पति होगा। ओट में छुपे विदूषक ने यह सुन लिया है और वह जीमूतवाहन को बलात् आगे खींचते हुए मन्दिर में पहुँच जाता है—"चलो, हमारा भी देवी दर्शन का अवसर आ पहुँचा।" "देवि, भगवती ने तुम्हें यही वर दिया है ?"

दोनोंकी आँखें चार होती हैं। उधर मध्यन्दिन सवन की वेला निकलती जा रही है। एक तापस आकर मलयवती को बुला ले जाता है।

पृष्ठ २ : श्लोक १, २.—

यह 'देवद्विज-नृपादीनां' स्तुति हो रही है कि भूमि-स्पर्श मुद्रा में आकुल भगवान् बुद्ध की व्याज-स्तुति हो रही है ? नान्दी में कटाक्ष के वार करना हर्ष की शैली की विशिष्टता है। ध्वनिरूपेण यह कटाक्ष वानप्रस्थ युवा, बोधि-सत्त्वांश-संभव जीमूतवाहन पर भी उसी तीक्ष्णता से पड़ते हैं। नागानन्द का नाटक-रस न शृङ्गार है, न दान-वीर। उसमें करुण-रस के दोनों पार्श्व—भगवान् बुद्ध के बोधावस्था से पूर्व मानवरूप में, तथा बोध के अनन्तर अतिमानव कारुणिकता के रूप में उपस्थित किये गए हैं। इसी प्रकार मलयवती के परिणय से पूर्व जीमूतवाहन की करुणा (पञ्चबाणाहत मलयवती पर) बोधिसत्त्व की करुणा है, और विवाह के उपरान्त शङ्खचूड़ नाग के व्याज से संपूर्ण नाग-जाति को गरुड़ की विपत्ति से मुक्त कराने में उसी करुणा का द्वितीय रूप नाटक की मुख्य कथावस्तु है। नान्दी के प्रथम श्लोक में मार-विजय से पूर्व बुद्ध पर कटाक्ष है और दूसरे श्लोक में बुद्ध मार पर विजय पा चुके हैं।

हर्ष की इस नान्दी-कटाक्ष की शैली को परवर्ती नाटककार विशाखदत्त, आदि

ने भी अपनाया। (देखो भूमिका—श्रीहर्ष-आलोचना; आभार, पृ० *xlv*, ख)।

श्लोक १—

ध्यानम् एव व्याजः—ध्यान-व्याजः, तम् उपेत्य, ध्यान का छल करके। अनङ्गस्य शरैः आतुरम्=कामदेव के बाणों से व्याकुल। जनम् इमम्=अर्थात् मुझे। मिथ्या एव कारुणिकः=झूठमूठ के ही दयालु। कारुणिकः=करुणा+ताच्छील्ये ठक् (इक)। निर्घृणतरः—निर्गता घृणा (दया) यस्मात्, अतिशयेन निर्घृणः। मारस्य (कामस्य) वधूभिः (दूतीभिः, सहकारिणीभिरप्सरोभिर्वा)=कामदेव की भेजी हुई दूतियों अथवा अप्सराओं से। बोधौ=विशुद्ध-विज्ञान-संताने, समाधौ वा (स्थितः)= ध्यान में लीन। जिनः—'मारजित्, लोकजित् जिनः' इत्यमरः, 'जेता' इत्यर्थः, अन्यथा जानातीति जिनः, तथागतो बुद्ध इत्यर्थः। कहीं 'बुद्धो जिनः' पाठ भी है। वृत्तं 'शार्दूल-विक्रीडितम्'। 'व्याज' पद के प्रयोग से 'अपह्नुति' अलंकार है। त्राता ऽपि नो रक्षसि में 'विरोध' अलंकार है।

नीचे से ६वीं पंक्ति—*semblence* के स्थान पर *semblance* पढ़ें।

ललितविस्तर आदि बौद्ध ग्रन्थों में कथा आती है कि पूर्व काल में देवराज इन्द्र ने समाधिस्थ भगवान् बुद्ध की समाधि भङ्ग करने के लिये कामदेव को भेजा, जिसने अनुपम सुन्दरी पाँच अप्सराओं द्वारा उन्हें तपोभ्रष्ट करने की चेष्टा की। किन्तु भगवान् बुद्ध पर उन अप्सराओं के रूप और हाव-भाव का तनिक भी प्रभाव न पड़ा। यह घटना भगवान् बुद्ध की 'मार-विजय' के नाम से प्रसिद्ध है और बौद्ध मूर्त्ति तथा चित्र कला का लोक-प्रिय विषय है।

श्लोक २—

हत-पटु-पटहावल्गिभिः—हताः पटवः (तीव्रध्वनयः) पटहाः (भेरयः) यैः, तादृशैः आवल्गिभिश्च (बहुव्रीहिणा सह कर्मधारयः)=ज़ोर से नगाड़े पीटते और नाचते हुए। भ्रुवोर्भङ्गेन, उत्कम्पेन, जृम्भया, स्मितेन च ललितवान् (मृदुपद-विन्यास-भुजलतान्दोलनादि-शृङ्गार-चेष्टितानि कुर्वन्) यो नारी-जनस्तेन। 'ललितवता' के स्थान पर कहीं 'चलितदृशा' पाठ मिलता है। वहाँ 'भ्रूभङ्गादिभिः कामविकारैश्चलिते दृशौ यस्य तादृशेन' अर्थ लगाना चाहिये। प्रह्वाणि (आदरेण नतानि) उत्तमानि अङ्गानि (शिरांसि) येषां तादृशैः। स्रग्धरा-वृत्तम्। धैर्य-च्युति का हेतु होते हुए भी उसका अभाव दर्शाने से 'विशेषोक्ति' अलंकार है—'सति हेतौ फलाभावे विशेषोक्तिर्निगद्यते'।

पृष्ठ ४—

इन्द्रोत्सवे—प्रतिवत्सरं वर्षादिसिद्ध्यर्थं वेणुमयमिन्द्रध्वजमुत्थाप्य क्रियमाण उत्सवे। *Cf*. 'पुरुहूतध्वजस्येव तस्योन्नयनपंक्तयः' (रघु० ४. ३)। पाद एव पद्मं,

तद् उपजीव्यति (तदाश्रित्य निरापदं स्वं-स्वं राज्समुपभुङ्क्ते) इति नृपानुचरभूतेन। नट इव आचरति इति नाटयति(°ते); नाम-धातु नाटय+(इट्)+तव्य।

नेपथ्य-रचना=पात्रानुरूपी वेषादिविन्यासः। आवर्जितानि=Won over.

श्लोक ३—

हारि—मनोहारि।

संगीतकम्='नृत्य-वादित्र-गीतानि संगीतकमिहोच्यते'। नेपथ्याभिमुखमवलोक्य, नेपथ्यं नाम नटादीनां 'वेषभूषा-परिधान-स्थानम्'।

श्लोक ४—

परपुरुष एव चन्द्रः, तं प्रति कमलिनी (न तु कुमुदिनी)—यथा उद्गते चन्द्रे कमलिनी संकोचमुपैति तद्वत् परपुरुषमवलोक्य निसर्गेण ह्रीशीला (गृहिणी)। Although the *Natas* are notorious for their being जायोपजीविनः which fact would require their wives to be परपुरुषचन्द्रकुमुदिन्यः *i. e.* beaming at the sight of strangers, yet *Cf.* कथासरित्सागर—

निनाय च निशामिन्दु-विषमाम् अब्जिनीव ताम्।
बद्धमोहालिपटले हृदि संकोचमेत्य सा॥ (९०. ६५)

Accordingly परपुरुषचन्द्रकमलिनी means °चन्द्र-विषमा-कमलिनी (मध्यमपदलोपी समासः)।

पृष्ठ ६—

अज्जुका—morther-in-law, *Cf.* आर्यपुत्र=husband. The Prakrit word seems to have been taken over without Sanskritization (आर्यमातृका)। हृदये आरोप्य=believing (in their mind).

श्लोक ५—Read शुश्रूषा for शुश्रषा।

शुश्रूषा=श्रोतुमिच्छा, सेवाभावः। The same became सेवाधर्म as the characteristic of a शूद्र in accordance with मनु°—

एकमेव तु शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्।
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया॥

श्लोक ६—

न हि मे ध्वंसीति न प्रत्ययः—संभाव्य-निषेध-निवर्तने हि द्वौ प्रतिषेधौ इति वामनः। स्मृति-निश्चय-सिद्ध्यर्थेषु नञ्-द्वय-प्रयोगः, *Cf.* 'न पुनरलङ्कारश्रियं न पुष्यति'। कृत्याकृत्यविचारणासु, *Cf.* 'किं कर्म किमकर्मेति कवयो ऽप्यत्र मोहिताः' (गीता)। इन्द्रिय-वशं प्रीत्यै के स्थान पर ईप्सितफलप्राप्त्यै पाठभेद भी मिलता है।

पृष्ठ ७—

पंक्ति १८—*Read* युवावस्था *for* युवास्था ।

पृष्ठ ८—

पंक्ति ३—*Read* णिअत्तिअ *for* निव्वत्तिअ ।

पंक्ति ६—*Read* सखे *for* सख ।

निर्विण्णः—निः+√विद्+क्त=ऊबा हुआ । जीवन्तौ एव मृतौ, तयोः । निर्बन्धात्=अभिनिवेशात् । इच्छायाः परिभोगेण (पूर्ण-भोगेन) रमणीयम् ।

श्लोक ७—

संवाहयतः—चतुर्थ्यर्थे षष्ठी अथवा संवाहयतो जनस्य दृष्ट्याम् । The whole of 2nd line is clumsy in construction, the variant यत्संवाहययतः सुखं तु चरणौ is better which has unfortunately been overlooked in the text. भुक्तोज्झिते--(पित्रोः) भुक्ताद् उज्झिते (अवशिष्टे=मया भुक्ते) या धृतिर् (अनुभूयते, etc.) ।

पृष्ठ ६—

पंक्ति १४—'सेवा-सुश्रूषा' के स्थान पर 'सेवा-शुश्रूषा' पढ़ें ।

पृष्ठ १० : श्लोक ८—

न्याय्ये—न्यायाद् अनपेते, न्याय+यत् । *Cf.* धर्मादनपेतं धर्म्यम् । प्रकृतयः=राज्यव्यवस्थायास् ते-ते ऽधिकारिणः, प्रजाजना वा । दत्तो दत्तमनोरथाधिकफलः कल्पद्रुमो ऽर्थिने—*Cf.* for the original idea कथासरित्सागर, ६०. २६,२८—

अदरिद्रां यथा पृथ्वीमिमां द्रक्ष्ये तथा कुरु ।
भद्रं ते व्रज दत्तो ऽसि लोकायार्थार्थिने मया ॥
क्षणाच् चोत्पत्य स दिवं कल्पवृक्षस् तथा वसु ।
ववर्ष भुवि नैवासीत् को ऽप्यस्यां दुर्गतो यथा ॥

स्वशरीरतः प्रभृति—जन्मनः प्रभृति, अपि वा स्वशरीरमपि अपरित्यज्य यथा स्यात् तथा । *Cf.* Mahatma Gandhi's 'plighted word'. दूरीकृतम्=उपभुक्तम् exhausted, nothing left to spare, दूर+च्वि+√कृ+क्त । तद्यावन्मलयमेव गच्छावः—मलयम् उत वा मलयवतीम् ? यदुक्तं विश्वनाथेन—

"द्व्यर्थो वचन-वन्यासः सुश्लिष्टः काव्य-योजितः ।
प्रधानार्थान्तराक्षेपी पताकास्थानकं परम् ॥"

पृष्ठ १२—

सरस - घण - सिणिद्ध - चन्दण - वणच्छंग - परिमिलण-लग्ग-बहल - परिमलो, Good Lord, it ends! We can breathe now. But pity that Bhavabhuti should have imitated this Prakrit, and even

that thanklessly. But the beauty in the passage is the use of पताका-स्थानक just defined above.

श्लोक ९—

गण्ड-भित्ति = गण्ड-स्थल, *Cf.* मुखपट of *Meghaduta* (पूर्वमेघ *verse* 66 of our edition and चन्द्रिका thereon). आस्फालितः निरन्तरमाहतः, ताडितः ।

श्लोक १०—

'स्पन्दते दक्षिणं चक्षुः' *Cf.*—

स्पन्दान्मूर्ध्नि छत्रलाभं ललाटे पट्टमंशुकम् ।
इष्ट-प्राप्ति दृशोरूर्ध्वमपाङ्गे हानिमादिशेत् ।
वामभागस्तु नारीणां पुंसां श्रेष्ठस्तु दक्षिणः ॥

Cf. शाकुन्तले (१.१६)—

शान्तमिदमाश्रमपदं स्फुरति च बाहुः कुतः फलमिहास्य ।
अथवा भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र ॥

Again, after ५.११—

शकुन्तला—(निमित्तं सूचयित्वा) अम्महे, किं मे वामेदरं णअणं विप्फुरदि ?

पृष्ठ १४—

अनुद्विग्न-मार्ग-सुख-निषण्ण-श्वापदगणं तपोवनम् । *Cf.* शाकुन्तले १.१५—

एते चार्वाग् उपवनभुवि छिन्नदर्भाङ्कुरायाम् ।
नष्टाशंका हरिणशिशवो मन्दमन्दं चरन्ति ॥

श्लोक ११—त्रुटिता अत एव उज्झिताः, *Cf.* मनु २.६४—

मेखलामजिनं दण्डमुपवीतं कमण्डलुम् ।
अप्सु प्राप्य विनष्टानि गृहीतान्यानि मन्त्रवत् ॥

नित्याकर्णनया शुकेन च पदं साम्नामिदं पठ्यते—This is Sri Harsha's own observation, what even Kalidasa missed to see or imagine. The description in the verse is natural, *i.e.* स्वभावोक्ति—

स्वभावोक्तिः स्वभावस्य जात्यादिस्थस्य वर्णनम् ।
कुरंगैरुत्तरंगाक्षैः स्तब्धकर्णैर् उदीक्ष्यते ॥ (कुवलयानन्दे)

कुमारिका-आपूर्यमाण-बाल-वृक्षक-आलवालस्य प्रशान्त-रमणीयता तपोवनस्य—' The whole of the description of the आश्रम appears to have been inspired by Kalidasa's *Sakuntata*. The damsels (कुमारिकाs) who water the trees correspond to प्रियंवदा and

अनसूया, the inseparable companions of Sakuntala at the hermitage. All other girls in Sri Harsha's आश्रम are the maid-servants (चेटीs) of Malayavati.

श्लोक १२—

नतिमिवफलनम्रैः, *Cf.* "भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैः" (*Sak.* ५.१२) ।

अर्घ्यम्—

आपः क्षीरं कुशाग्रं च दधि सर्पिः सतण्डुलम् ।
यवाः सिद्धार्थकश्चैवाष्टाङ्गो ऽर्घः प्रकीर्तितः ॥

(See also our *Meghaduta*, चन्द्रिका on *v.* 4, *p.* 6)

मम ददत-इवार्घ्यम्—'भवेत्संभावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मनः' इत्युत्प्रेक्षा ।

For the idea of 'sylvan welcome by Nature' in addition to Kalidasa, *Cf. Uttararama*, ददतु तरवः पुष्पैरर्घ्यम्, etc. and *Naishadha*, "फलानि पुष्पाणि च पल्लवे करे...वने तदातिथ्यमशिक्षि शाखिभिः ।" (१. ७८).

पृष्ठ १६—

निर्वृतिः—*vs.* प्रवृत्तिः ? But no, he will get both a *wife* as well as *spiritual satisfaction* through self-sacrifice. Mark ध्वनि ! What a Bodhisattva and a Buddha in one !

श्लोक १३—

The verse contains some technical terms of music, *e.g.*—

स्थान—

यदूर्ध्वं हृदय - ग्रन्थेः कपालफलकादधः ।
प्राणसंचरणस्थानं 'स्थानम्' इत्यभिधीयते ॥
उरः कण्ठः शिरश्चेति तत्पुनः त्रिविधं मतम् ।

मन्द्र-तार-व्यवस्था—

हृदि मन्द्रो गले मध्यो मूर्ध्नि तार इति क्रमात् ।

गमक—

स्वरोत्थानप्रकारस् तु 'गमकः' परिकीर्तितः ।
स कम्पितादि भेदेन स्मृतः सप्तविधो बुधैः ॥

The same etymologically—

स्वश्रुतिस्थानसंभूतां छायां श्रुत्यन्तराश्रयाम् ।
स्वरो यद् गमयेद् गीते गमको ऽसौ निरूपितः ॥

विपञ्ची—

सप्ततन्त्री भवेच्चित्रा विपञ्ची नवतन्त्रिका ।
विपञ्ची कोण-वाद्या स्यात् चित्रा चांगुलिवादना ॥

But strange enough Sri Harsha, through the mouth of Jimutavahana, notes—

कोमलांगुलितलाभिहन्यमाना नातिस्फुटं क्वणन्ति तन्त्र्यः !

Mark the स्वभावोक्ति in the attentive deer in the 3rd and 4th lines of the verse and compare the still better उत्प्रेक्षा *cum* स्वभावोक्ति of Somadeva—

आकर्ण्यमान-संगीत-मञ्जु-वीणा-रवां मृगैः ।
दृष्ट-लोचन-लावण्य-लज्जितैरिव निश्चलैः ॥

'काकली'—तु कले सूक्ष्मे (इत्यमरः) । उपवीणयति—उप+वीणय Denom. stem (from वीणा) = वीणां कोणेनाभिहन्ति ।

पृष्ठ १६—

पंक्ति १८—*Read* देवदाग्रदणं *for* दवाग्रदणं ।

पृष्ठ १८—

वन्द्याः खलु देवताः = 'We should gratefully acknowledge (whatever) *gods* (*send* us) !'—Could it not mean this ?

श्लोक १४—

भगवति—भग has six meanings.—

"ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः ।
ज्ञान-विज्ञानयोश्चैव षण्णां भग इतीरणा ॥"

श्लोक १५—

Some more technical terms—

व्यञ्जनः—One of the four धातु in music—

विस्तारः करणश्चैवाविद्धो व्यञ्जनस्तथा ।
चत्वारो धातवो ज्ञेया वादित्रकरणाश्रयाः ॥

व्यञ्जनधातुः—

इति दशविधः प्रयोज्यो वीणायां व्यञ्जनो धातुः—
...... कल-तल-निष्कोटित-अन्यथोन्मृष्टम् ।
रेफ-अवमृष्ट-पुष्प-अनुस्वनितं बिन्दुर् अनुबन्धः ॥

लयः—Time

तालान्तरालवर्ती यः स कालो लय उच्यते ।
त्रिविधः स च विज्ञेयो द्रुतो मध्यो विलम्बितः ॥

यतिः—

ताल-च्छन्दो-ऽवगति-विषये वाद्यते यो विरामः ।
वाद्यैर् हीनः श्रवण-सुभगो नामतः सा यतिः स्यात् ।
समा स्रोतोवहा चैव गोपुच्छा चेति सा त्रिधा ॥

वाद्यविधिः—

त्रिविधं वैणववाद्यं कर्तव्यं गीत-संश्रयं तज्ज्ञैः ।
तत्त्वं तथानुगत-मोघश्चानेक-करण-संयुक्तम् ॥
स्थिते तत्त्वं प्रयोक्तव्यं मध्ये चानुगतं भवेत् ।
द्रुते चौघं प्रयुञ्जीयाद् एष वाद्यगतो विधिः ॥

(भरतनाट्यशास्त्र, अध्याय २६)

पृष्ठ २२ : श्लोक १६—

कृतार्थमभवच् चक्षुःसहस्रं हरेः, a fling at the gay nature of the heavan's (rake-hell !) gallant Indra, for which he was cursed to turn into a *Sahasra-bhaga*.

चिरस्य तावत् कालस्य = चिरात्, एतावत्कालानन्तरमद्य । अद्य जानामि स्वप्ने—I have experienced this in my dream what I cannot forget. The unforgotten dream alone is expressed in Sanskrit idiom by जानामि. ते पाणिग्रहणं निर्वर्तयिष्यति—तेरा ब्याह निबेड़ देवेगा ।

पृष्ठ २४—

अवसरः खलु अस्माकं देवी-दर्शनस्य—Here the word देवी hints at Malayavati and not Gauri. (ससाध्वसमुत्तिष्ठन्ती) हञ्जे को नु खल्वेषः ? But this does not depict even half the flurry of the girl. Somadeva's description is more effective.

तथानुरागविवशा भेजे कन्या विहस्तताम् ।
यथा सखीव वीणास्या व्याकुलालापतां ययौ ॥ ६०.४८ ॥

श्लोक १७—

संभ्रम-कारिणि=संभ्रमं सहसागन्तुकदर्शनजं त्रासं करोति या तथाभूते। खिद्यसे—*v. l.* खिद्यते।

पृष्ठ २८—

कुलपतिः—

मुनीनां दशसाहस्रं यो ऽन्नपानादिपोषणात्।
अध्यापयति विप्रर्षिरसौ कुलपतिः स्मृतः॥

सवनम्—'सवनं त्वध्वरे सोम-निर्दलने ऽपि च' (इति मेदिनी)।

श्लोक १८—

उष्णीषः—'उष्णीषस्तु शिरोवेष्टे किरीटे लक्षणान्तरे' (इति मेदिनी); परन्तु शिवरामः, उष्णीषबन्धस्थाने ललाटोपरि पट्टबन्धरेखा उष्णीषः कथ्यते। ऊर्णा—भ्रू-मध्यगावर्ते तन्तौ मेषादिलोमसु। The Chakravarti signs noticed here were actually all present on the person of Buddha and were witnessed by his contemporaries.

चिरात् खलु युक्तकारी विधिः स्यात्—The idea has been borrowed from Kalidasa—

परस्परेण स्पृहणीयशोभं न चेदिदं द्वन्द्वमयोजयिष्यत्।
अस्मिन् द्वये रूपविधानयत्नः पत्युः प्रजानां विफलो ऽभविष्यत्॥ (रघु० ७.१४)

पृष्ठ ३०—

ननु सर्वस्याभ्यागतो गुरुः—

गुरुरग्निर्द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः।
पतिरेको गुरुः स्त्रीणां सर्वस्याभ्यागतो गुरुः॥

श्लोक १९—

Cf. Sakuntala, 1.33—

गच्छति पुरः शरीरं धावति पश्चादसंस्तुतं चेतः।

श्लोक २०—

मन्थरं यानं यस्यास्तया।

पृष्ठ ३१—

पंक्ति १२—*Read* जीमूतवाहन को *for* जीमूतवाहन का।

पृष्ठ ३२—

धमधमायते—अग्निप्रज्वलनस्यानुकरणशब्दः।

श्लोक २१—

आपाण्डू = ईषत्पाण्डू । आयल्लक = 'स्यादायल्लकमाध्यानमुत्कण्ठोत्कलिका रतिः।' Longing intensified by constantly poring over the mental image of the beloved.

पृष्ठ ३३—

पंक्ति ३—*Read* कन्द-मूल- *for* कन्द-मल-।

द्वितीय अङ्क

कथासार—मलयवती काम-संतप्त है। वह अपने हृदय-ताप को शान्त करने के लिये चन्दनलतागृह में चन्द्रमणि-शिला पर विश्राम करने आई है। उसका मन विक्षिप्त है। उसके चरण विवश गौरी-मन्दिर की ओर ही पड़ते हैं। चेटी को सब भेद ज्ञात है। वह सचमुच 'चतुरिका' है।

उधर जीमूतवाहन को स्वप्न आया है कि उसकी प्रेयसी यहीं-कहीं चन्दनलता-गृह में उसके विलम्ब करने पर प्रणय-कुपिता बैठी रो रही है। प्रेयसी के स्वप्न-संगम की सुखद स्मृतियों से पूर्ण इसी स्थान पर वह विदूषक के साथ दिन बिताने आ जाता है। विरह-विधुरों की भाँति वह स्वप्न-प्रेयसी को चन्द्रमणि-शिला पर चित्रित करके अपने मन को परचाता है।

वियोगावस्थासु प्रिय-जन-सदृक्षानुभवनं
ततश्चित्रं कर्म स्वपन-समये दर्शनमपि।
तदङ्ग-स्पृष्टानाम् उपनतवतां स्पर्शनमपि
प्रतीकारः कामव्यथितमनसां कोऽपि कथितः॥

लताजाल की ओट से मलयवती और चतुरिका उन दोनोंका वार्तालाप सुन रही हैं। शब्द उन्हें अधूरे सुनाई देते हैं। 'एष सा (चन्द्रमणिशिला') के प्रथम दो शब्द सुनते ही मलयवती का मन स्त्रीसुलभ ईर्ष्या से सशङ्क हो उठता है। 'न जाने वह कौन होगी जिसे यह प्रेम करता है?'

महाराज विश्वावसु का संदेश लेकर उनका पुत्र मित्रावसु अपनी बहिन मलय-वती का वाग्दान करने के लिये जीमूतवाहन को ढूँढता हुआ वहीं आ पहुँचता है। किन्तु जीमूतवाहन कैसे अपनी स्वप्न-प्रेयसी से प्रणय-विमुख होकर कोई और प्रस्ताव स्वीकार कर सकता है?

अब मलयवती के लिये आत्महत्या के अतिरिक्त और गति ही क्या है? परन्तु छुपे-छुपे देख रही चेटी शोर मचा देती है। जीमूतवाहन तत्क्षण आकर उसे बचा लेता है। जीमूतवाहन को खेद है कि मैंने प्रस्ताव क्यों ठुकराया। और मलयवती किस चित्र-प्रेयसी से डाह कर रही थी?

इसी समय चेटी द्वारा जीमूतवाहन के माता-पिता की ओर से मलयवती को पुत्रवधू के रूप में स्वीकार करने की अनुमति आ जाती है।

पृष्ठ ३४—

पंक्ति १३—*Read* त्वरित- *for* त्वरित-।

पृष्ठ ३६—

आत्मम्भरित्वम्—आत्मानं बिभर्तीति अत्मम्भरिः, तस्य भावः। 'आत्मम्भरिः कुक्षिभरिः स्वोदरपूरके' (इत्यमरः)।

पृष्ठ ३८—

कुसुमायुध—अरविन्दमशोकं च चूतं च नवमालिका।
नीलोत्पलं च पञ्चैते पञ्चबाणस्य सायकाः॥

अबला इति कृत्वा प्रहरन् कथं न लज्जसे? अत्र प्रत्यनीकालंकारः—

प्रतिपक्षमशक्तेन प्रतिकर्तुं तिरस्क्रिया।
या तदीयस्य तत्स्तुत्यै प्रत्यनीकं तदुच्यते॥

Cf. रत्नावली—'भगवन् कुसुमायुध निर्जितसकलसुरासुरो भूत्वा कथं स्त्रीजनं प्रहरन् न लज्जसे?'

पृष्ठ ३९—

पंक्ति १०—*Read* तूने *for* तून।

पृष्ठ ४२—

पंक्ति ३—*Read* लच्छि अणु- *for* लच्छि अण-।

अकृत-प्रतिपत्तिम्—न कृता प्रतिपत्तिः संमानमतिथिसत्क्रिया वा यया ताम्। संभावयिष्यति—समझेगा, will take me for. Ordinarily संभवाना means 'honouring'.

पृष्ठ ४४ : श्लोक २—

तेनैव मय्याहते, पुष्पेषो! भवता मुधैव किमिति क्षिप्यन्त एते शराः—*Cf.* मरते को मारना बेदर्दी से, बहुत दूर है जवाँमर्दी से!

श्लोक ३—

विधुर—'वैकल्ये ऽपि च विश्लेषे विधुरं विकले त्रिषु' इति मेदिनी।

श्लोक ४—

स्त्रीहृदयेन—स्त्रिया हृदयमिव हृदयं यस्य तेन। केचित्तु—'स्त्रीगतं स्त्रियामासक्तं हृदयं यस्य तेन भार्यासक्तमनसा' इति।

पृष्ठ ४६—

हृदयं मे तुलयतु—यथा वणिक् किमपि वस्तु हस्त आधाय तद्भारं क्षणात् तुलाधृतमिव जानाति तथैव मे ऽन्तरवस्थां को ऽपि जानातु चेत्?

पृष्ठ ४८ : श्लोक ५—

निशाया मुखम् = 'प्रदोषो रजनीमुखम्' (इत्यमरः)।

पृष्ठ ५० : श्लोक ६—

घनः (घनं यथा स्यात्तथा वा) श्वसितानामुद्गमो यस्या सा। आकूतम्—प्रणयमानजनितः कोपालम्भरूपो ऽभिप्रायः।

पंक्ति १४—*Read* युज्यत *for* युज्जत। पंक्ति १७—तावच्छृणुवः *for* तावच्छणुवः

पृष्ठ ५२ : श्लोक ८—

अ-क्लिष्ट-बिम्ब-शोभाधरस्य—(शशिनः, मुखस्य च); (i) अक्लिष्टं केतुना ऽग्रसितं पूर्णं बिम्बं = मण्डलं, तस्य शोभां धारयतीति, तस्य शशिनः। (ii) अक्लिष्टम् अम्लानं परिपक्वं च यत् बिम्बफलं, तस्य शोभा इव शोभा यस्यास्तीति, सो ऽधरो यस्मिन् तस्य मुखस्य। रेखा—चित्र-रेखा, शशिलेखा च।

पृष्ठ ५४ : श्लोक ९—

Cf. भवभूति—

चिरं ध्यात्वा-ध्यात्वा निहितैव निर्माय पुरतः। (उत्तररामः)

पंक्ति ११—*Read* जीवित-निरपेक्ष *for* जीवित-निरपेक्षं—जीविते जीवितात् वा निर्गता ऽपेक्षा (आस्था) यस्य सः।

पंक्ति १३—*Read* मित्रावसुरिहैवा° *for* मित्रावसुरहैवि°।

योग्य ऽयं वरः—

कन्या वरयते रूपं माता वित्तं पिता श्रुतम्।
बान्धवाः कुलमिच्छन्ति (मिष्ठान्नमितरे जनाः)॥

अवस्थान्तरम्—अन्यावस्थाम्।

श्लोक १०—

रूपेण = रूपविषये, *Cf.* अक्ष्णा काणः *vide* वार्तिक—'प्रकृत्यादीनामुपसंख्यानं कर्तव्यम्' on Panini येनाङ्गविकारः।

पृष्ठ ५५—

पंक्ति २५—*Read* Jimutavahana *for* 2nd Mitravasu.

पंक्ति २७=*Read* Malayavati *for* Malayvati.

पृष्ठ ५७—

पंक्ति १—*Read* मैंने *for* मने।

पृष्ठ ५८—

प्रतिग्रहीतुम् = स्वीकर्तुम्।

पृष्ठ ६०—

निवेदितात्मनः—निवेदित आत्मा यैस्तान्। प्रत्याख्यानलघुः—प्रत्याख्यानेन लघूकृतः न्यक्कृतः।

भगवति गौरि इह त्वया न कृतः प्रसादः, etc. *Cf.* कथासरित्° ।

त्वद्भक्तया देवि संवृत्तो नास्मिन् जन्मनि चेन्मम ।
जीमूतवाहनो भर्ता तद् भूयात् सो ऽन्यजन्मनि ॥ ६०.७२॥

पंक्ति १७—*Read* °दारिका ऽऽज्ञापयति *for* °दारिका ऽज्ञापयति ।

पृष्ठ ६२—

As against चेटी's परित्रायध्वम् in नागानन्द, in कथासरित्° Malayavati complains—

हा नाथ विश्वविख्यातकरुणेनापि न त्वया ।
कथमस्मि परित्राता देव जीमूतवाहन ॥ ६०. ७४॥

पृष्ठ ६४—

प्रतीष्टा = प्रतिगृहीता, स्वीकृता ।

पृष्ठ ६६—

दुर्जनीकृता ऽस्मि—अदुर्जनो ऽहं दुर्जन इव कृता, इति दुर्जनीकृता ऽस्मि । अभूततद्भावे च्विः । अत्र तु दोषो ममैव यदहमेनमन्यसंक्रान्तहृदयम् आशाङ्कितवती, इति लज्जितास्मि । But the more appropriate meaning of this word appears to be "made a fool of". *Cf.* खलीकृतः, Act III, *p.* 78 *l.* 20.

गान्धर्वो विवाहः—One of the eight varieties of marriage—

इच्छया ऽन्योन्यसंयोगः कन्यायाश्च वरस्य च ।
गान्धर्वः स तु विज्ञेयो मैथुनः काम-संभवः ॥ मनु० २.१२॥

पृष्ठ ६८ : *श्लोक १३*—

पिष्टातकः = गुलाल, *Cf.*—'पिष्टातः पटवासकः' इत्यमरः and उत्सवेषु रजनीतण्डुलकुङ्कुमादीनां तत्र-तत्र उलूखलावहननेन चूर्णप्रसारणं क्रियते तत् पिष्टातकमुच्यते इति विमर्शिन्यां शिवरामः । सद्यःसिन्दूरेण दूरीकृता दिवस-समारम्भस्य सन्ध्यायाश्चातप-श्रीर् येन स सिद्धलोकः । चलत्सु चरणेषु ये रणन्तो नूपुरास्तेषां ह्लादेन रवेण हृद्यैः मनोज्ञैः । उद्वाहस्नानवेलां सिद्धलोको वैतालिक-मुखेन कथयति । उद्गीतैः—गान्धारग्रामेण उच्चैर्गीयमानैर् गीतैः—

षड्ज-मध्यम नामानौ ग्रामौ गायन्ति मानवाः ।
न तु गान्धारनामानं स लभ्यो देवयोनिभिः ॥

स्नापनकम्—स्नानोचितं साधनादि द्रव्यं वेला वा ।

श्लोक १४—

समागमः—Says Vatsyayana in his ***Kamasutra*** 3. 1. 18—

(i) यस्यां मनश्चक्षुषो प्रवृत्तिस् तस्यामृद्धिः, and at 3. 1. 1—

(ii) सवर्णायामनन्यपूर्वायां शास्त्रतो ऽधिगतायां धर्मो ऽर्थः पुत्राः संबन्धः पक्षवृद्धिरनुपस्कृता रतिश्च। *Cf*. Kalidasa मालविकाग्निमित्र, ३. १५—

अनातुरोत्कण्ठितयोः प्रसिध्यता समागमेनापि रतिर्न मां प्रति।
परस्परप्राप्तिनिराशयोर्वरं शरीरनाशो ऽपि समानुरागयोः॥

and Bhavabhuti मालतीमाधव—

इतरेतरानुरागो हि विवाहकर्मणि पराध्यं मङ्गलम्।

पृष्ठ ६६—

पंक्ति १४—सारी निकाल दो। पंक्ति १६—*Read* जीमूतवाहन *for* जीभूतवाहन।

तृतीय अङ्क

कथासार—मलयवती और जीमूतवाहन का विवाह संपन्न हो चुका है। उसी मङ्गल उत्सव के उपलक्ष्य में सिद्ध तथा विद्याधर आपानोत्सव की रंग-रलियाँ मना रहे हैं। कुसुमाकर उद्यान के एक ओर विट (शेखरक) अपने चेट के साथ मदिरा की मादकता में गिरता-पड़ता अपनी प्रेयसी नव-मालिका की खोज में है।

सामने से मधुकरों से अपनी जान बचाकर विदूषक स्त्रियों की भाँति शाल में लिपटा घूँघट निकाले आ रहा है। शेखरक उसे रूठकर जाती हुई नवमालिका समझकर आलिङ्गन करके उसे मनाता है। उसी समय पीछे से व्याज कोप में आँखें लाल किये नवमालिका आ जाती है। दोनों शेखरक तथा विदूषक उसके संमुख लज्जित हो जाते हैं। शेखरक से गलती में विदूषक के साथ यह समधियों का-सा उपहास हो गया था। वह नवमालिका और विदूषक को एक साथ बिठाकर उन दोनों से एक साथ क्षमा माँगना चाहता है। और फिर नवमालिका के होंठों से सुच्ची की हुई मदिरा से विदूषक का समधियों का-सा ही मान करता है।

* * *

इधर विवाहोपरान्त मलयवती और जीमूतवाहन कुसुमाकर उद्यान की शोभा देखने आते हैं। जीमूतवाहन के लिये उद्यान फीका है, क्योंकि नन्दनवन स्वयं मलयवती का सुन्दर मुख ही है। विदूषक (जो इसी समय नवदम्पती से आ मिलता है) की रोमाञ्च भावना जाग उठती है। चेटी—वह 'चतुरिका' भी तो है—जैसे जीमूतवाहन मलयवती का सौन्दर्य वर्णन करता है वैसे ही वह भी विदूषक का वर्णन (मुँह काला) करती है। विदूषक रुष्ट होकर चला जाता है। चेटी उसे मनाने के लिये चल देती है।

अब मलयवती और जीमूतवाहन के लिये एकान्त है। जीमूतवाहन प्रेयसी का

मुख चूमने के लिये लालायित हो उठता है कि उसी समय मित्रवसु मतङ्ग के आक्रमण का समाचार लेकर वहीं पहुँच जाता है।

पृष्ठ ७० : श्लोक १—

बलदेवः—श्रीकृष्ण जी का बड़ा भाई। यादव वंश मदिरा के चस्के के लिये बदनाम है। पहले बलराम को भी इसकी लत थी, परन्तु रेवती की आँखों को देखकर उसने मदिरा पीनी छोड़ दी और वह सरस्वती नदी के तट पर वानप्रस्थों का-सा जीवन व्यतीत करने लगा (देखो हमारा मेघदूत, पूर्वमेघ, श्लोक ५३, पृष्ठ ६०-६१)।

श्लोक २—

दत्तैस् तत्र निहितैर् उत्पलैर् वासिता।

पृष्ठ ७२—

कीदृशो नवमालिकया विना शेखरकः?—नवमालिका = १. मालती पुष्प, २. लता, ३. नववधू, ४. 'नवमालिका' चेटी; and शेखरक = १. सेहरा, २. वृक्ष, ३. दुलहा, ४. 'शेखरक' विट।

दुष्टमधुकराः = १. °भ्रमराः, २. °मद्यपाः।

सबहुमानं वर्णकैर्विलिप्तो ऽस्मि, but not yet by चेटी चतुरिका. Mark the ध्वनि for अस्माकमपि मध्ये दर्शनीयो जनो ऽस्त्येव, केवलं मत्सरेण कोपि न वर्णयति (पृष्ठ ९०)।

सन्तान-कुसुम-शेखरं च पिनद्धम्, mark ध्वनि! Probably the suggestion is सन्तान-कुसुम = नवमालिका and शेखर = शेखरक; in fact the whole passage from श्रुतं मया to दुष्टमधुकराः किं करिष्यन्तीति is a foreshadow of the events which Vidushaka will have to face shortly.

पृष्ठ ७३—

पंक्ति २—*Read* संपन्न *for* संप्पन्न। पंक्ति ३—*Read* °त्सव *for* °त्सब and विद्याधर *for* विद्याधार। नीचे से पंक्ति ३ *Read* loosely *for* lossely.

पृष्ठ ७४—

कण्ठे गृहीत्वा = Embracing and clasping round the neck.

नीचे से पंक्ति ६—*Read* °दारिकाया *for* °दाटिकाया।

पृष्ठ ७६ : श्लोक ३—

हरि-हर-पितामहानाम् = विष्णु-शिव-ब्रह्मणाम्।

मत्तपालक = मत्तबालक ? or मतवाला ? कपिलमर्कट—Because he

himself had said 'मलयवत्या बन्धुजनेन जामातुः प्रियवयस्य इति सबहुमानं वर्णकैर्विलिप्तो ऽस्मि' (पृष्ठ ७२)।

पंक्ति ११—*Read* द्वावप्येतौ *for* द्वाप्येता।

पृष्ठ ७८—

खलीकृतः = made a fool of; *Cf.* दुर्जनीकृता ऽस्मि (says मलयवती), Act II, *p.* 66. कृतः परिहासः = कृतं (अलं) परिहासेन। 'हुन छड्डो हासा'।

पृष्ठ ८०—

पंक्ति २—*Read* दिष्ट्या *for* दिष्टया।

पीत्वा चोक्षित्वा—च + उक्षित्वा सन्धिच्छेद करके कोई इसका अर्थ करते हैं 'पीकर और धोकर'। इस अर्थ में कोई रस और वैचित्र्य नहीं। हमने इसका अर्थ किया है 'पीकर और सुच्चा करके' अर्थात् अपने होंठों से लगाकर पवित्र करके। अन्यथा, आगे चलकर "एतन्नवमालिकामुखसंसर्गविवर्धितरसम्" कहने का कोई अर्थ ही नहीं रहता। अपरं च श्लोक ६ में "दयितापीतावशिष्ठानि मधूनि" पीने में जो स्वाद है वह प्याला धोकर पीने में नहीं। प्राकृत में चोक्खिअ (Skt. चोक्षित्वा) के स्थान पर चक्खिअ पाठ भी उपलब्ध है, जिसका अर्थ चखकर (Skt. आस्वाद्य) है। उस पाठ से पिविअ (Skt. पीत्वा) निरर्थक हो जाता है।

पृष्ठ ८२—

'मर्षयतु मर्षयतु, आर्यः' is more for his hurry to run to the drinking booth—'येनाहं नवमालिकया सहापानकं गमिष्यामि—than for यन्मया मदपरवशेनापराद्धम्। स्नास्यामि—Because says Manu (9. 54)

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः।
महान्ति पातकान्याहुः संसर्गश्चापि तैः सह॥

नीचे से पंक्ति ६—*Read* प्रियवयस्यो *for* प्रियवयस्या।

पृष्ठ ८४ : श्लोक ४—

दृष्टा दृष्टिमधो ददाति *Cf.* कुमारसम्भव ८. २—

व्याहृता प्रतिवचो न संदधे गन्तुमैच्छदवलम्बितांशुका।
सेवते स्म शयनं पराङ्मुखी सा तथापि रतये पिनाकिनः॥

also मालविकाग्निमित्र, ४. १५—

हस्तं कम्पवती रुणद्धि रशनाव्यापारलोलाङ्गुलिं
हस्तौ स्वौ नयति स्तनावरणतामालिङ्ग्यमाना बलात्।
पातुं पक्ष्मलचक्षुरुन्नमयतः साचीकरोत्याननं
व्याजेनाप्यभिलाषपूरणसुखं निर्वर्तयत्येव मे॥

And विश्वनाथ gives a graphic definition of such a मुग्धा नायिका—

दृष्ट्वा दर्शयति व्रीडां संमुखं नैव पश्यति ।
प्रच्छन्नं वा भ्रमन्तं वाऽतिक्रान्तं पश्यति प्रियम् ॥
बहुधा पृच्छ्यमानाऽपि मन्द-मन्दम् अधोमुखी
सगद्‌गदस्वरं किंचित् प्रियं प्रायेण भाषते ॥
अन्यैः प्रवर्तितां शश्वत् सावधाना च तत्कथां
शृणोत्यन्यत्रदत्ताक्षी प्रिये बालाऽनुरागिणी ॥

श्लोक ५—

दावानलदीप्तिभिश्चन्द्रातपैः etc. *Cf.* दुःष्यन्त's condition at *Sakuntala* ३. ३.—'विसृजति हिमगर्भैरग्निमिन्दुर्मयूखैः' ।

प्रतिपक्षवादिनी—प्रतिकूलवचनशीले । भूतार्थवादस्यापि स्तुतिपरत्वप्रतिपादनमेवात्र प्रतिपक्षवादित्वम् । Because Malayavati in her remark 'प्रियमपि भणितुं जानाति' implied flattery and not sincerity on the part of Jimutavahana. This was her प्रतिपक्ष as the चेटी says, for "सत्यमेवैतत्, किमत्र प्रियवचनम् ?"

स्वैरं-स्वैरम्—'मन्द-स्वच्छन्दयोः स्वैरम्' इत्यमरः ।

पृष्ठ ८६ : श्लोक ६—

With last line *Cf. Sakuntala, 1. 20,* "किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ?"

श्लोक ७—

कुट्टिमान्तान् = शिलामयान् भूतलान् pavements, or कुट्टिमो बद्धा भूमिः, तस्याः प्रान्तप्रदेशान् sides or borders of floors. धारागृहाणां = प्रपातानाम् । यन्त्रोन्मुक्तः—वारियन्त्रेभ्य उन्मुक्तः विसृष्टः पतित इत्यर्थः । आपाते = यन्त्रनिपतने य उत्पीडो वेगस्तेन हेलया सलीलं हृतेन कुसुमरजसा पिञ्जरो जलौघः ।

श्लोक ८—

प्रकटः प्रकटीकृतः पट-वासस्य व्यतिकरः संबन्धो येषां ते । अथवा, प्रकटः सुव्यक्तः पटवासस्य पिष्टातकस्य हरिद्राकुङ्कुमादिचूर्णस्य व्यतिकरः सम्बन्धः येषां ते । पटवासः = उत्सवेषु हरिद्राकुङ्कुमतण्डुलादिचूर्णकृतो वसनकेशपाशादिषु उद्‌धूलनविधिः ।

पंक्ति १८—*Read* सोत्थि *for* सोत्यि ।

पृष्ठ ८७—

नीचे से पंक्ति १३—Read *cools* for *looks.*

पृष्ठ ८८ : श्लोक ९—

दिग्धाङ्गाः—उपवर्णितशरीराः, लिप्ताङ्गाः । माणिक्यानामाभरणानि, तेषां प्रभाणां व्यतिकरैः संकरैर् व्यतिषङ्गैश् चित्रीकृतानि शबलीकृतानि अच्छानि निर्मलानि अंशुकानि वासांसि येषां ते। दयिताभिः पूर्वं पीतानि पश्चादवशिष्टानि (अर्थात् उक्षितानि. *See p. 80 above* चोक्षित्वा)।

पृष्ठ ८९—

पंक्ति ६—*Read* अपनी *for* अपन। पंक्ति १३—*Read* भाभी *for* भाभा।

पृष्ठ ९० : श्लोक *११*—

'व्यतिरेक'-अलंकार—

व्यतिरेको विशेषश्चेदुपमानोपमेययोः ।
शैला इवोन्नताः सन्तः किन्तु प्रकृतिकोमलाः ।।

पृष्ठ ९१—

नीचे से पंक्ति ६—*Read* then *for* t en.

पृष्ठ ९२—

पंक्ति ३—*Read* रसेन *for* रसे।

श्लोक *१२*—

कार्य-कारणयोर्भिन्नदेशत्वादत्र 'असंगतिर्' अलङ्कारः ।

दासीए धीदे—धीदा and धीता are Prakrit forms of दुहितर्; *Cf.* Panjabi धी।

पृष्ठ ९४ : श्लोक *१३*—

मधु मधुकरः किन्त्वेतस्मिन् पिबन्न विभाव्यते—Unless जीमूतवाहन himself becomes a मधुकर and, kissing her lips, makes the lotus-figure complete. भङ्ग्यन्तरेणाधररसपानाभिलाषनिवेदनात् 'पर्यायोक्तम्'। कमलसादृश्यबोधनाद् 'उपमा' च। 'अनुप्रासो' ऽपि व्यक्तं दृश्यते।

पृष्ठ ९६ : श्लोक *१५*—

कृतं सकलेषु वियत आकाशस्य मार्गेषु यानं यैस्तैर्विमानैः । उद्वृत्तस्य शत्रोः क्षयाद् भयेन = भीत्या हेतुना विनमद् राजकं = राज्ञां समूहः, तत्र तादृशं ते स्वराज्यम्। हमने क्षय का अर्थ 'शत्रु का उत्पात' लिया है और विनमत् का अर्थ '(शत्रु के) अधीन' लिया है। किन्तु टीकाकार क्षय का अर्थ 'शत्रु का विनाश' करते हैं और 'विनमत्' का 'विनम्रतया त्वदधीनतां स्वीकुर्वत्' करते हैं। पर हमारा अर्थ अधिक प्रुक्तिसंगत है। सिद्धम्—वशीकृतम् एव जानीहि। The '*no sooner than*

this' type of expression is called समुच्चयालंकार, as here :—

बहूनां युगपद्भावभाजां गुम्फः समुच्चयः।
नश्यन्ति पश्चात्पश्यन्ति त्रस्यन्ति च भवद्-द्विषः ॥ (कुवलयानन्द)

श्लोक १६—

रससेनावकृष्टो यो निस्त्रिंशस्तस्य दीधितय एव सटाः, तासां भरेण भासुरेण हरिणा-इव मया।

पृष्ठ ६८—

क्लेशान्—अविद्या,=अनित्यादिषु नित्यादिबुद्धिः, अस्मिता=अहंकारः, रागः, द्वेषः, अभिनिवेशः=आसक्तिः, इतीमान् योग-शास्त्र-प्रसिद्धान् पञ्च क्लेशान्। प्रत्यग्रेण कोपेनाक्षिप्तं चेतो यस्य सः।

श्लोक १८—

तपस्वी—शोच्यः ; 'मुनिशोच्यौ तपस्विनौ' इति विश्वः। निद्राया दलसंकोचस्य या मुद्रा अवस्था तस्या अवबन्धः गाढाश्लेषस्तस्य व्यतिकरं विकारं संबन्धं वा अपास्यन्=दूरीकुर्वन्। आशानां दिशां पूरस् तेजसा पूरणम् एकं कर्म तस्मिन् प्रवणैः रतैर् निज-करैः प्रीणितो ऽशेषो विश्वो येन सः। प्रसक्ताभिः उपस्थानसमये प्रस्तुताभिः, अविश्रान्ताभिर्वा स्तुतिभिर् मुखराणि मुखानि येषां तैः सिद्धैः। पद्मकोशात् पद्माख्य-निधेर् निद्रा दानं प्रत्यजागरूकता राजपुरुषाणामालस्यं वा मुद्रा राजचिह्नं च ताभ्याम् अवबन्धः प्रतिबन्धस्तस्य व्यतिकरं संबन्धम् अपास्यन् दूरीकुर्वन्, अर्थाद् याचकेभ्यः पद्म-निधेर्मुखमुद्घाटयन्।

सूर्ये उपकारिणो व्यवहार-समारोपत्वाद् अत्र 'समासोक्तिः'—

समासोक्तिः समैर्यत्र कार्य-लिङ्ग-विशेषणैः।
व्यवहारसमारोपः प्रस्तुते ऽन्यस्य वस्तुनः॥

The statement foreshadows Jimutavahana's impending self-sacrifice.

चतुर्थ अङ्क

कथासार—मित्रावसु तथा जीमूतवाहन मलयवती को घर पर छोड़कर समुद्र की वेला देखने निकले हुए हैं। समुद्र तट पर दूर कहीं अस्थि-शिखर दीख पड़ते हैं। मित्रावसु जीमूतवाहन को बतलाता है कि किस प्रकार गरुड़ प्रतिदिन एक नाग को यहाँ आकर अपना भोजन बनाता है। इन्हीं नागों के भुक्त-शेष अस्थि-पञ्जरों के ये ढेर हैं। जीमूतवाहन, गरुड़ तथा वासुकि, दोनोंकी हृदय-हीनता पर खिन्न हो उठता है। इतनेमें एक द्वारपाल किसी कार्यवश मित्रावसु को घर बुला ले जाता है।

एक करुण क्रन्दन वातावरण की शान्ति को भङ्ग कर देता है। आज शंखचूड़ की बलि चढ़ेगी। उसकी वृद्धा माता उसके साथ रोती-चीखती आ रही है। जीमूतवाहन आत्मोत्सर्ग से शंखचूड़ को गरुड़ से बचाने का प्रस्ताव करता है। परन्तु शंखचूड़ भी कुलाभिमानी है, वह इस प्रकार कुलकलंक बनकर जीना नहीं चाहता।

वध से पूर्व वह दक्षिण गोकर्ण को नमस्कार करने जाता है। इसी बीच में वैवाहिक लाल जोड़ा लेकर जीमूतवाहन को ढूँढ़ता-ढूँढ़ता कञ्चुकी वहीं आ पहुँचता है। जीमूतवाहन लाल जोड़ा लेकर कञ्चुकी को विदा कर देता है और स्वयं उसे पहनकर वध्यशिला पर चढ़ जाता है।

गरुड़ आकर उसे उठा ले जाता है।

पृष्ठ १००—

वस्त्रयुगलम्—लाल जोड़ा जो विवाह आदि मङ्गलोत्सवों पर उपहार-रूपेण भेंट किया जाता है।

श्लोक १—

अन्तःपुर-व्यवस्था=१. राजकीय अन्तःपुरों की व्यवस्था, २. राज्य की आन्तरिक अनुशासन की व्यवस्था। स्खलितानि=१. ठोकरें, २. अपराध। दण्ड-नीति=१. डण्डे का आश्रय लेना, २. अपराधी का दण्ड-विधान। अर्थश्लेषानुप्राणित 'उपमा' ऽलंकारः। *Cf. Sakuntala, 5. 3*—

आचार इत्यधिकृतेन मया गृहीतः
या वेत्रयष्ठिरवरोध-गृहेषु राज्ञः।
काले गते बहुतिथे मम सैव जाता
प्रस्थान-विक्लव-गतेर् अवलम्बनार्था॥

प्रतिपदुत्सवे—First night of the moon—and of the married couple.

पृष्ठ १०१—

नीचे से पंक्ति ४-६—*Read* 'something suitable for presenting to Malayavati and the son-in-law on the accasion of the new-moon festival tonight'.

पृष्ठ १०२ : श्लोक २—

पंक्ति ३—*Read* शुचिशिला and द्रुमाणामधः *for* शचिशिला and द्रमाणामधः।

शय्याशाद्वल.........*Cf.* भर्तृहरि, वैराग्यशतक—

मही रम्या शय्या विपुलमुपधानं भुजलता
वितानं चाकाशं व्यजनमनुकूलो ऽयमनिलः।

स्फुरद्दीपश्चन्द्रो विरतिवनितासङ्गमुदितः
सुखं शान्तः शेते मुनिरतनुभूतिर् नृप इव ॥

श्लोक ३—

उद्गर्जन्तः ये जल-कुञ्जरेन्द्रास्तेषां रभसेन ये आस्फलाः चीत्कारास्तैरनुबद्धो ऽत एवोद्धताः । प्रतिध्वानिनीः=प्रतिध्वनिपूर्णा °भुवः । प्रायः बाहुल्येन प्रेङ्खन्ति इतस्ततो भ्रममाणानि असंख्यानि शंखवलयानि यस्यां सा वेला ।

श्लोक ४—

कवलिता ग्रासीकृता ये लवङ्ग-पल्लवास् तेषां (करि-मकरैर् विसृष्टैर्) उद्गारैः सुरभि यत् पयस् तेन ।

प्रालेयाचलः = हिमालयः ।

पृष्ठ १०३—

पंक्ति ७—*Read* यों ही *for* यों ह ।

पृष्ठ १०४—

भुजङ्गमाननुदिनमाहारयति स्म—गरुड़ के नागभक्षण के मूल में कद्रु और विनता, कश्यप की दो पत्नियों का परस्पर ईर्ष्या-द्वेष संनिहित है । *See* बृहत्कथा-मञ्जरी, लम्बक ४—

कद्रूश्च विनता चेति कश्यपस्य प्रिये पुरा ।
बालधौ भास्कराश्वानां सितासित-विवादतः ॥
पणं दास्याय चक्राते प्रतिज्ञाकृतनिश्चये ।
कृष्णबालान् विधायाश्वान् कद्रूः पुत्रैभुजंगमैः ।
दास्यं विनाय विनतां व्याजाद् गरुडमातरम् ॥
तस्या निशम्य दास्यं तत् पीयूषाहरणावधिः ।
वैनतेयो वहन्नागान् मातुर्दास्यमवारयत् ॥
जवात् पीयूषमाहृत्य जित्वा शक्रं खगेश्वरः ।
प्रदाय काद्रवेयेभ्यो दासभावादमुच्यत ॥
धृतं पीयूषकलशं कुशेष्वभ्येत्य वासवः ।
जहार तत्क्षणार्द्रांश्च लिलिहुः पन्नगाः कुशान् ॥
तो द्विजिह्वतां प्राप्ताः खरदर्भावलेहनैः ।
विष्णोर्वरात् सुपर्णस्य भक्षतां पन्नगा ययुः ॥

पंक्ति १७—*Read* विहितव्यवस्थो *for* विहितव्यवस्था ।

पंक्ति २७—*Read* formerly *for* farmerly.

पृष्ठ १०५—

नीचे से पंक्ति २—Read *and they appear* for *and appear*.

पृष्ठ १०६—

अनवसाना = निरन्ता।

पंक्ति ११—*Read* उपसृत्य *for* उपसृप्य।

बहुप्रत्यवाये = बहुविघ्ने।

पृष्ठ १०८—

अदृष्टसूर्यसुकुमारम्—*Cf*. कथासरित्सागर, ६०. २२—

अथार्क-कर-संस्पर्शाद् अङ्गं दूयेत यत्तव।
कथं शक्ष्यति तत् सोढुं तार्क्ष्यभक्षणजां रुजम्॥

श्लोक ८—

क्रोडीकरोति—*Cf*. जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः (गीता) and also भागवत—

मृत्युर् जन्मवतां वीर देहेन सह जायते।
अद्य वा ऽब्दशतान्ते वा मृत्युर्वै प्राणिनां ध्रुवः॥

पृष्ठ ११०—

प्रसक्तः—Is in progress, is going on. इति...निष्ठुरं मन्त्र्यते —*i.e.* we are not to blame.

नीचे से पंक्ति २—*Read* then go *for* then I go.

पृष्ठ ११२—

हा मनोरथ शतलब्ध = हा दुःखशतसंप्राप्त (कथासरित् ६०.१२०)।

पृष्ठ ११२, ११४ : श्लोक ६ और ११—

In the original story Jimutavahana condemns both Vasuki and Garuda :—

शोच्यः स वासुकी राजा यः स्वहस्तेन विद्विषे।
उपहारीकरोति स्वाः प्रजाः क्लीबो दिने-दिने॥
धृतानन-सहस्रः सन्न् एकेनाप्याननेन सः।
मामादौ भुङ्क्ष्व तार्क्ष्येति भाषितुं नाशकत् कथम्॥
तार्क्ष्यो ऽपि काश्यपिर्वीरः कृष्णाधिष्ठानपावनः।
ईदृशं कुरुते पापम् अहो मोहस्य गाढता॥ (६०, १०७,१०८, ११०)

The whole atmosphere here is borrowed almost verbatim from सोमदेव.

पृष्ठ ११६ : श्लोक १२—

Cf.—अपि ग्रावारोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम् (उत्तरराम०)।

श्लोक १३—

महतो ऽहेर् मस्तिष्कस्य विभेदान् मुक्तं यद्रक्तं तस्य च्छटया चर्चितश् चण्ड-श्चञ्चुर्यस्य स गरुत्मान्। सोमस्य आकृतिरिव सौम्यस्वभावा आकृतिर्यस्य स एष साधुः। or, सोमवत् स्वभावः शीलम् आकृतिः रूपं च यस्य तादृशः। *Cf.* कथासरित्सागर, ६०.११३—

शङ्खचूडस्ततो ऽवादीन् नैष ताक्ष्र्यो ऽम्ब मा त्रसीः।
क्वायं चन्द्र इवाह्लादी क्व स ताक्ष्र्यो भयंकरः॥

अत्र विषमालंकारः—

'विरूपयोः संघटना या च तद् विषमं मतम्।'

Mark the difference of language in the first half (in which it is ओजस्विनी) and the second half (in which it is कोमला) of the verse on account of the difference in the nature of the persons described. This sudden change from vigorous to soft style (पतत्प्रकर्षता) is not considerd to be a fault. As Visvanatha remarks :—

"गर्भितत्वं गुणः क्वापि पतत्प्रकर्षता तथा।"

पृष्ठ ११८ : श्लोक १४—

विनतात्मज=गरुड।

श्लोक १५—

Correct the number of this verse from 14 to 15 in the text.

विश्वामित्रः श्वमांसम्— महाभारत में एक कथा आती है कि एक बार अकाल पड़ा। महर्षि विश्वामित्र को भूख ने इतना सताया कि रात को चाण्डाल के घर से कुत्ते का मांस चुराकर खाने लगे। रंगे हाथ पकड़े गए, तब उन्होंने आपद्धर्म की दुहाई दी—

जीवितात्ययमापन्नो यो ऽन्नमत्ति यतस्ततः।
आकाशमिव पङ्केन न स पापेन लिप्यते॥
क्षुधार्त्तश्चात्तुमभ्यागाद् विश्वामित्रः श्वजाघनीम्।
चाण्डालहस्तादादाय धर्माधर्मविचक्षणः॥ मनु० १०. १०४,१०८॥

Cf. ऋग्वेद ४.१८, which contains the original story of

गरुड (श्येन), his mother Aditi, Indra, madhu (=अमृत) and Vamadeva (=विश्वामित्र in आपद्धर्म ?), especially stanza 13—

अवर्त्या शुन आन्त्राणि पेचे न देवेषु विविदे मर्डितारम् ।
अपश्यं जायाममहीयमानामधा मे श्येनो मध्वा जभार ॥

नाडीजङ्घ—महाभारत अनुशासन पर्व—एक निर्धन ब्राह्मण गौतम रोटी कमाने घर से बाहर निकला। मार्ग में उसकी बकराज नाडीजङ्घ से भेंट हुई। दयालु नाडीजङ्घ ने उसे अपने मित्र विरूपाक्ष के पास भेज दिया। विरूपाक्ष ने उसे धन-संपत्ति से लाद दिया। परन्तु वापसी पर उसके पास खाने को अन्न आदि खाद्य पदार्थ कुछ न रहा। वह विवश अपने उपकारी नाडीजङ्घ को ही मारकर खा गया।

स्वार्थ तथा परार्थ वृत्ति की दृष्टि से भर्तृहरि ने मनुष्य जाति को चार वर्गों में विभक्त किया है—

एते सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थं परित्यज्य ये
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये ।
ते ऽमी मानवराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये
ये तु घ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे ॥ (नीतिशतकम्)

श्लोक १६—

जायन्ते च म्रियन्ते च......*Cf.* कथासरित्० ६०. १३६, १४०—

न त्वहं त्वच्छरीरेण रक्ष्यामि स्वशरीरकम् ।
रत्नव्ययेन पाषाणं को हि रक्षितुम् अर्हति ॥
मादृशैस्तु जगत्पूर्णं स्वात्ममात्रानुकम्पिभिः ।
अनुकम्प्यं जगद् येषां विरलास्ते भवादृशाः ॥

Cf. क्षेमेन्द्र (अवदानकल्पलता)—

भवन्ति नित्यं भवकानने ऽस्मिन् अस्मद्विधाः काशपलाशतुल्याः ।
भवद्विधस्यामृतसोदरस्य न पारिजातस्य पुनः प्रसूतिः ॥
(जीमूतवाहनावदान, १६)

पृष्ठ १२०—

शङ्खपालकुलम्—one of the eight नागकुलs—

अनन्तं वासुकिं शेषं पद्मनाभं च कम्बलम् ।
धृतराष्ट्रं शङ्खपालं तक्षकं कालियं तथा ॥

पंक्ति १२—*Read* वध्यचिह्नम् *for* वध्यचिह्नम् ।

पृष्ठ १२२ : श्लोक १८—

चञ्चद्भिश् चञ्चुभिः (पूर्वम्) उद्धृताः (पश्चाद्) ये ऽर्धच्युताः पिशित-लवाः,

तेषां ग्रासार्थं संवृद्धो गर्धो येषां तैर् गृध्रैः । आरब्धः पक्ष-द्वितयस्य विधुतयो यैस्तादृशैः । बद्धः सान्द्रो ऽन्धकारो यत्र तस्मिन् अस्त्र-स्रोतसि । शिखी = अग्निः । शिखिशिखाश्रेण्यः = अग्निज्वालापंक्तयः । शिवा रुवत्यो ऽग्निमुद्गिरन्तीति प्रसिद्धिः, अत एव ता उल्कामुखा इति व्यपदिश्यन्ते । But in our opinion the flames of fire do not issue from the mouths of jackals but from the firebrands which they pull out of the pyre in order to reach the burning corpse. अजस्रं स्रुता या बहला वसा तस्या वासेन विस्रे अस्रस्रोतसि । वास in the sense of 'bad smell' occurs in the compound 'मुखवास' = foul breath.

श्लोक १९—

बीभत्सो रसः ।

अहिना = १. नागरूपेण + आहारेण २. नागरूपेण हारेण । विनायके (१. वि-नायके = गरुडे, २. गणेशे) आहिता प्रीतिर्येन तत् । शशिनः (शेखरेन्दोः) रुचा धवलं (शिवस्य हस्ते धृतम्) अस्थिकपालम् (अस्थि-कपालम्, अस्थिक-पालम् = श्मशानम्) । श्मशानपक्षे —शशि-ज्योत्स्नेव धवलमस्थिक-पालम् । रौद्रम् = १. रुद्र-सम्बन्धि, २. भयानकम् । श्लेषानुप्राणिता पूर्णोपमा ।

श्लोक २०—

गतौ = योनौ । पश्चिमम् = अन्तिमम् । दक्षिणगोकर्ण — *See* भूमिका — 'बलिदान कथासरित्' *p. xx* (नाँगे कनफटे नाथ जोगी) 'गोकर्णाख्यं शिवक्षेत्रं सांनिध्यं यत्र धूर्जटेः' (भागवत) । *Cf.* Kalidasa—

अथ रोधसि दक्षिणोदधेः श्रितगोकर्णनिकेतमीश्वरम् ॥ (रघु° ८.३३)

पृष्ठ १२४—

चलितो मलयाचलशिखरस्य शिलासंचयो येन स नभस्वान्वायुः ।

पृष्ठ १२६ : श्लोक २२—

संकर्तकाभ्रैः—संवर्तकालीनैः प्रलयकालीनैर् अभ्रैर् मेघैः । पिदधति = अपि-दधति = आच्छादयन्ति । पक्षतिः = पक्षमूलम् । दिग्द्विपेन्द्रैः *Cf.*—

ऐरावतः पुण्डरीको वामनः कुमुदो ऽञ्जनः ।
पुष्पदन्तः सार्वभौमः सुप्रतीकश्च दिग्गजाः ॥

But दिङ्नाग more probably means a cyclone (*See our* मेघदूतम्, पूर्वमेघ *verse 14*, चन्द्रिका, *p.19*).

द्वादश आदित्यानां दीप्तिरिव दीप्तिर्यस्य स गरुत्मान् ।

श्लोक २४—

विस्रब्धम् = निःशङ्कं यथा स्यात्तथा।

पृष्ठ १२८ : श्लोक २५—

The Eagle (गरुड) seems to be connected with all that the Purana associates with the tides and ebbs of the ocean, for instance, the sunrise, the moonrise, the Nagas, and the clouds—all of which are said to spring from the ocean.

हिमांशुः = चन्द्रः। पूषा = सूर्यः। गरुडस्याग्रजः = अरुणः, सूर्य-सारथिः ('सूरसूतो ऽरुणो ऽनूरुः काश्यपिर्गरुडाग्रजः' इत्यमरः)। It depicts only a natural but daily phenomenon of the birds leaving their nests just after the day has dawned, so अरुण *i.e.* day-break is the अग्रज—harbinger of birds' chirping. प्रान्तेषु अवसज्जन्तो ये जलधर-पटलास्तैरतिमात्रम् आयतीभूतौ पक्षौ यस्य सः। वेलास्थितं महीध्रम् = वेलामहीध्रं मलयं प्राप्तो ऽस्मि।

श्लोक २७—

अशनेर्दण्डाद् अपि चण्डतरया चञ्च्वा। मत्तो यद् भयं तेन दीर्यमाणाद् हृदयात् प्रस्यन्दिना असृजा रक्तेन।

पृष्ठ १३० : श्लोक २८—

आमोदेन सुरभिणा आनन्दिता अलयो यया सा पुष्पवृष्टिः।

नीचे से पंक्ति १—Read '*raised up by my*' for '*raised up my*'. नीचे से पंक्ति ५—Read *sweet* for *sweei*.

पञ्चम अङ्क

कथासार—इधर जीमूतवाहन के वृद्ध माता-पिता और नवोढ़ा वधू मलयवती प्रतीक्षा में बैठे हैं। विश्वावसु के यहाँ से प्रतीहार जीमूतवाहन का समाचार लेने आता है, तो उनके मन आशंका से भर जाते हैं। इतने में आकाश से एक रक्तरञ्जित चूड़ामणि जीमूतकेतु के चरणों में आ गिरती है। सब के हृदय दहल जाते हैं। परन्तु संभव है यह किसी गरुड़ के भोजन-भूत नाग की चूडामणि हो ?

इसी आशंका के उत्तर रूप मानो शङ्खचूड सामने से रोता हुआ आता दिखाई देता है। जीमूत-परिवार नाना मानसिक घात-प्रतिघात में से होता हुआ जीमूतवाहन के आत्मबलिदान की कथा शङ्खचूड से सुन लेता है। रुधिर-पंक्ति का अनुसरण

करते हुए सभी अग्नि हाथ में उठाए गरुड़ की टोह में मलय शिखर की ओर बढ़ते हैं।

गरुड़ मृत्यु-मुख में भी क्षत-विक्षत जीमूतवाहन के धैर्य पर चकित है, मुग्ध है। वह पश्चात्ताप की अग्नि में झुलस रहा है। शङ्खचूड, जीमूतकेतु, आदि के पहुँचते ही जीमूतवाहन के प्राण-पँखेरू उड़ जाते हैं। माँ बिलखती हैं 'हाय, कोई मेरे पुत्र को अमृत से जिला सकता !' अमृत का नाम सुनकर गरुड़ की स्मृति जाग उठती है और वह समुद्र में से अमृत लाने के लिये उड़ जाता है।

मलयवती भगवती गौरी को उपालम्भ देती है कि तू ने अच्छा वर दिया ? गौरी तत्क्षण प्रकट होकर अपने कमण्डलु के जल से जीमूतवाहन को पुनरुज्जीवित कर देती है।

इसी समय आकाश से निर्मेघ वृष्टि होती है। नागलोक में पुनर्जीवन आ जाता है।

पृष्ठ १३२ : श्लोक १—

Read दृष्ट-बह्वपाय- *for* दृष्ट-बह्वापाय। बहवो ये अपायस्तैः प्रतिभयस्य भयावहस्य कान्तारस्य मध्यस्थे सति स्निग्धे।

उटजाङ्गणे=कुटिप्राङ्गणे।

श्लोक २—

भङ्गा विद्यन्ते ऽस्येति भङ्गवत्, ते भङ्गवती क्षौमे दुकूले। मलयवती= १. जीमूतवाहनस्य पत्नी, २. मलयाचल संबन्धिनी वेला च। अस्मत्प्राणयात्रार्थम्= अस्माकं प्राणयात्रोपयोगि-साधनाहरणाय।

पृष्ठ १३५—

पंक्ति ५—*Read* मुझे *for* मुझ। नीचे से पंक्ति १—*read* lord *for* ord.

पृष्ठ १३६—

सहस्रदीधितिः=सूर्यः। वामाक्षिस्फुरणेन पुत्रस्यानिष्टं संभाव्यते, किन्तु भुवनैकचक्षुषः स्फुरणेन तदुपशमनम्। यतः सूर्यदर्शनेनापशकुनदोषः प्रशाम्यतीति शास्त्रविदां वचनम् —

भूरिदुःखप्रदं नित्यं द्रुतमादित्य-दर्शनात्।
वामाङ्गस्फुरणोद्भूतं दुर्निमित्तं प्रशाम्यति॥

मा विक्लवो भूः—No augment in भूः, *vide* Panini 'न माङ् योगे'।

नीचे से पंक्ति ८—*Read* Jimutavahana *for* Jimutavaha.

नीचे से पंक्ति ६—Read *throbbing* for *thrnaobbing*.

पृष्ठ १३८—

सोपपत्तिकम्=युक्तियुक्तम् ।

श्लोक ८—

Read कीर्तिर् एका ।

पृष्ठ १४० : श्लोक ६—

उत्पीड-पृथ्वीम्=उत्पीडेन शोणितप्रवाहेण पृथ्वीं स्थूलां रक्तधाराम् । आपातेन पूर्वं शीर्णां पश्चात् प्रसृत-तनु-कणाम् । स्त्यान-रूपाम्=गाढ-प्रायाम् । मुषितोऽस्मि वञ्चितो ऽस्मि ।

आकृतिः—यौवनावस्था ।

पृष्ठ १४१—

पंक्ति ६—*Read* शिलाओं और घने वृक्षों ।

पृष्ठ १४२—

परहितव्यसनी=परेषां हिते व्यसनमासक्तिर् यस्य सः । व्यसन-शब्दाद् 'अत इनिठनौ' ।

पंक्ति ६—श्लोक का अङ्क १२ से १० कर लो । पंक्ति १४—*Read* देवी *for* देवि ।

पृष्ठ १४४—

पंक्ति ३—*Read* प्रत्युपकृतं *for* प्रत्यपकृतं ।

श्लोक १२—

But in the original story the crown (चूडामणि) falls at the feet of Malayavati. विनयक्रमः=विनयस्य वृत्तिः ।

श्लोक १३—

विदूरं विनतं यद् आननं तेन नम्रो मौलिर्यस्य तस्य तव । *Read* नम्र-मौलेः *for* न-म्रमौलेः । मासृण्यगुण-विदारणक्रिययोर्विरोधाद् अत्र 'विरोधाभासो' ऽलंकारः ।

पृष्ठ १४६—

आहिताग्निः—विधिवद् अग्निदेवतां साक्षीकृत्योपात्तो व्रत आश्रमो वा येन सः । साग्निकस्य हि दाहसंस्कारविधिर्मनुना प्रतिपादितः—

आहिताग्निर्यथान्यायं दग्धव्यस्त्रिभिरग्निभिः ।
अनाहिताग्निरेकेन लौकिकेनापरो जनः ॥

अग्निहोत्रशरणात्—यज्ञ-शालायाः । उत्सन्नम्=नष्टम् । विचित्राणिविधेर्विलसितानि—*Cf.* माघ—

हतविधिलसितानां को हि चित्रो विपाकः ! (शिशु° ११.६४)

पृष्ठ १४७—

नीचे से पंक्ति २—*Read* grace.

पृष्ठ १४८ : श्लोक १४—

द्रोणीरिव = अनेकशो घर्षणेन गर्तरचनया द्रोणी-तुल्याः, *Cf.* दोना, डूना। मज्जन्तो प्रविशन्तो ये वज्र इव कठोरा घोराश्च नखरास् तेषां प्रान्तैर् अवगाढा अन्तरित्य दृढं धृता ऽवनिर्येन स पन्नगरिपुः नागशत्रुः, गरुड़ः।

श्लोक १५—

Cf. कथासरित्सागर, ६०.१६४-१६५—

अहो ऽपूर्वः कोप्येष भक्ष्यमाणो ऽपि यो मया।
प्रहृष्यति महासत्त्वो न तु प्राणैर्वियुज्यते॥
बिभर्ति लुप्तशेषे च गात्रे रोमाञ्चकञ्चुकम्।
किं चोपकारिणीवास्य मयि दृष्टिः प्रसीदति॥

पृष्ठ १५० : श्लोक १६—

सिरामुखैः—नाडीनां धमनीनां वा कृतैर्मुखैः।

श्लोक १७—

अवर्जितम् = बलाद् गृहीतम्, विजितम्।

पृष्ठ १५२ : श्लोक १८—

तीव्रो यो विषाग्निस्तस्य धूमस्य पटलैर्व्याजिह्मो मन्दीकृतो रत्नत्विट् शिरोमणिज्योतिर् यासां ताः। दुःसहेन शोकेन शूत्कृता ये मरुतस्तैः स्फीताः आयताः फणाः। प्राग्भारदेशेषु = उन्नतदेशेषु। 'लोकालोकश् चक्रवालो लोकान्ताद्रिः पराचलः' इति वैजयन्ती। 'सप्तद्वीपवत्या भूमेः प्राकारभूतो गिरिर्लोकालोकः' इति महेश्वरः।

Whereas from Kalidasa's description of it in रघुवंश—'प्रकाशश्चाप्रकाशश्च लोकालोक इवाचलः' it would seem to be the mountain of sunrise and sunset, or the polar *aurora borealis* and *aurora australis*. But we think लोकालोक means simply लोकलोकान्तर.

पृष्ठ १५४—

पंक्ति १६—*Read* पितरौ *for* पितरा।

पृष्ठ १५५—

नीचे से पंक्ति २—*Read* these tears *for* hese ttears.

पृष्ठ १५६ : श्लोक २२—

त्रियाणां लोकानां समाहारस् त्रिलोकी तस्या ग्रसन-रसे चलद्भिः कालस्य जिह्वाग्र-तुल्यैर् ज्वालाभङ्गैः। कवलीकर्तुम् ग्रासीकर्तुम्। उत्पाते उत्पतनसमये य उद्भूतो वातप्रसरस्तेन (प्रलयवातेभ्यो ऽपि) पटुतरैर् अतिशयेन प्रचण्डैः पक्षवातैः। कल्पावसानस्य कल्पान्तस्य यत् ज्वलनम् अग्निस् तद्-इव भयकरे वाडवाग्नौ। गरुडेन पर्युपास्यमानः in ध्वनि of 'गुरुरेष यथा मम' Act. IV, *verse* 29.

नीचे से पंक्ति ५—Read *the* for *tho*.

पृष्ठ १५७—

पंक्ति ३—*Read* व्याकुल *for* श्याकुल।

पृष्ठ १५८—

विजृम्भितम्—फलम्, परिणामः, विवर्तः। *Cf*. पंजाबी, 'पवाडा' (प्रवारः ?)।

पृष्ठ १६०—

अतिदुष्करकारिणी—अत्यन्तं हृदयहीना कठोरहृदया वा।

पृष्ठ १६२ : श्लोक २५ —

दिशन्=inspiring. आत्तम्=आ+√दा+क्त=अर्जितम्। दुर्गाधस्य अगाधस्य अपारवारेः समुद्रस्येव ह्रदस्य सरसो ऽन्तः।

पृष्ठ १६४ : श्लोक २८—

°निभान्=°तुल्यान्। केशहस्तान्=केशपाशान्। समाधानम्=चित्तस्य एकाग्रता, मतिः, प्रतिज्ञा। दृढं समाधानं यस्य सः।

पृष्ठ १७० : श्लोक ३२—

Read पक्षोत्क्षिप्ताम्बुनाथ for पक्षोत्क्षिप्तान्बुनाथः।

But Garuda is Garuda after all ! नेत्रयोर् अर्चिर्भिर्यः प्लोषो दाहस् तस्य मूर्च्छया अतिशयेन विधुरा विकला विनिपतन्तः सानला द्वादशार्का येन सो ऽहम्।

पृष्ठ १७२—

भगवति गौरि, त्वया ऽऽज्ञप्तम्=Goddess Gauri, thou hadst blest me ! अमोघदर्शना=अविफल-दर्शना। अक्षतशरीरः=पूर्णशरीरः।

पृष्ठ १७४ : श्लोक ३५—

प्रणिपतितजनस्य=भक्तजनस्य आर्त्ति-हारिणि गौरि। शरण्या=शरणे साध्वि।

श्लोक ३७—

हंसानाम् अंसैः पक्षमूलैर् आहतं यद् हेमपङ्कजानां रजस् तस्य संपर्कपङ्काद्

उज्झितैर् मुक्तैः so issuing from the very heart of Gauri herself and accordingly superior to the sacred waters of मानसरोवर; but the expression मानसादपि परम् is grammatically unintelligible.

पृष्ठ १७५—

नीचे से पंक्ति ११, १२—Read *'licking the earth with avidity with the tips of their tongues to taste the Water of Life.'*

पृष्ठ १७६ : श्लोक ३८—

मलयवति-अपि श्यामो हरिः, but मलयवती is not a jewel (रत्न) of Jimutavahana's insignia of sovereignty as the commentators seem to think. They seem to depend on the following tradition :

भार्या पुरोहितश्चैव सेनानी रथकृच्च यः।
पत्त्यश्वौ कलभश्चेति प्राणिनः सप्त कीर्तिताः॥

अथवा, ललितविस्तरे ऽपि यथा—चक्ररत्नं हस्तिरत्नम् अश्व-रत्नं स्त्रीरत्नं मणिरत्नं गृहपतिरत्नं परिणायकरत्नम्—इति सप्तरत्नानि भवन्ति। किन्त्वत्र प्रथमतश्चत्वार्येव वर्णितानि।

श्लोक ४०—

हृष्टानां शिखण्डिनां मयूराणां ताण्डवं बिभ्रति ये ते ऽम्बुदाः। प्रतिरूढम् = जलसेकेन अतिशयेन अङ्कुरितं, सन्ततम् अविरलं व्याप्तं वा हरित्सस्यमेवोत्तरीयं यस्यास्तां क्षितिम्। घनं यथा स्यात्तथा=गाढस्नेहेन बद्धा बान्धवानां सुहृदां च गोष्ठ्यः प्रमोदाश्च याभिस्ताः प्रजाः।

Read मोदन्तां *for* मादन्तां in the fourth quarter.

पृष्ठ १७८ : श्लोक ४१—

दोषाः प्रयान्तु नाशम्—

कामः क्रोधो मदो मानः पैशुन्यं परिवादिता।
लोभाहङ्कारनैष्ठुर्यदम्भा दोषा दश स्मृताः॥

इति शम्

Sri Kanth Kaul,
Guptaganga, Nishat,
Kashmir.